Success Pana Chahte Hai . Com

महत्वपूर्ण परिभाषाएं
Important Definition

- **पूंजी पर्याप्तता अनुपात [Capital Adequacy Ratio - CAR, also known as Capital to Risk (Weighted) Assets Ratio - CRAR]**

वह न्यूनतम पूंजी जिसे एक बैंकिंग और गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्था को अपने पास रखना चाहिए, खासकर तब जब वह किसी व्यापारिक सम्पत्ति का सृजन करती हो, पूंजी पर्याप्तता कहलाती है, जबकि पूंजी पर्याप्तता अनुपात जोखिम भारित सम्पत्तियों के साथ पूंजी का अनुपात प्रदर्शित करता है।

- **टपकन सिद्धान्त (Trickle Down Theory)**

किसी देश में राष्ट्रीय आय की उच्च विकास दर का लाभ समाज के सबसे निचले पायदान पर बैठे लोगों तक पहुंचने का सिद्धान्त टपकन सिद्धान्त कहलाता है। इसमें प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि के साथ-साथ समाज में आय एवं धन के वितरण की असमानताओं में भी कमी करने का प्रयास किया जाता है।

- **अति इष्ट राष्ट्र (Most Favoured Nation)**

किसी देश द्वारा जब किसी अन्य देश के आयातों-निर्यातों, प्रशुल्कों आदि से संबंधित कुछ विशिष्ट सुविधाएं या रियायतें दी जाती हैं, तो ऐसी सुविधाएं प्राप्त करने वाला राष्ट्र 'अति इष्ट राष्ट्र' कहलाता है।

- **क्रान्तिक न्यूनतम प्रयत्न (Critical Minimum Effort)**

'क्रान्तिक न्यूनतम प्रयत्न' सिद्धान्त **प्रोफेसर हार्वे लीबन्स्टीन** ने प्रस्तुत किया था। उनके अनुसार अल्पविकसित देशों में दरिद्रता का दुश्चक्र पाया जाता है, जो उन्हें प्रति व्यक्ति निम्न आय संतुलन स्थिति के पास बनाए रखता है। इस दलदल से निकलने का मार्ग है, एक निश्चित 'क्रान्तिक न्यूनतम प्रयत्न' जो प्रतिव्यक्ति आय को उस स्तर तक बढ़ाए, जिस पर सतत् विकास कायम रह सके।

लीबन्स्टीन के अनुसार हर अर्थव्यवस्था 'झटकों' (Shocks) और 'प्रोत्साहनों' (Stimulants) के अधीन होती है। झटका मूलत: प्रतिव्यक्ति आय कम करने का प्रभाव उत्पन्न करता है, जबकि प्रोत्साहन उसे बढ़ाता है। कुछ देश इसलिए अल्पविकसित हैं कि उनमें प्रोत्साहनों का आकार छोटा रहा है और झटकों का आकार बड़ा। केवल उस समय क्रान्तिक न्यूनतम आएगा और अर्थव्यवस्था विकास के मार्ग पर आगे बढ़ेगी, जब आय कम करने वाले कारकों की अपेक्षा आय बढ़ाने वाले कारक अधिक प्रेरित हो जाएंगे।

- **वाणिज्यिक-पत्र (Commercial Paper)**

वाणिज्यिक-पत्र वित्तीय संस्थाओं द्वारा अपनी अल्पकालीन वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 'निर्गमित' किया जाने वाला असुरक्षित प्रतिज्ञा-पत्र।

- **सदंर्भित दर (Reference Rate)**

संदर्भित दर, पूंजी बाजार का निर्धारण करती है। यह दर न्यूनतम दर होती है, जिस पर पूंजी बाजार में उधार लिया या दिया जाता है। बाजार में प्रचलित ब्याज दर, जिस पर सामान्यतया समझौता होता है, संदर्भित दर से ऊँची होती है, इसके द्वारा ब्याज दर में होने वाला परिवर्तन निर्देशित होता है। विभिन्न देशों में भिन्न-भिन्न नामों में संदर्भित दरों को जाना जाता है। अमरीका में Feds Funds Rate, जर्मनी में फ्रेंकफर्ट इन्टर बैंक ऑफर्ड रेट (FIBRO), जापान में टोकियो इन्टर बैंक ऑफर्ड रेट (TIBOR), लन्दन में लन्दन इण्टर बैंक ऑफर्ड रेट (LIBOR), इत्यादि।

- **प्रमुख उधारी दर (Prime Landing Rate - PLR)**

प्रमुख उधारी दर (Prime Lending Rate - PLR) वह ब्याज दर होती है, जिस पर बैंक अपने सर्वप्रिय (विश्वसनीय) ग्राहक को ऋण देता है (विश्वनीय से तात्पर्य है, जिसमें जोखिम शून्य हो)। PLR एक प्रकार से आधार ब्याज दर (Base Rate) की भूमिका अदा करता है। इसी PLR आधार पर अन्य उद्यमियों को ऋण प्रदान किया जाता है। यह दर एक प्रकार से आधारिक ब्याज दर के रूप में कार्य करती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **स्विच ऑपरेशन (Switch Operation)**

खुले बाजार की क्रिया (Open Market Operation) का प्रयोग केवल साख नियंत्रण या मौद्रिक नीति (Monetary Policy) में न होकर, बल्कि सरकारी प्रतिभूतियों के क्रय-विक्रय द्वारा राजकोषीय नीति (Fiscal Policy) के रूप में किया जाता है। रिजर्व बैंक द्वारा प्रतिभूतियों (Security) को क्रय करना (सामान्यतया अल्प अवधि की) तथा दूसरी प्रतिभूतियों को उसके स्थान पर विक्रय (सामान्यतया दीर्घ अवधि की) करने की क्रिया, जिससे प्रतिभूतियों की परिपक्वता अवधि (Maturity Period) लम्बी हो सके, को ही हम स्विच ऑपरेशन कहते है।

- **वेबरीज वक्र (Webriz Curve)**

किसी अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी के स्तर (Level of Unemployment) तथा रोजगार उपलब्धता (Availability of Employment) के स्तर के बीच आरेखीय संबंध प्रदर्शित करने वाले वक्र को 'वेबरीज वक्र' कहते है। वस्तुतः दोनों में विलोम सम्बन्ध पाया जाता है।

- **ई-कॉमर्स (E-Commerse)**

सूचना प्रौद्योगिकी आज हर उद्यम का अभिन्न अंग बन चुकी है। ई-कॉमर्स व्यापार और वाणिज्य की ऑनलाइन लेन-देन की कुशल प्रक्रिया है। ई-कॉमर्स व्यापार आज विश्वभर में उभर रहा है। आज प्रगतिशील किसान, ग्रामीण और व्यवसायी ई-कॉमर्स के जरिए घर बैठे ही कुशलतापूर्वक व्यवसाय कर रहे है। भविष्य में ई-कॉमर्स के जरिए घर बैठे ही कुशलतापूर्वक व्यवसाय कर रहे हैं। भविष्य में ई-कॉमर्स के बहुत ही फलने-फूलने की सम्भावनाएं हैं।

- **समावेशित विकास (Inclusive Growth)**

ऐसा विकास समावेशित विकास कहलाता है, जिसमें आर्थिक विकास की उच्च दर से जनित राष्ट्रीय आय के वितरण में समाज के सबसे कमजोर वर्ग के लोगों को उचित हिस्सा मिले, अर्थात् - राष्ट्रीय आय का रिसाव प्रभाव नीचे की ओर अधिक हो।

- **लियोन्तीफ विरोधाभास (Leontief Paradox)**

विकसित देशों द्वारा पूंजी प्रधान वस्तुओं का आयात करना तथा श्रम प्रधान वस्तुओं का निर्यात करना एवं श्रम प्रधान देशों द्वारा श्रम प्रधान वस्तुओं का आयात करना व पूंजी प्रधान वस्तुओं का निर्यात करना लियोन्तीफ विरोधाभास कहलाता है।

- **सूक्ष्म साख (Micro Finance)**

ग्रामीण निर्धनों, विशेष रूप से महिलाओं, को बिना किसी गारन्टी के आय सृजनकारी गतिविधियों के संचालनार्थ साख सुविधा उपलब्ध कराना सूक्ष्म साख कहलाता है। निर्धनता निवारण एवं विकास के लाभों से वंचित रहे लोगों, विशेष रूप से महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में सूक्ष्म साख एक उपयोगी यंत्र के रूप में सामने आई है। इसकी कार्य प्रणाली पारम्परिक बैंक साख से भिन्न है। इसके अन्तर्गत स्वयं सहायता समूह के रूप में संगठित निर्धन व्यक्तियों को साख सुविधा मुहैया कराई जाती है। इसलिए यह प्रणाली उन लोगों को आर्थिक क्षेत्र की मुख्य धारा से जोड़ती है, जो साधनहीन हैं तथा सैकड़ों वर्षो से निर्धनता कुपोषण-अशिक्षा-बेरोजगारी के मकड़जाल में फंसे हैं। इसके अन्तर्गत लाभार्थियों को छोटी-छोटी बचत (Saving) करने के लिए भी प्रेरित किया जाता है, ताकि वे अन्ततः स्वावलम्बी बन सके।

- **गैर-निष्पादनीय परिसम्पत्तियां (Non-performing Assets)**

गैर-निष्पादिनीय परिसम्पत्तियां बैंकों एव वित्तीय संस्थानों द्वारा वितरित वे ऋण हैं, जिनके मूलधन एवं उस पर देय ब्याज की वापसी समय से नहीं हो पाती या बिल्कुल नहीं हो पाती। सामान्यतः बैंकों द्वारा वितरित ऐसे सभी ऋण और उस पर देय ब्याज गैर-निष्पादनीय परिसम्पत्ति के रूप में पहचाने जाते हैं, जिनमें किसी वित्तीय वर्ष में मूलधन का भुगतान 90 दिन तथा ब्याज का भुगतान 180 दिन से अधिक दिनों तक रोक लिया जाता है।

- **बुद्धिमान पूंजी उत्पाद अनुपात (Incremental Capital Output Ratio - ICOR)**

अर्थव्यवस्था में उत्पादन की एक अतिरिक्त इकाई प्राप्त करने के लिए पूंजी की जितनी अतिरिक्त इकाइयों की आवश्यकता होती है, उसे वृद्धिमान पूंजी-निर्गत अनुपात अथवा वृद्धिमान पूंजी उत्पाद अनुपात (ICOR) कहा जाता है। ICOR का अधिक होना यह बताता है कि उत्पादन की एक अतिरिक्त इकाई की प्राप्ति के लिए ज्यादा पूंजी की आवश्यकता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- **एम्बार्गो (Embargo)**

एम्बार्गो से तात्पर्य व्यापार प्रतिषेध से है, जिसके अन्तर्गत कोई राष्ट्र या कुछ राष्ट्र मिलकर किसी विशेष राष्ट्र के साथ अपना सम्पूर्ण व्यापार अथवा वस्तु विशेष का व्यापार बन्द कर देते हैं। एम्बार्गो को घाट बन्दी के रूप में भी प्रयोग किया जाता है, जिसके अन्तर्गत कोई एक राष्ट्र अथवा एक से अधिक राष्ट्र मिलकर किसी राष्ट्र के जहाजों के बढ़ने पर रोक लगा देते हैं। ऐसी स्थिति में उन जहाजों को किसी बन्दरगाह पर रोक दिया जाता है या किसी विशेष बन्दरगाह पर पहुंचने नहीं दिया जाता है।

- **हवाला (Hawala)**

हवाला, व्यापार अधिकृत विदेशी विनिमय चैनलों को बाईपास करने वाली एक प्रणाली है। इस व्यापार में लगे लोग भुगतान घरेलू मुद्रा (Documestic Currency) में प्राप्त करते हैं तथा इसके बदले विदेशों में विदेशी मुद्रा (डॉलर) की आपूर्ति कर देते हैं। यह व्यापार एक प्रमुख संचालक के नियंत्रण में कार्यरत् एजेन्टों के माध्यम से परिचालित होता रहता है। हवाला व्यापार की विनिमय दरें देश के विभिन्न केन्द्रों में प्राय: अलग-अलग होती है। कुछ आयातक एवं निर्यातक भी हवाला व्यापार के माध्यम से लेन-देन में रूचि रखते हैं।

- **अनुषंगी हितलाभ (Fringe Benefits)**

निर्धारित मौद्रिक वेतन के अतिरिक्त नियोक्ताओं द्वारा अपने कर्मचारियों को जो अतिरिक्त सुविधाएं उपलब्ध कराई जाती है, उन्हें अनुषंगी हितलाभ कहते है।

- **मूर्त सम्पत्तियां (Tangible Assets)**

मूर्त सम्पत्तियां ऐसी सम्पत्तियां होती हैं, जिन्हें देखा, छुआ तथा अनुभव किया जा सकता है, जैसे - भूमि, भवन, मशीनरी, माल, फर्नीचर, मोटरगाड़ियां आदि।

- **आमूर्त सम्पत्तियां (Intangible Assets)**

इन सम्पत्तियों का भौतिक अस्तित्व नहीं होता, अर्थात् - इनका आन्तरिक मूल्य कुछ नहीं होता, किन्तु इनका मूल्य स्वामित्व एवं कब्जे (Ownership and Possession) के द्वारा प्रदत्त अधिकारों से प्राप्त किया जाता है, जैसे - ख्याति, पेटेन्ट, व्यापारिक चिह्न, कॉपीराइट आदि।

- **गिल्ट एज बाजार (Gilt Edge Market)**

इसके अन्तर्गत क्रय-विक्रय की जाने वाली प्रतिभूतियों का मूल्य स्थिर रहता है। भारतीय गिल्ट एज बाजार में प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय RBI के माध्यम से किया जाता है। इसे 'सरकारी प्रतिभूति बाजार' भी कहते है, क्योंकि बाजार में क्रय-विक्रय की जाने वाली प्रतिभूतियों सरकारी तथा अर्द्ध-सरकारी दोनों होती है।

- **ब्लूचिप कम्पनियां (Bluechip Companies)**

वे कम्पनियां, जो अपने क्षेत्र में काफी समय से काम कर रही हैं तथा अपने क्षेत्र की शीर्ष तीन कम्पनियों में शामिल हों, ब्लूचिप कम्पनियां कहलाती हैं। इन कम्पनियों में निवेश करना अधिक सुरक्षित रहता है तथा अगर इन कम्पनियों में लॉग टर्म निवेश किया जाए, तो पैसा डूबने की सम्भावना कम रहती है।

- **क्रेता बाजार (Buyer's Market)**

जब किसी वस्तु की मांग कम तथा पूर्ति अधिक होती है, तो विक्रेता की तुलना में क्रेता बेहतर स्थिति में होता है। ऐसे बाजार को 'क्रेता बाजार' कहते है।

- **विक्रेता बाजार (Sellers Market)**

जब मांग अधिक होती है और पूर्ति कम, तब व्यापारी कमी का लाभ उठाकर वस्तुओं को मनमानी कीमतों पर बेचते हैं, ऐसे बाजार को 'विक्रेता बाजार' कहते है।

- **हीनार्थ प्रबन्धन (Deficit Financing)**

जब सरकार का बजट घाटे का होता है, अर्थात् - आय कम होती और व्यय अधिक होता है, तो व्यय के इस आधिक्य को केन्द्रीय बैंक से ऋण लेकर या अतिरिक्त पत्र मुद्रा निर्गमित कर पूरा किया जाता है, यह व्यवस्था 'घाटे की वित्त व्यवस्था' अथवा 'हीनार्थ प्रबंधन' कहलाती है। सीमित मात्रा में ही इसे उचित माना जाता है। हीनार्थ प्रबंधन को स्थायी नीति बना लेने के परिणाम अच्छे नहीं होते।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **हार्ड करेन्सी (Hard Currency)**

अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में जिस मुद्रा की पूर्ति की तुलना में मांग लगातार अधिक होती है, वह हार्ड करेन्सी कहलाती है। प्राय: विकसित देशों की मुद्रा हार्ड करेन्सी कही जाती है।

- **सॉफ्ट करेन्सी (Soft Currency)**

जब अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में किसी मुद्रा की मांग की तुलना में पूर्ति अधिक होती है, तो ऐसी मुद्रा 'सॉफ्ट करेन्सी' कहलाती है।

- **हॉट मनी (Hot Money)**

उस विदेशी मुद्रा को हॉट मनी कहते हैं, जिसमें शीघ्र पलायन कर जाने की प्रवृत्ति होती है। जिस स्थान पर अधिक लाभ मिलने की सम्भावना होती है, वहीं यह स्थानान्तरित हो जाती है।

- **सेमी बोम्बला (Semi Bombla)**

किसी देश के अर्थशास्त्रियों द्वारा तैयार किया गया प्रपत्र (Advice Paper), जिसके द्वारा काला धन, मुद्रा प्रसार, कीमत वृद्धि आदि की समस्याओं को सुलझाने के लिए सुझाव देते हैं, 'सेमी बोम्बला' कहलाता है।

- **प्रशुल्क (Tariff)**

किसी देश द्वारा आयातों पर लगाए गए कर को ही प्राय: 'टैरिफ' कहा जाता है।

- **ग्रेशम का नियम (Gresham's Law)**

ग्रेशम के अनुसार यदि किसी समय अर्थव्यवस्था में अच्छी व बुरी मुद्रा एक साथ प्रचलन में हो, तो बुरी मुद्रा अच्छी मुद्रा को प्रचलन से बाहर कर देती है। इसे ही ग्रेशम के नियम के रूप में जाना जाता है।

- **आर्बिट्रेज (Arbitrage)**

इस शब्द का प्रयोग सामान्यत: विदेशी विनिमय के सन्दर्भ में किया जाता है। स्वतंत्र विदेशी मुद्रा बाजारों में यदि किसी स्थान पर कोई मुद्रा कम मूल्य पर खरीदी जाए तथा तुरन्त ही अन्यत्र किसी स्थान पर ऊँचे मूल्य पर बेच दी जाए तो इस क्रिया को 'आर्बिट्रेज' कहा जाता है।

- **सूक्ष्म साख (Micro Credit)**

माइक्रो क्रेडिट या माइक्रो फाइनेंस या सूक्ष्म वित्त छोटी-सी कर्ज राशि होती है, जो काफी गरीब लोगों को दी जाती है, ताकि वे अपनी जीविका चलाने के लिए छोटा-मोटा काम शुरू कर सके। सामान्य रूप से इनमें वे लोग शामिल होते हैं, जिनके पास बैंकों से ऋण पाने के बदले गिरवी रखने के लिए कुछ भी नहीं होता। वर्ष 2006 का नोबेल शान्ति पुरस्कार बांग्लादेश में माइक्रो क्रेडिट को बढ़ावा देने वाले मुहम्मद यूनुस और उनके ग्रामीण बैंक को प्रदान किया गया है।

- **एंजिल का नियम (Engel's Law)**

इस नियम के अनुसार कम आय वाले उपभोक्ता अपनी आय का अधिक भाग भोजन आदि पर व्यय करते है। आय में जैसे-जैसे वृद्धि होती है, कुल आय का कम भाग भोजन पर व्यय होता है।

- **गिफिन वस्तुएं (Giffin Goods)**

गिफिन वस्तुएं कुछ घटिया किस्म की ऐसी वस्तुएं होती हैं, जिन पर उपभोक्ता अपनी आय का बड़ा भाग व्यय करता है। इन वस्तुओं पर मांग का नियम लागू नहीं होता, बल्कि मूल्य में वृद्धि से इनकी मांग बढ़ जाती है तथा मूल्य में कमी से मांग भी कम हो जाती है। इस विरोधाभास को गिफिन का विरोधाभास (Giffin's Paradox) कहा जाता है।

- **कराघात (Impact of Tax)**

सरकार द्वारा लगाए गए कर का मौद्रिक भार, जिस व्यक्ति पर सबसे पहले पड़ता है, अर्थात् - सरकार जिससे कर वसूल करती है, उस पर कराघात होता है। यदि वह व्यक्ति कर के मौद्रिक भार को किसी अन्य व्यक्ति पर टालने में सफल हो जाता है, तो कराघात तो प्रथम व्यक्ति पर ही रहता है, किन्तु करापात (Incidence) उस व्यक्ति पर रहता है, जो अन्तिम रूप से कर के मौद्रिक भार को वहन करता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- **करापात (Incidence of Tax)**

यह आवश्यक नहीं कि सरकार द्वारा कोई कर जिस व्यक्ति पर लगाया गया है, वहीं कर के भार को अन्तिम रूप से वहन करे। यदि प्रथम करदाता कर की धनराशि को किसी अन्य व्यक्ति पर टालने में सफल हो जाता है, तो करापात उस व्यक्ति पर माना जाता है, जो कर के भार को अन्तिम रूप से वहन करता है, जैसे – उत्पादन शुल्क सरकार द्वारा उत्पादक से वसूल किया जाता है, किन्तु उत्पादक कर की राशि को वस्तु के मूल्य में शामिल कर देता है, जिससे करापात उपभोक्ता पर आता है।

- **अल्पाधिकार (Oligopoly)**

यदि किसी वस्तु के बाजार में विक्रेताओं की संख्या बहुत कम (किन्तु दो से अधिक) होती है, जिनके मध्य आपस में कोई समझौता सम्भव हो सकता हो, तो ऐसा बाजार अल्पाधिकार कहलाता है। इस प्रकार के बाजार में वस्तु एक-सी तथा उनमें विभेद भी हो सकता है। जब केवल दो विक्रेता हो, तो उसे द्वयाधिकार (Duopoly) कहते हैं।

- **क्रेताधिकार (Monoposony)**

बाजार की ऐसी स्थिति, जिसमें किसी वस्तु का अकेला क्रेता होता है। इस धारणा का प्रतिपादन जोन राबिन्सन ने किया था।

- **व्यष्टि (Micro) तथा समष्टि अर्थशास्त्र (Macro Economics)**

आर्थिक विश्लेषण का वह भाग, जो व्यक्तिगत इकाइयों, जैसे – फर्म, उपभोक्ता, श्रम इकाई आदि से सम्बन्धित हो, उसे व्यष्टि आर्थिक विश्लेषण या व्यष्टि अर्थशास्त्र कहते हैं। किन्तु जब विश्लेषण का सम्बन्ध इन व्यष्टि इकाइयों के सामूहिक रूप या समग्र से सम्बन्धित हो, जैसे – राष्ट्रीय आय, बेरोजगारी, मुद्रास्फीति का अध्ययन तो इसे समष्टि विश्लेषण कहते हैं। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग रेगनर फ्रिश (Ragnar Frisch) ने किया था।

- **अर्थमिति (Econmerties)**

अर्थशास्त्र की वह शाखा, जो परिमाणात्मक आर्थिक सम्बन्धों की माप तथा अनुमान के लिए सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग करती है, अर्थमिति कहलाती है।

- **अग्रणी बैंक अथवा लीड बैंक योजना (Lead Bank Scheme)**

यह योजना जिलों की अर्थव्यवस्था सुधारने के लिए 1969 में प्रारम्भ की गई थी। इसके अन्तर्गत प्रत्येक जिले के लिए एक बैंक को लीड़ बैंक घोषित कर दिया जाता है। जिस बैंक को लीड़ बैंक घोषित किया जाता है, वह जिला स्तर पर ऋणों की योजना बनाने, विशिष्ट कार्यक्रमों में अन्य बैंकों का सहयोग लेने तथा निश्चित कार्यक्रमों के लिए ऋण जुटाने में सभी वित्तीय संस्थाओं में समन्वय कायम करने का प्रयास करता है।

- **विनिमय पत्र अथवा विनिमय हुण्डी (Bill of Exchange)**

यह एक ऐसा लिखित विपत्र है, जिसमें उसका लेखक अपने हस्ताक्षर कर किसी व्यक्ति को यह शर्तरहित आज्ञा देता है कि वह एक निश्चित धनराशि किसी व्यक्ति बिशेष या उसके आदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को या उस विपत्र के वाहक को भुगतान कर दे। विनिमय हुण्डी केबल मुद्रा के रूप में लिखी जाती है, अर्थात् – इसका भुगतान केवल मुद्रा के रूप में ही होता है, किसी वस्तु, जैसे – कपड़ा, अनाज, सोना, चांदी आदि के रूप में नहीं।

- **म्युचुअल फण्ड (Mutual Fund)**

म्युचुअल फण्ड के अन्तर्गत जन-साधारण के निवेश योग्य धन को ऐच्छिक आधार पर एकत्रित करके विनियोग के बेहतर अवसरों में प्रयोग किया जाता है। इसकी स्थापना प्राय: निवेश संबंधी निर्णय लेने वाली दक्ष वित्तीय संस्थाओं द्वारा की जाती है। भारत में यूनिट ट्रस्ट ऑफ इण्डिया, स्टेट बैंक, केनरा बैंक, बैंक ऑफ इण्डिया, इण्डियन बैंक तथा जीवन बीमा निगम आदि ने इस प्रकार के म्युचुअल फण्ड स्थापित किए है। UTI स्टॉक एक्सचेंज में शामिल होने वाला देश का पहला म्युचुअल फण्ड बनेगा।

- **प्रतिभूति (Security)**

प्रतिभूति एक व्यापक शब्द है। एक अर्थ में प्रतिभूति शब्द का प्रयोग प्र-पत्रों के रूप में वित्तीय परिसम्पत्तियों यथा शेयर, डिबेन्चर व अनय ऋणपत्रों आदि के लिए किया जाता है। बैंकिंग में ऋणों की जमानत के सन्दर्भ में भी 'प्रतिभूति' काफी प्रयुक्त होता है, जहां प्रतिभूति से अभिप्राय उस बीमित हित से होता है, जो ऋण के भुगतान न होने की स्थिति में उत्पन्न होता है, जो ऋण के भुगतान न होने

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

की स्थिति में उत्पन्न होता है, अर्थात् – प्रतिभूति ऋण का बीमा होती है। बैंकों द्वारा ऋणी को व्यक्तिगत अथवा दृश्य प्रतिभूति पर ऋण प्रदान किया जाता है।

- **कर, उपकर तथा अधिभार (Tax, Cess and Surcharge)**

कर, उपकर तथा अधिभार कर की श्रेणी में आते हैं, किन्तु उपकर तथा अधिभार कर से भिन्न हैं। किसी उद्देश्य विशेष की पूर्ति के लिए कर नहीं लगाया जाता, जबकि उपकर तथा अधिभार दोनों ही किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए राजस्व की उगाही के लिए लगाए जाते है। उपकर कर के साथ कर आधार पर ही किसी विशेष प्रयोजन के लिए लगाया गया कर है, जबकि अधिभार कर के ऊपर कर है, जिसकी गणना कर दायित्व पर की जाती है। सामान्यत: अधिभार प्रत्यक्ष कर पर लगाया जाता है, जबकि उपकर प्रत्यक्ष तथा परोक्ष कर दोनों पर लगाया जाता है। इस प्रकार सिद्धान्तत: उपकर (Cess) कर आधार पर लगाया जाता है, जबकि कर भार का दायित्व पर लगाया जाता है। पुन: अधिभार तथा उपकर की प्राप्ति को राज्यों के वितरण योग्य पूल (Divisivble Pool) में नहीं डाला जाता। इसके राजस्व को उन उद्देश्यों पर लगाया जाता है, जिनके लिए इन्हें लगाया जाता है।

- **लाफर वक्र (Laffer Curve)**

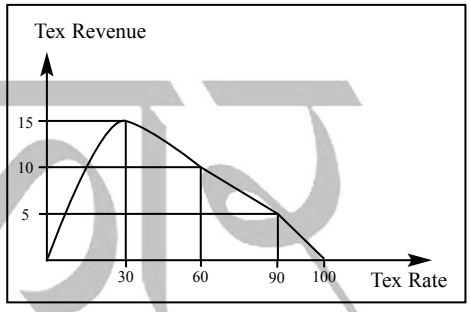

आर्ट लाफर द्वारा प्रतिपादित तथा अमरीकी जर्नलिस्ट जूड वैन्निस्की (Jude Wanniski) द्वारा बहुप्रचारित लाफर वक्र उस स्थिति की व्याख्या करता है जब यह मानकर चला जाता है कि यदि करारोपण की दरों को कम कर दिया जाए, तो सरकार को प्राप्त होने वाले राजस्व में वृद्धि होगी, लेकिन यह वृद्धि एक सीमा तक ही होगी। करों की दरों में इस सीमा से अधिक कमी कर दिए जाने पर करागत राजस्व में कमी आएगी। पूर्व में इसी अवधारणा को अमरीकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन तथा ब्रिटिष प्रधानमंत्री मारग्रेट थैचर अपना चुके हैं, लेकिन उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई थी।

- **कर अपवंचन (Tax Avoidance)**

इसके अन्तर्गत वैधानिक नियमों को ध्यान में रखते हुए संबंधित व्यक्ति अथवा कंपनी कर से बचने की कोशिश करते है। यूनियन बजट 2016–17 में Tax Avoidance को लेकर निम्नलिखित प्रस्ताव किए गए –

1) General Anti-avoidance Rules - GAAR को 2017–18 से लागू किया जाएगा।

यह ध्यान देने योग्य है, कि भारत में इन्हें 2012 में लागू किया गया था, लेकिन स्थगित कर दिया गया। (सोम समिति की सिफारिश पर) भारत में दक्षिण अफ्रीका में लागू किए गए GAAR के मॉडल का अनुकरण किया है।

- **Bad Bank**

भारत सरकार द्वारा इस बात का प्रस्ताव किया जा रहा था कि बैंको के NPA को लेने के लिए सरकार द्वारा एक Bad Bank की स्थापना की जाए। इस संदर्भ में श्री रघुराम राजन का यह कहना था कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का स्वामित्व मुख्यरूप से सरकार के पास है। इसीलिये एक सरकारी Bad Bank लाने से स्थिति में बदलाव नहीं होगा।

- **Happy Planet Index - HPI**

HDI की विभिन्न आधारों पर आलोचना की जाती है। अन्य बातों के अलावा यह कहा गया है कि HDI उच्च जीवनस्तर की Envirenmental Sustainability को ध्यान में नहीं रखता है। यह ध्यान देने योग्य है कि HDI में उच्च जीवनस्तर को सकारात्मक माना गया है, लेकिन उच्च जीवनस्तर से पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अत: इसके नकारात्मक पक्ष को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए New Economic Foundation (United Kingdom) द्वारा वर्ष 2006 में HPI का निर्माण किया गया। अपने सरलतम रूप में HPI निम्नलिखित सूत्र पर आधारित होता है –

$$\text{HPI} = \frac{\text{Experienced well being} \times \text{Life Cmpectancy}}{\text{Ecological Foot Print}}$$

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **Greenex**

यह एक BSE से जुड़ा हुआ शेयर सूचकांक है। इस सूचकांक में कार्बन उत्सर्जन में सर्वाधिक कुशलता रखने वाली 25 कंपनियों की Equity को सम्मिलित किया गया है। इसे फरवरी, 2012 में शुरू किया गया। इसका आधार मूल्य 1000 रुपए है तथा इसकी आधार निधि 1 अक्टूबर, 2008 है।

- **Slowdown**

इसमें GDP की Growth Rate कम हो जाती है, लेकिन वह सकारात्मक रहती है, अर्थात् - Growth Rate कम होती है, लेकिन GDP बढ़ता है।

- **Melt Down**

शेयर बाजार का तेज गति से गिरना।

- **Stimulus**

अर्थव्यवस्था को Slow Down, Contraction, Recession, Depression आदि से बाहर निकालने के लिए मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों का सरकार द्वारा लागू किया जाने वाला एक मिश्रण।

- **राजकोषीय कर्षण (Fiscal Drag)**

राजकोषीय कर्षण से आशय उस बड़े हुए कर से है, जो कर की दरों में बिना किसी परिवर्तन किए हुए मुद्रास्फीति के फलस्वरूप उत्पन्न हो जाता है। इस स्थिति में बढ़ी हुई मजदूरी तथा वेतन के कारण व्यक्ति ऊँचे कर स्लैब में पहुंच जाते हैं।

- **जोखिम पूंजी (Venture Capital)**

बाजार में निवेशकर्ताओं एवं कम्पनियों द्वारा व्यापारिक अथवा अन्य प्रकार की निवेशक गतिविधियों में प्रयुक्त की जाने वाली पूंजी जोखिम पूंजी कहलाती है।

- **पम्प प्राइमिंग (Pump Priming)**

पम्प प्राइमिंग विश्व प्रसिद्ध अर्थशास्त्री जे. एम. कीन्स द्वारा प्रतिपादित निवेश की एक अवधारणा है, जिसके अनुसार मन्दी को दूर करने के लिए सरकार को बड़े पैमाने पर निवेश करने की बात कही गई है। भले ही वह निवेश अनुत्पादक ही क्यों न हो।

- **जीरो नेट एड (Zero Net Aid)**

जब किसी देश विशेष की आर्थिक व्यवस्था स्व-निर्भर हो जाती है तथा उसे किसी विदेशी आर्थिक सहायता की आवश्यकता नहीं होती, तो वह जीरो नेट एड कहलाती है।

- **सिप (Systematic Investment Plan - SIP)**

सिप शब्द म्युचुअल फण्ड बाजार ने उत्पन्न किया है। एक निश्चित रकम का हर महीने निवेश, जैसे - पोस्ट ऑफिस में आरडी के नाम से होता है, को म्युचुअल फण्ड बाजार ने सिप के नाम से अपना लिया है।

- **एग्रीगेटर (Agrigear)**

वह व्यक्ति जो देश के विभिन्न क्षेत्रों से कमोडिटी खरीदकर बड़ी मात्रा में उस कमोडिटी की ट्रेडिंग करता है, उस व्यक्ति को एग्रीगेटर कहते हैं। गेटर प्राचीन समय से ही सक्रिय रहे हैं, लेकिन वे माल इकट्ठा करके शहर की मंडियों में बेचते थे। फ्यूचर ट्रेडिंग में एग्रीगेटर माल इकट्ठा कर उसका भाव एक्सचेंज में कोट करते हैं और मुनाफा कमाते हैं।

- **ब्रिज लोन (Bridge Loan)**

कम्पनियां प्राय: अपनी पूंजी का विस्तार करने के लिए नए शेयर तथा डिबेंचर्स जारी करती रहती हैं। कम्पनी को शेयर जारी करके पूंजी जुटाने में तीन माह से भी क्अधिक समय लगता है। इस समयावधि में अपना काम जारी रखने के लिए कम्पनियां बैंकों से अन्तरिम अवधि के लिए ऋण प्राप्त कर लेती है। इस प्रकार के ऋणों को ब्रिज लोन कहते हैं।

- **दिखावे के लिए किया गया व्यय (Conspicuous Consumption)**

जब किसी अर्द्धविकसित देश के नागरिक विलासिता की वस्तुओं का अधिकता से उपयोग करने लगते हैं, जो देश की समृद्धि तथा विकास के लिए हानिकारक होता है। ऐसे उपभोग को कॉस्पीकुअस कन्जम्पशन कहते हैं। इससे उस देश के साधनों का ह्रास होता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **आर्बिट्रेज (Arbitrage)**

इस शब्द का प्रयोग सामान्यत: विदेशी विनिमय के सन्दर्भ में किया जाता है। स्वतंत्र विदेशी मुद्रा बाजारों में यदि किसी स्थान पर कोई मुद्रा कम मूल्य पर खरीदी जाए तथा तुरन्त ही अन्यत्र किसी स्थान पर ऊँचे मूल्य पर बेच दी जाए, तो इस क्रिया को आर्बिट्रेज कहा जाता है।

- **अधिकृत पूंजी (Authorised Capital)**

पूंजी की वह अधिकतम मात्रा जिस सीमा तक कोई कम्पनी अपने शेयर जारी कर सकती है। यह आवश्यक नहीं कि कम्पनी द्वारा जारी किए गए शेयरों का मूल्य अधिकृत पूंजी के बराबर ही हो। यह अधिकृत पूंजी के बराबर या उससे कम हो सकता है, किन्तु अधिक नहीं।

- **राशिपतन (Dumping)**

किसी वस्तु के अतिउत्पादन की स्थिति में बाजार में वस्तु के मूल्य को एक न्यूनतम स्तर से नीचे गिरने से रोकने के लिए वस्तु के अतिरिक्त भण्डार को विदेशी बाजार में बहुत कम मूल्य पर बेचने और यहां तक कि नष्ट तक कर देने की प्रक्रिया राशिपतन कहलाती है। उत्पादकों के हितों की सुरक्षा के लिए कभी-कभी ऐसा करना पड़ता है, ताकि अतिरिक्त उत्पादन को बाजार से दूर करके वस्तु के मूल्य को गिरने से रोका जा सके।

- **प्रारंभिक जमा तथा व्युत्पन्न जमा (Primary Deposits and Derivative Deposits)**

प्रारम्भिक जमा से तात्पर्य उन जमा राशियों से है, जो नकदी अथवा वास्तविक मुद्रा के रूप में जमाकर्ताओं द्वारा बैंक में जमा की जाती है। इस प्रकार की नकद जमा का निर्माण बैंक नहीं करती, इन्हें निष्क्रिय जमा (Passive Deposist) अथवा प्रत्यक्ष जमा (Direct Deposits) भी कहते हैं। इसके विपरीत जब कोई बैंक किसी को ऋण अथवा अग्रिम देता है, तो उस ऋण की राशि को उसके खाते में जमा कर दिया जाता है। इस प्रकार उत्पन्न होने वाली जमा राशियां व्युत्पन्न जमा (Derivative Deposits) अथवा साख जमा अथवा गौण जमा (Secondary Deposits) कहलाती हैं, इन्हें सक्रिय जमा (Active Deposits) भी कहते हैं।

- **शाखा बैंकिंग (Branch Banking)**

शाखा बैंकिंग प्रणाली के अन्तर्गत किसी बैंक के एक प्रधान कार्यालय के अतिरिक्त उसकी अनेक शाखाएं देशभर में फैली होती हैं और कभी-कभी कुछ शाखाएं देश के बाहर भी होती हैं।

- **इर्का बैंकिंग (Unit Banking)**

इसके अन्तर्गत एक बैंक का कार्य साधारणत: एक ही कार्यालय तक सीमित रहता है, यद्यपि एक सीमित क्षेत्र में ये बैंक अपनी कुछ शाखाएं भी स्थापित कर लेती हैं। इर्का बैंकिंग प्रणाली अमेरिका में अधिक लोकप्रिय रही है।

- **समाशोधन गृह अथवा क्लीयरिंग हाउस (Clearing House)**

समाशोधन गृह अथवा क्लीयरिंग हाउस प्राय: प्रत्येक ऐसे शहर में होते हैं, जहां 3-4 अथवा उससे अधिक बैंकें होती हैं। क्लीयरिंग हाउस वह स्थान है, जहां विभिन्न बैंकों के प्रतिनिधि प्रतिदिन एकत्र होते हैं। इस स्थान पर उन प्रतिनिधियों के मध्य चेकों का आदान-प्रदान तथा जमा-खर्च होता है। इस प्रकार यहां हजारों चेकों का लेन-देन बहुत ही सरलता से तथा थोड़े समय में ही सम्पन्न हो जाता है। इस प्रक्रिया को समाशोधन (Clearing) कहते हैं। भारत में जिन शहरों में रिजर्व बैंक की शाखा है, वहां रिजर्व बैंक में ही समाशोधन गृह होता है। जिन शहरों में रिजर्व बैंक की शाखा नहीं हैं, वहां स्टेट बैंक की मुख्य शाखा में समाशोधन गृह होता है।

- **मांग का नियम (Law of Demand)**

कोई भी व्यक्ति किसी वस्तु के लिए कीमत उसकी उपयोगिता के कारण ही देता है और किसी वस्तु के लिए वह उसकी उपयोगिता से अधिक मुद्रा देगा ही नहीं। चूंकि उपभोग की वृद्धि के साथ वस्तु की उपयोगिता घटेगी, इसलिए कोई भी व्यक्ति किसी वस्तु का उपभोग या मांग तभी करेगा, जब उसका मूल्य गिरेगा। इस प्रकार हम भी कह सकते हैं कि जैसे-जैसे किसी वस्तु की कीमत गिरती है, वैसे-वैसे उसकी मांग बढ़ती है। यदि आय, रुचि तथा अन्य वस्तुओं के मूल्य स्थिर रहें। इसे ही हम अर्थशास्त्र में मांग का नियम कहते हैं, जिसका प्रतिपादन अर्थशास्त्री अल्फ्रेड मार्शन किया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- **पूर्ति का नियम (Law of Supply)**

किसी वस्तु की बाजार में पूर्ति उत्पादक या विक्रता द्वारा होती है। पूर्ति से आशय विभिन्न कीमतों पर उत्पादक द्वारा किसी वस्तु की आपूर्ति की जाने वाली मात्रा से है। कोई भी उत्पादक (विक्रेता) ऊँचे मूल्य पर किसी वस्तु की अधिक मात्रा की पूर्ति करेगा तथा नीचे मूल्य पर कम पूर्ति करेगा। इसे पूर्ति का नियम कहते हैं।

- **वेबलेन प्रभाव (Veblen Effect)**

जब किसी वस्तु की कीमत गिरे और कुछ लोग यह सोचकर उसकी मांग में कमी कर दें कि उसकी कीमत गिरावट उसकी गुणवत्ता में गिरावट के कारण हुई, तो इसे हम वेबलेन का प्रभाव कहते हैं। इस प्रभाव को थ्रान्स्टीन वेबलेन के नाम पर वेबलेन प्रभाव कहा गया।

- **समस्थित बिन्दु (Breakeven Point)**

यह वह बिन्दु है, जबकि फर्म सब लागत पूरा करने पर शून्य लाभ की स्थिति में है। एक ऐसा बिन्दु या स्तर जिसके बाद फर्म लाभ कमाना शुरू कर दे, उसे समस्थित बिन्दु कहते हैं। आय के उस स्तर को भी हम समस्थित बिन्दु कहते हैं, जहां से अर्थव्यवस्था में या घरेलू इर्का में बचत होनी शुरू हो जाए, अर्थात् – इसके ठीक पूर्व उपभोग की मात्रा आय के बराबर हो।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

भारतीय अर्थव्यवस्था
INDIAN ECONOMY

❐ अर्थव्यवस्था क्या है (What is Economy)

जब हम किसी देश को उसकी समस्त आर्थिक गतिविधि के संदर्भ में परिभाषित करते हैं, तो उसे उस देश की अर्थव्यवस्था कहते हैं। जहां आर्थिक गतिविधि किसी देश के व्यापारिक क्षेत्र, घरेलू क्षेत्र तथा सरकार द्वारा सीमित संसाधनों के प्रयोग, वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन, उपभोग तथा वितरण से संबंधित होती है। दूसरे शब्दों में किसी राष्ट्र द्वारा लोककल्याण के उद्देश्य से उपलब्ध संसाधनों का समुचित नियोजन करते हुए अर्थ को केन्द्र में रखकर बनाई गई व्यवस्था ही अर्थव्यवस्था कहलाती है।

वस्तुतः यहां मूल प्रश्न यह है कि क्या, कितना, कैसे एवं किसके लिए उत्पादन किया जाए? इन्हीं प्रश्नों के उत्तर में बनाई गई व्यवहारिक व्यवस्था को अर्थव्यवस्था कहते हैं। अर्थव्यवस्था एक अधूरा शब्द है, जब तक इसके आगे किसी देश या किसी क्षेत्र का नाम नहीं जोड़ा जाए, जैसे - भारत व चीनी अर्थव्यवस्था, विकासशील अर्थव्यवस्था, विकसित अर्थव्यवस्था आदि।

❐ अर्थव्यवस्था का वर्गीकरण (Types of Economy)

अर्थव्यवस्था का वर्गीकरण निम्नलिखित आधार पर किया जाता है -

अर्थव्यवस्था का वर्गीकरण

सरकार की भूमिका के आधार पर	विकास की अवस्था के आधार पर	विश्व के साथ संबंधों के आधार पर
- पूंजीवादी (Capitalist)	- विकसित (Developed)	- बंद (Closed)
- समाजवादी (Socialist)	- विकासशील (Developing)	- खुली (Open)
- मिश्रित (Mixed)	- अल्पविकसित (Under-Devoloping)	

◆ सरकार की भूमिका के आधार पर

1) **पूंजीवादी अर्थव्यवस्था (Capitalist Economy)** - ऐसी अर्थव्यवस्था, जिसमें निजी क्षेत्रों व बाजार की भूमिका प्रभावकारी होती है। आर्थिक गतिविधियों के समस्त निर्णय जैसे - कितना उत्पादन किया जाए, किसका किया जाए एवं कैसे किया जाए, निजी क्षेत्र द्वारा लिए जाते हैं। दूसरे शब्दों में अर्थव्यवस्था बाजार की शक्तियों (मांग व पूर्ति) द्वारा संचालित होती है, जिसका एकमात्र उद्देश्य लाभ कमाना होता है। उदाहरणार्थ - अमेरिका, कनाड़ा, मैक्सिको आदि।

2) **समाजवादी अर्थव्यवस्था (Socialist Economy)** - ऐसी अर्थव्यवस्था, जिसमें आर्थिक क्रियाओं का निर्धारण व नियंत्रण एक केन्द्रीय इकाई या राज्य के द्वारा होता है, इसलिए इसे नियंत्रित अर्थव्यवस्था भी कहा जाता है। यहां बाजार कारकों की भूमिका सीमित होती है। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था जहां उपभोग उत्पादन का निर्धारण करता है, वहीं समाजवादी अर्थव्यवस्था में उत्पादान उपभोग का निर्धारण करता है। इसी तरह पूंजीवादी अर्थव्यवस्था लाभ से प्रेरित होती है, वहीं समाजवादी अर्थव्यवस्था कल्याणकारी राज्य की संकल्पना पर आधारित होती है। उदाहरणार्थ - चीन, वियतनाम, उत्तर कोरिया आदि।

3) **मिश्रित अर्थव्यवस्था (Mixed Economy)** - एक ऐसी प्रणाली, जिसमें बाजार यंत्र के संचालन के साथ राज्य की भूमिका भी साथ-साथ चले, मिश्रित अर्थव्यवस्था कहलाती है। इसके अन्तर्गत अर्थव्यवस्था के बुनियादी निर्णय राज्य द्वारा तथा गौण निर्णय बाजार द्वारा लिए जाते हैं। दूसरे शब्दों में मिश्रित अर्थव्यवस्था में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था तथा समाजवादी अर्थव्यवस्था दोनों की विशेषताएं पाई जाती हैं। उदाहरणार्थ - भारत, नार्वे, स्वीडन आदि।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- **पूंजीवादी, समाजवादी एवं मिश्रित अर्थव्यवस्था में अन्तर**

पूंजीवादी अर्थव्यवस्था	समाजवादी अर्थव्यवस्था	मिश्रित अर्थव्यवस्था
– अहस्तक्षेप की नीति और निजी स्वामित्व (Laissez Faire and Private Ownership)	– संसाधनों पर सरकार का स्वामित्व/नियंत्रण	– संसाधनों पर राज्य और निजी दोनों क्षेत्रों का स्वामित्व (State and Private Ownership or Resources)
– प्रतियोगिता पर बल (Emphasis on Competition)	– बाजार, बाजार की शक्तियां, मांग–आपूर्ति, प्रतियोगिता जैसे तत्व अनुपस्थित (Absence of Market Forces, Demand-Suplly Rule, Competition Etc)	– बाजार और गैर–बाजार दोनों घटक एक साथ (Presence of Market and Non-market Forces at the Same Time)
– मांग व आपूर्ति (Demend and Supply)	– योग्यता और आवश्यकता के अनुसार वितरण (Distribution as per Need and Ability)	– मिश्रित मूल्य पद्धति (Mixed Price Mechanism)
– बाजार की शक्तियां केन्द्र में (Market Mechanism)	– उत्पादन और मूल्य पर सरकार का नियंत्रण	– कल्याणकारी भावना (Welfare Feeling)
	– निजी स्वामित्व की अवधारणा नहीं (No Private Ownership)	

- **विकास की अवस्था के आधार पर**

1) **विकसित (Developed)** – ऐसी अर्थव्यवस्था, जो औद्योगिक विकास की उच्च अवस्था तक पहुंच चुकी है, उन्हें विकसित अर्थव्यवस्था कहा जाता है। ये अर्थव्यवस्थाएं अपने संसाधनों एवं अपनी विकास संभावनाओं का दोहन कर चुकी हैं। अतः अपने विकास के स्तर को बनाए रखने के लिए नवीन बाजारों की तलाश करती हैं। इन अर्थव्यवस्थाओं की जी. डी. पी. में सेवा क्षेत्र का योगदान अधिक होता है।

2) **विकासशील (Developing)** – ऐसी अर्थव्यवस्था, जहां औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया अपेक्षाकृत देर से शुरू हुई है। इन अर्थव्यवस्थाओं के द्वारा अब तक अपने संसाधनों व विकास संभावनाओं को अपेक्षित दोहन संभव नहीं हो सका है। यहां जी. डी. पी. में कृषि क्षेत्र का हिस्सा घट रहा होता है व औद्योगिक व सेवा क्षेत्र का हिस्सा बढ़ रहा होता है।

3) **अल्पविकसित (Under-Devoloping)** – ऐसी अर्थव्यवस्था, जो अपने विकास के आरंभिक चरण में है और जो अपने संसाधनों व विकास संभावनाओं का अभी भी दोहन नहीं कर पा रही है। यहां जी. डी. पी. में प्राथमिक क्षेत्र की भूमिका अभी भी अहम है।

- **विश्व के साथ संबंधों के आधार पर**

1) **बंद (Closed)** – ऐसी अर्थव्यवस्था, जो शेष विश्व के साथ संबंधों के प्रति उदासीन है या आत्मनिर्भरता पर बल देते हुए विश्व के साथ संबंधों को हतोत्साहित करती है। यह संरक्षणवाद पर बल देती है।

2) **खुली (Open)** – यह संरक्षणवाद की बजाये प्रतिस्पर्धा पर बल देती है। यह शेष विश्व के साथ आर्थिक क्रियाओं को सम्पन्न करती है, जिसमें वस्तु, सेवा, पूंजी, निवेश और तकनीक के मुक्त प्रवाह को प्रोत्साहित करती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ अर्थव्यवस्था के क्षेत्र (Sectors of Economy)

प्रत्येक अर्थव्यवस्था में मानव के वे तमाम क्रिया-कलाप, जो आय सृजन में सहायक होते हैं, उन्हें आर्थिक गतिविधियां या क्रिया की संज्ञा दी गई है। अर्थव्यवस्था में आर्थिक गतिविधियों को निम्नलिखित तीन क्षेत्रों में बांटा गया है -

- **प्राथमिक क्षेत्र (Primary Sector)**

इसके अन्तर्गत उन आर्थिक गतिविधियों को शामिल किया जाता है, जो प्रत्यक्ष रूप से प्रकृति पर निर्भर होती हैं। प्राकृतिक संसाधनों (Natural Resources) के प्रत्यक्ष दोहन (Direct Utilization) द्वारा जिन वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है, उन्हें प्राथमिक वस्तुएं (Primary Goods) तथा ऐसी वस्तुओं के उत्पादन में संलग्नता को प्राथमिक क्षेत्र कहते हैं। इसमें कृषि, पशु पालन, मत्स्य पालन, खनन आदि क्षेत्रों को शामिल किया जाता है।

- **द्वितीयक क्षेत्र (Secondary Sector)**

इसके अन्तर्गत उन आर्थिक क्रिया-कलापों को शामिल किया जाता है, जो उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन या प्राथमिक वस्तुओं का रूप बदलकर उसका मूल्यवर्धन (Value Addition) कर देते हैं। इसके अन्तर्गत निर्माण (Construction), विनिर्माण (Manufacturing) और प्रसंस्करण (Processing) से संबंधित गतिविधियां आती हैं।

- **तृतीयक क्षेत्र (Tertiary Sector)**

इसके अन्तर्गत उन आर्थिक क्रियाकलापों को शामिल किया जाता है, जिनका संबंध सेवा गतिविधियों से जुड़ा होता है। इसमें मानव श्रम-शक्ति की भूमिका अहम होती है। उदाहरणार्थ - बैंकिंग, बीमा, शिक्षा, पर्यटन आदि।

➢ विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं का एक वर्गीकरण प्रथम विश्व, द्वितीय विश्व, तृतीय विश्व एवं चतुर्थ देशों के रूप में भी किया जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध या शीत युद्ध के दौरान जब पूरा विश्व दो समूहों में बँट गया, तब पहली दुनिया एवं दूसरी दुनिया देशों की अवधारणा देखी गई।

1) **प्रथम विश्व के देश** - अमेरिका समर्थित देशों का समूह, जो नाटो के सदस्य थे एवं यहां पर पूंजीवादी अर्थव्यवस्था विद्यमान थी। इसमें अमेरिका के साथ मुख्यत: पश्चिमी यूरोप के देश शामिल थे।

2) **द्वितीय विश्व के देश** - रूस समर्थित देशों का समूह, जहां पर मार्क्सवादी विचारधारा एवं समाजवाद की अवधारणा थी। इसमें रूस, चीन, क्यूबा आदि ऐसे देश शामिल थे, जहां पर राज्य का नियंत्रण सर्वोपरि था।

3) **तृतीय विश्व के देश** - शीत युद्ध के समय पूरा विश्व लगभग दो समूहों में बंट गया था। एक तरफ अमेरिका जैसी पूंजीवादी राष्ट्र थे, तो दूसरी तरफ रूस जैसे समाजवादी राष्ट्र। दोनों ही प्रकार के राष्ट्र स्वयं को शक्तिशाली दिखाने हेतु हथियारों की प्रतिस्पर्धा कर रहे थे। ऐसे समय में जो राष्ट्र नवस्वाधीन थे, वे हथियारों की हौड़ से बचते हुए अपना विकास करना चाहते थे। अत: इन राष्ट्रों ने उपरोक्त दोनों राष्ट्रों का समर्थन न कर गुटनिरपेक्षता की स्थापना की। इस संगठन में शामिल देशों को ही तृतीय विश्व के देश कहा जाता है। उदाहरणार्थ - भारत, दक्षिण अफ्रीका एवं दक्षिण अमेरिकी व एशियाई देश।

4) **चतुर्थ विश्व के देश** - विश्व के कई ऐसे देशों का एक समूह भी है, जो विकास का मार्ग अपनाने के लिए द्वंद (Conflict) की स्थिति में हैं। इन देशों में प्रगति के पथ पर यात्रा अभी शुरू भी नहीं है। इन्हें अल्पतम विकसित देश कहा जाता है। उदाहरणार्थ - अण्डमान-निकोबार (जरेवा जनजाति), कालाहारी मरुस्थल (बुशमैन) आदि।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

राष्ट्रीय आय तथा लेखांकन की प्रणाली
NATIONAL INCOME AND ACCOUNTING SYSTEM

किसी भी देश की राष्ट्रीय आय एक निश्चित समावधि में समस्त स्रोतों से प्राप्त होने वाली शुद्ध लाभ होता है। इसे दूसरे शब्दों में किसी देश की आर्थिक संवृद्धि के अन्तर्गत भी देखा जा सकता है। आर्थिक वृद्धि एक भौतिक अवधारणा है। आर्थिक वृद्धि से तात्पर्य किसी समयावधि में किसी अर्थव्यवस्था में होने वाली वास्तविक आय वृद्धि से है। दूसरे शब्दों में प्रतिव्यक्ति आय में लम्बे समय तक निरन्तर होने वाली वृद्धि को आर्थिक वृद्धि कहते हैं। यह सकल घरेलू उत्पाद (GDP) एवं सकल राष्ट्रीय उत्पाद (GNP) के आकार में वृद्धि का संकेत देती है। स्पष्ट है कि आर्थिक वृद्धि मात्रात्मक (Quantitative) परिवर्तन से संबंधित है।

आर्थिक वृद्धि एक मात्रात्मक अवधारणा है, जिसका मापन प्रतिव्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय द्वारा किया जाता है। राष्ट्रीय आय को समझने से पूर्व इससे संबंधित विभिन्न अवधारणाओं को समझना महत्वपूर्ण है, जो कि निम्नलिखित हैं –

1) **सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) -** किसी देश की **घरेलू सीमा** के अंतर्गत **एक वित्तीय वर्ष** में सभी उत्पादकों (सामान्य निवासियों तथा गैर निवासियों) द्वारा उत्पादित समस्त **अंतिम** वस्तुओं एवं सेवाओं के कुल **मौद्रिक** मूल्य से है। GDP की उपर्युक्त परिभाषा को ध्यान में रखते हुए इससे जुड़ी हुई महत्व पूर्ण बातों को निम्नलिखित प्रकार से व्यक्ति किया जा सकता है –

a) GDP में घरेलू सीमा में किए कुल उत्पादन को ध्यान में रखा जाता है। भले ही उसकी उत्पत्ति में किसी विदेशी की कोई भूमिका रही हो।

b) उत्पादन की गणना में सभी वस्तुओं और सेवाओं को नहीं लिया जा सकता है। इसका कारण यह है कि कुछ वस्तुएं, जिन्हें मध्यवर्ती वस्तुएं कहा जाता है, अन्य वस्तुओं में रूपान्तरित हो जाती है और उनका मूल्य ऐसी अन्य वस्तुओं के मूल्य में चला जाता है। अत: अंतिम वस्तुएं, जिनका पुन:परिवर्धन (Modification) नहीं होता है, को ही ध्यान में रखा जाना चाहिए, ताकि मूल्यों की बार–बार गणना नहीं हो।

कुछ मध्यवर्ती वस्तुएं अन्य वस्तुओं में नहीं जा पाती है, तो उनके स्टॉक का पता लगा लिया जाएगा। यदि अंतिम वस्तुओं एवं सेवाओं को ध्यान में नहीं रखना है, तो और उत्पादन की प्रत्येक अवस्था को ध्यान में रखना है, तो सभी स्तरों पर होने वाले मूल्य संवर्धनों (Value Addition) को आपस में जोड़ा जा सकता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं – एक देश का GDP उसकी घरेलू सीमा में किए गए कुल मूल्य संवर्धन को प्रदर्शित करता है।

c) GDP को एक समयाविध के साथ जोड़ा जाता है, जो सामान्यत: एक 1 वर्ष होती है।

d) राष्ट्रीय आय और उत्पादन को एक आंकड़े (Digit) में प्रदर्शित करने के लिए किसी मौद्रिक मापदण्ड (Monetary Measurement) की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए बाजार कीमतों के आधार पर विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के मौद्रिक मूल्य निकालकर परस्पर जोड़ दिया जाता है।

2) **सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product) -** सकल राष्ट्रीय उत्पाद से आशय एक वित्तीय वर्ष में एक देश के सामान्य **निवासी** द्वारा देश की **घरेलू सीमा के अन्दर** तथा **बाहर** उत्पादित की गई अन्तिम वस्तुओं एवं सेवाओं के सकल मौद्रिक मूल्य से है। दूसरे शब्दों में जब हम सकल घरेलू उत्पाद में **विदेशों से प्राप्त शुद्ध साधन आय** को जोड़ते हैं तथा विदेशों द्वारा भारत में अर्जित आय को घटाते हैं, तो सकल राष्ट्रीय उत्पाद प्राप्त होता है।

$$\mathbf{GNP} = GDP + (X - M)$$

जिसमें, **X** = देशवासियों द्वारा विदेशों में अर्जित आय।

M = विदेशियों द्वारा देश में अर्जित आय।

उपर्युक्त समीकरण से स्पष्ट है कि यदि X = M है तो GNP = GDP होगा। इसी प्रकार जब बंद अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत भी GNP = GDP होगा। स्पष्ट है कि यह सदैव आवश्यक नहीं है कि सम्पूर्ण GDP देशवासियों की उत्पादक सेवाओं का

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

ही परिणाम होती है। वास्तव में GDP का कुछ भाग उन विदेशियों की सेवाओं का परिणाम हो सकता है, जिन्होंने अपनी पूँजी तथा तकनीकी का उपयोग करके देश के कुल उत्पाद में कुछ भाग का उत्पादन किया है। ऐसी स्थिति में GNP में समस्त GDP सम्मिलिति नहीं की जाएगी। GNP में GDP का केवल वही भाग सम्मिलित किया जाएगा, जो देश के निवासी की उत्पादक सेवाओं का परिणाम है। अगर विदेशों से प्राप्त आय धनात्मक है, तो उस वर्ष GNP, GDP से अधिक होगा, और यदि विदेशों से प्राप्त आय ऋणात्मक है, तो उस वर्ष GNP, GDP से कम होगा

3) **शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (Net National Product)** - जब हम GNP में से मूल्य ह्रास घटाते हैं, तो हमें शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद प्राप्त होता है। यहां मूल्य ह्रास से तात्पर्य किसी अर्थव्यवस्था में एक वर्ष में कुल घिसावट या टूट-फूट से है। वास्तव में जिन संसाधनों द्वारा उत्पादन किया जाता है, उनमें उपयोग के दौरान मूल्य ह्रास होता है।

$$\textbf{NNP} = \text{GNP} - \text{Depreciation}$$

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तुलनाओं के लिए उत्पादन के सकल (Gross) आंकड़ों का प्रयोग किया जाता है। इसका कारण यह है कि मशीनों की घिसावट को लेकर अलग-अलग राष्ट्रों में अलग-अलग नियम हो सकते हैं। सैद्धान्तिक रूप से घिसावट को समायोजित करने वाले आंकड़ों को अच्छा माना जा सकता है, क्योंकि व्यवसायिक फर्मों द्वारा घिसावट को लेखांकन पर लाने के लिए धन के प्रावधान करने पड़ते हैं। इसके कारण नई मशीन खरीदने की उनकी शक्ति बनी रहती है और यह कहा जा सकता है कि औद्योगिक या अन्य क्षेत्र में, जहां मशीन का प्रयोग होता है, उत्पादन क्षमता बनी रहेगी।

4) **राष्ट्रीय आय (National Income)** - राष्ट्रीय आय को निकालने से पूर्व हमें साधन लागत (Factor Cost), बाजार मूल्य (Market Price), स्थिर कीमतों (Constant Price) व चालू कीमतों (Current Price) की अवधारणा को समझना होगा।

a) **साधन लागत** - किसी उत्पाद (Product) के उत्पादन में उत्पादनकर्ता को उत्पादन के साधनों के लिए जितना व्यय करना पड़ता है, उसे साधन लागत कहते हैं। जैसे - कच्चा माल, मजदूरी, बिजली, किराया, ब्याज, लाभ, लगान इत्यादि।

b) **बाजार मूल्य** - जब किसी उत्पाद के साधन लागत में अप्रत्यक्ष करों को जोड़ते हैं तथा सब्सिडी को घटाते हैं, तो बाजार मूल्य प्राप्त होता है।

c) **स्थिर कीमतों** - जब हम राष्ट्रीय आय का आकलन किसी एक आधार वर्ष को मानकर करते हैं, तो स्थिर कीमतों पर यह राष्ट्रीय आय कहलाती है। इसका उद्देश्य महंगाई के प्रभाव को हटाना होता है।

d) **चालू कीमतों** - जब हम राष्ट्रीय आय का आकलन बाजार में वर्तमान में प्रचलित कीमतों पर करते हैं, तो चालू कीमतों पर यह राष्ट्रीय आय कहलाती है। इसमें महंगाई प्रभाव सम्मिलित होता है।

इस प्रकार जब हम NNP का मूल्यांकन साधन लागत पर करते हैं, तो उसे ही राष्ट्रीय आय के नाम से जाना जाता है। इसे ज्ञात करने के लिए बाजार मूल्य पर आकलित शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (NNP_{MP}) में से अप्रत्यक्ष करों को घटाना तथा सब्सिडी को जोड़ना होता है। इस प्रकार ज्ञात मूल्य ही **साधन लागत पर शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (Net National Product at Factor Cost) राष्ट्रीय आय कहलाता है**।

$$\textbf{NNP}_{\textbf{FC}} = \text{NNP}_{\text{MP}} - \text{अप्रत्यक्ष कर} + \text{सब्सिडी}$$

इस प्रकार यह भी स्पष्ट है कि चालू कीमतों पर राष्ट्रीय आय का आकलन करने पर अर्थव्यवस्था का सही दृश्य सामने नहीं आएगा, क्योंकि इस स्थिति में वास्तविक उत्पादन में महंगाई का प्रभाव सम्मिलित होगा, जो कि अर्थव्यवस्था की भ्रामक तस्वीर प्रस्तुत करेगा। अत: CSO एवं अन्य सभी अन्तराष्ट्रीय संगठन स्थिर कीमतों पर ही राष्ट्रीय आय के अनुमान प्रदर्शित करते हैं, जो कि अधिक वैध एवं मान्य हैं। यहां यह उल्लेखनीय है कि स्थिर कीमतों पर राष्ट्रीय आय का आकलन एक वर्ष को आधार मानकर किया जाता है। भारत के संदर्भ में यह पूर्व में 2004-05 था तथा वर्तमान में यह 2011 है।

5) **वैयक्तिक आय (Personal Income)** - वैयक्तिक आय वह आय है, जो देशवासियों को वास्तविक रूप में प्राप्त होती है। वैयक्तिक आय को ज्ञात करने के लिए राष्ट्रीय आय में से निगम करों (Corporate Taxes) व सामाजिक सुरक्षा प्रावधानों

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

के लिए गए भुगतानों को **घटाते हैं** तथा सरकारी हस्तान्तरण भुगतानों (Government Transfer Payments), व्यापारिक हस्तान्तरण भुगतानों (Business Transfer Payments) व सरकार से प्राप्त शुद्ध ब्याज (Net Interest Paid by the Government) को **जोड़ देते हैं**।

वैयक्तिक आय = राष्ट्रीय आय – निगमों का अवितरित लाभांश – निगम कर – सामाजिक सुरक्षा योजना के लिए किए गए भुगतान + सरकारी हस्तान्तरण भुगतान + व्यापारिक हस्तान्तरण भुगतान

6) **व्यय योग्य वैयक्तिक आय (Disposable Personal Income)** – व्यय योग्य वैयक्तिक आय ज्ञात करने के लिए वैयक्तिक आय में से वैयक्तिक प्रत्यक्ष करों को घटाया जाता है, अर्थात् –

व्यय योग्य वैयक्तिक आय = वैयक्तिक आय – वैयक्तिक प्रत्यक्ष कर

7) **प्रतिव्यक्ति आय (Per Capital Income)** – GDP, GNP या NNP_{FC} को जनसंख्या से भाग देने पर प्रतिव्यक्ति GDP, प्रतिव्यक्ति GNP या प्रतिव्यक्ति आय प्राप्त होती है।

$$\text{वैयक्तिक आय} = \frac{\text{NI}}{\text{Population}}$$

किसी भी राष्ट्र में आर्थिक संवृद्धि (Economic Growth) को मापने के लिए PCI को सर्वाधिक उपयुक्त सूचकांक माना जाता है। PCI में जनसंख्या को भी समायोजित किया जाता है और उसके विकास को रोकने वाले कारक के रूप में उजागर किया जाता है।

किसी देश में राष्ट्री आय का समग्रस्तर ऊँचा हो सकता है, जैसे – भारत, लेकिन लोगों का जीवनस्तर तदानुसार ऊँचा नहीं भी हो सकता है। इसका कारण उच्च राष्ट्रीय आय के साथ उच्च जनसंख्या होती है। यही कारण है कि विश्व बैंक द्वारा International Comparision Programme (ICP)–2013 में निम्न अभिव्यक्ति का प्रयोग किया गया। Largest Conomies aur not the Richest। PCI की मुख्य कमी यह है कि यह एक औसत नहीं है तथा वितरणात्मक विषमताओं को प्रदर्शित नहीं करती है।

8) **स्थिर मूल्यों पर राष्ट्रीय आय (National Income at Constant Price)** – जब किसी भी वर्ष राष्ट्रीय आय को निकलने के लिए किसी आधार वर्ष (Base Year) की कीमतों का प्रयोग किया जाता है, तो ऐसी राष्ट्रीय आय को स्थिर मूल्यों पर आय कहते हैं। इसे वास्तविक राष्ट्रीय आय (Real National Income) भी कहते हैं।

वस्तुओं की कीमतें बदलती रहती हैं। ऐसी स्थिति में हमें इस बात का पता नहीं लग पाएगा कि राष्ट्रीय आय में बढ़ोत्तरी कीमतों के कारण हुई है या उत्पादन की मात्राओं में बदलाव से। इसका निवारण करने के लिए कीमतों को स्थिर कर दिया जाता है और यदि इसके बावजूद राष्ट्रीय आय बदलती है, तो इसका कारण उत्पादन की मात्राएं होती हैं। इससे हमें वास्तविकता का पता लगेगा।

हाल ही में भारत में आधार वर्ष को 2004–05 के स्थान पर 2011–12 किया गया है। यह भारत का 8वां Base Year है। एक आधार वर्ष से राष्ट्रीय आय की एक श्रृंखला (Series) का निर्माण होता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वर्तमान में राष्ट्रीय आय की 8वीं श्रृंखला चल रही है।

भरतीय राष्ट्रीय सांख्यिकी आयोग के अनुसार प्रत्येक 5 वर्ष में आधार वर्ष को बदला जाना चाहिए। समय के गुजरने के साथ नई वस्तुओं का उत्पादन शुरू हो जाता है। यदि आधार वर्ष को नहीं बदला जाएगा, तो उनकी कीमतें नहीं मिल पाएंगी। आधार वर्ष का चुनाव करते समय किसी सामान्य वर्ष को अधिक वरियता दी जाती है, जिसमें कीमतें अत्यधिक ऊँची अथवा कम नहीं रही हैं।

नोट – तुलनाओं की दृष्टि से स्थिर मूल्य पर आधारित राष्ट्रीय आय की संकल्पना को अधिक उपयुक्त माना जाता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

9) **प्रचलित मूल्यों पर राष्ट्रीय आय (National Income at Current Prices)** - इसके अन्तर्गत किसी आधार वर्ष की कीमतों का प्रयोग नहीं किया जाता है। सम्बन्धित वर्ष की मात्राओं के साथ-साथ सम्बन्धित वर्ष की कीमतों को ध्यान में रखा जाता है। ऐसी स्थिति में उत्पाद को लेकर वस्तु स्थिति का पता नहीं लगा पाएगा। तुलनाओं के लिए इसे अच्छा नहीं माना जाता है।

$$\textbf{अवस्फीतिकारक (GNP Deflator)} = \frac{\text{प्रचलित मूल्यों पर GNP}}{\text{स्थिर मूल्यों पर GNP}}$$

कभी-कभी GNP Deflator का प्रयोग मुद्रास्फीति का पता लगाने के लिए कर लिया जाता है, लेकिन मुद्रास्फीति को मापने के लिए यह अधिक उपयुक्त नहीं है, क्योंकि इसमें सभी प्रकार की वस्तुओं का समावेश होता है। जबकि अधिकांश मामलों में मुद्रास्फीति को चयनित वस्तुओं को ध्यान में रखते हुए निकाला जाता है।

10) **बाजार मूल्य के आधार पर सकल मूल्य संवर्धन का आकलन (Gross Value Addition at Market Price - GVA_{MP})** - किसी उत्पादन इर्का द्वारा देश या प्रांत या जिले के कुल उत्पादन में की गई वृद्धि को ही बाजार मूल्य के आधार पर सकल मूल्य संवर्धन का आकलन कहते हैं। इसका आशय हुआ कि कुल संप्राप्ति से माध्यमिक आगतों (Intermediate Inputs) पर किए गए खर्च को घटाने के बाद जो राशि शेष बचती है, उसे ही बाजार मूल्य के आधार पर सकल मूल्य संवर्धन का आकलन (GVA_{MP}) कहते हैं। हम यह कह सकते हैं कि चूंकि कोई भी अर्थव्यवस्था उत्पादन इकाइयों का समूह होती है, इसलिए किसी अर्थव्यवस्था का मूल्यवर्धन सभी निवसी उत्पादक इकाइयों के मूल्यवर्धन के योग के बराबर होगा, अर्थात् -

$$\mathbf{GVA_{MP} = GDP_{MP}}$$

11) **कारक या उत्पादन लागत पर सकल मूल्य संवर्धन (Gross Value Addition at Factor Cost - GVA_{FC})** - किसी उत्पादन इकाई द्वारा देश, प्रांत या जिले के कारक या उत्पादन लागत पर उत्पादन में की गई वृद्धि को ही कारक का उत्पादन लागत पर सकल मूल्य संवर्धन (GVA_{FC}) कहा जाता है। इसे इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि बाजार मूल्य पर सकल घरेलू उत्पाद से निवल परोक्ष कर की राशि निकाल देने के बाद जो शेष बचता है, वह कारक या उत्पादन लागत पर सकल मूल्य संवर्धन कहलाता है, अर्थात् -

$$\mathbf{GVA_{FC} = GDP_{FC}}$$

12) **हरित जीडीपी (Green GDP)** - GDP उत्पादित करने की प्रक्रिया के दौरान पर्यावरण को पहुंची क्षति का अनुमानित मूल्य ग्रीन GDP कहलाता है।

Green GDP = GDP - GDP को उत्पादित करने के क्रम में पर्यावरण को पहुंची क्षति का अनुमानित मूल्य।

13) **GNH (Gross National Happiness) -** यह अवधारणा 1972 में भूटान के नरेश के द्वारा गई। यह निम्नलिखित बातों पर आधारित है -

a) सम्पोषणी विकास (Sustainable Development)।

b) पर्यावरणीय संरक्षण (Sustainable Development)।

c) सांस्कृतिक मूल्यों का रखरखाव (Preservation of Cultural Values)।

d) सुशासन (Good Governanc)।

❐ राष्ट्रीय आय का आकलन करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान रखा जाता है -

- राष्ट्रीय आय को मुद्रा के रूप में मापा जाता है।
- इसमें अन्तिम वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्यों को ही सम्मिलित किया जाता है, न कि मध्यवर्ती वस्तुओं के मूल्य को।
- घरेलू सेवाओं अथवा कार्य (कपड़े धोना, खाना बनाना आदि) को राष्ट्रीय आय में शामिल नहीं किया जाता।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- वित्तीय परिसंपत्तियों (शेयर, ऋणपत्र आदि) का क्रय-विक्रय राष्ट्रीय आय से बाहर रखा जाता है, क्योंकि ऐसी क्रियाओं से चालू उत्पादन में कोई वृद्धि नहीं होती।
- राष्ट्रीय आय में हस्तान्तरण भुगतान (पेंशन, भत्ता, स्कॉलरशिप आदि) सम्मिलित नहीं किया जाता है।

❒ राष्ट्रीय आय के आकलन की विधियां

किसी भी अर्थव्यवस्था में किसी अवधि में कुल उत्पादन का योग या उत्पादन क्रिया में लगे हुए साधनों को प्राप्त का योग या उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं पर होने वाले व्यय का योग ही राष्ट्रीय आय है। इसीलिए राष्ट्रीय आय के आकलन की 3 विधियां है –

राष्ट्रीय आय के आकलन की विधियां

उत्पादन विधि (मूल्यवर्धन विधि)	आय विधि	व्यय विधि

◆ उत्पादन विधि (Production Method)

उत्पादन विधि अर्थव्यवस्था के कुल उत्पादन में उत्पादक इकाइयों के अंशदान की माप को प्रस्तुत करता है। इस प्रकार यह सभी इकाइयों का उत्पादन में मूल्यवर्धन है। इसमें माध्यमिक लागतों को सम्मिलित नहीं किया जाता है। उत्पादन विधि की गणना करते समय हमें निम्नलिखित बातों का ध्यान देना चाहिए, जिससे दोहरी गणना न हो –

1) उत्पादित वस्तुएं उसी वर्ष की हो, जिस वर्ष के राष्ट्रीय उत्पाद की हम गणना कर रहे हैं।

2) उत्पादन प्रक्रिया में प्रयुक्त माध्यमिक वस्तुओं का स्पष्ट अनुमान होना चाहिए।

3) वर्ष के दौरान निर्गत शेयर तथा ऋणपत्र (Debenture) उत्पादन के अन्तर्गत सम्मिलित नहीं किए जाते।

4) किसी उत्पादक इकाई के पहले रखे गए स्टॉक मूल्य में वृद्धि को सम्मिलिति नहीं किया जाता।

5) गृहस्थ द्वारा अवकाश में अपने बगीचे में उत्पादित फल तथा सब्जियां राष्ट्रीय उत्पादव में सम्मिलित नहीं होगी।

◆ आय विधि (Income Method)

उत्पादक इकाइयों में जो आय जनित होती है, वह उत्पादन के साधनों के संयुक्त प्रयास के परिणाम होती है। यहां आय वास्तव उत्पादन क्रिया में लगे सभी साधनों भूमि, श्रम, पूंजी तथा साहस के प्रयोग का प्रतिफल होती है, जो इन्हें क्रमशः लगान, मजदूरी, ब्याज तथा लाभ के रूप में मिलती है। आय विधि के अन्तर्गत हम निम्नलिखित 4 साधन आय को जोड़ते हैं –

1) कर्मचारियों की क्षतिपूरक आय, जिसमें – **a)** मजदूरी तथा वेतन (W) एवं **b)** नियोक्ता द्वारा सामाजिक अंशदान का मूल्य सम्मिलित होता है।

2) लगान (R) तथा रॉयल्टी। **3)** ब्याज (i)। **4)** लाभ (P)।

राष्ट्रीय आय = कर्मचारियों की क्षतिपूरक आय + लगान तथा रॉयल्टी + ब्याज + लाभ

◆ व्यय विधि (Expenditure Method)

राष्ट्रीय आय को आर्थिक सीमा के भीतर उत्पादित अंतिम वस्तुओं तथा सेवाओं के ऊपर किए गए कुल व्यय के रूप में भी देखा जा सकता है। किसी वर्ष में उत्पादित अंतिम वस्तुओं को मुख्यतः 2 वर्गों में विभाजित कर सकते हैं – उपभोग वस्तुएं और पूंजीगत वस्तुएं। इन दोनों प्रकार की वस्तुओं पर व्यय करने वाली इकाइयों के व्यय का योग ही राष्ट्रीय आय है। इन व्ययों का हम 4 वर्गों में विभाजित कर सकते हैं –

1) निजी अंतिम उपभोग व्यय (C)। **2)** सरकारी अंतिम उपभोग व्यय (G)।

3) सकल घरेलू पूंजी निर्माण या विनियोग व्यय (I)। **4)** निवल विदेशी निवेश (X-M)।

राष्ट्रीय आय = C + G + I + (X - M)

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

तीनों विधियों की तुलना

उत्पाद विधि	आय विधि	व्यय विधि
सभी निवासी उत्पादक इकाइयों द्वारा कुल मूल्यवर्धन का योग।	W + R + i + P	C + G + I + (X - M)
राष्ट्रीय आय	राष्ट्रीय आय	राष्ट्रीय आय

❐ भारत में राष्ट्रीय आय के अनुमान एवं प्रवृत्तियां

◆ अनुमान

भारत में राष्ट्रीय आय के अनुमान के संबंध में उत्पादन, आय तथा व्यय विधि का मिश्रित प्रयोग किया जाता है। प्राथमिक क्षेत्र से प्राप्त लगभग सम्पूर्ण आय को उत्पादन विधि के द्वारा मापा जाता है। वहीं विनिर्माण, गैस तथा जल आपूर्ति, व्यापार होटल तथा रेस्ट्रां, यातायात, बैंकिंग, बीमा, सुरक्षा, लोक प्रशासन आदि को आय विधि के द्वारा मापा जाता है। पक्का निर्माण तथा पक्का पूंजीगत उत्पादन व्यय विधि द्वारा मापा जाता है। विदेशों से शुद्ध साधन आय संबंधी आंकड़े रिजर्व बैंक द्वारा प्रकाशित तथा तैयार किए जाते हैं।

◆ प्रवृत्तियां

आधार वर्ष (1999-2000 की कीमतों पर)	शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद (NNP)	प्रतिव्यक्ति आय (PCI)
1950-51 से 1980-81	3.5 प्रतिशत (औसत वार्षिक)	1.29 प्रतिशत (औसत वार्षिक)
1980-81 से 1990-91	5.2 प्रतिशत	3 प्रतिशत
1990-91 से 2000-01	5.5 प्रतिशत	3.4 प्रतिशत
2001-02 से 2004-05	6.4 प्रतिशत	4.7 प्रतिशत
2004-05 से 2011-12	8.2 प्रतिशत	6.7 प्रतिशत
2011-12 से 2014-15	10.8 प्रतिशत	7.1 प्रतिशत
2014-15 से 2015-16 (अनुमानित)	8.7 प्रतिशत	7.3 प्रतिशत

विगत वर्षों में भारत की राष्ट्रीय आय में विभिन्न क्षेत्रों का प्रतिशत वितरण इस प्रकार रहा –

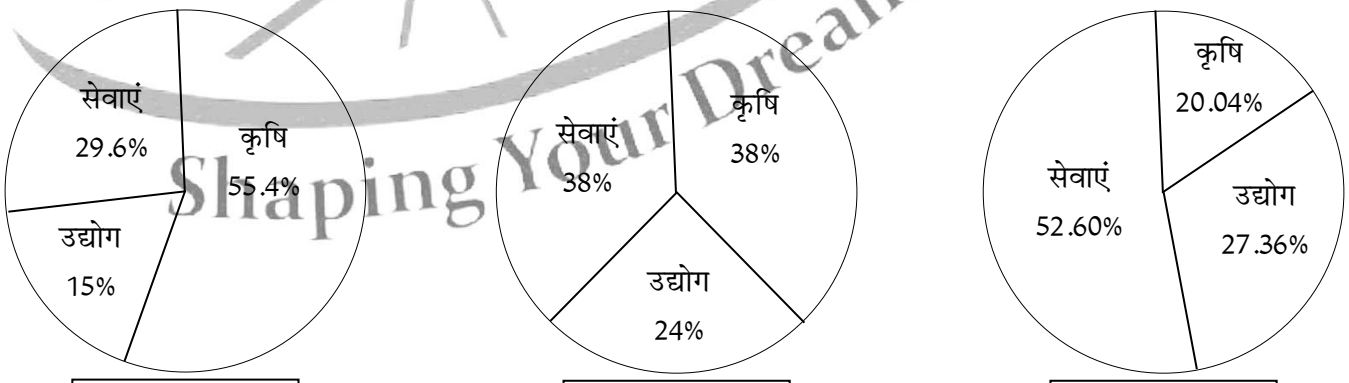

अवलोकन से स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा घट रहा है, जबकि उद्योग लगभग स्थिर बना हुआ है। वहीं अर्थव्यवस्था का मुख्य इंजन सेवा क्षेत्र (52.60 प्रतिशत) बनकर उभरा है। राष्ट्रीय आय का यह संक्रमण औद्योगिक क्रांति के उन देशों से भिन्न रहा है, जहां संक्रमण कृषि ⇨ उद्योग ⇨ सेवा का था, वहीं भारत में यह संक्रमण सीधा कृषि से सेवा क्षेत्र में हुआ है। इस कारण भारतीय अर्थव्यवस्था को कई समस्याओं का सामना करना भी पड़ रहा है। आर्थर लुइस के अनुसार उद्योग क्षेत्र कृषि से छूटी श्रम शक्ति के लिए शरणार्थी गृह (Rescue Home) की तरह कार्य करता है। भारत में यह हो नहीं पाया एवं कृषि क्षेत्र की प्रछन्न श्रम शक्ति उद्योगों द्वारा सोखी (Absorb) नहीं जा सकी, जो व्यापक बेरोजगारी, गरीबी, असमानता का महत्वपूर्ण कारण है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

नई सरकार के आगमन पर CSO ने राष्ट्रीय आय के लेखांकन में कुछ महत्वपूर्ण बदलाव किए हैं, जो इस प्रकार हैं –

1) आधार वर्ष का 2004-05 से 2011-12 किया जाना।

2) GDP को साधन लागत के स्थान पर बाजार मूल्यों पर मापा जाना, जैसा कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचलन में है।

इन दोनों के सम्मिलित प्रभाव के कारण GDP की संवृद्धि दर एवं निरपेक्ष आंकड़ों में वृद्धि दर्ज की गई है तथा GDP के क्षेत्रवार वितरण पर निम्नलिखित प्रभाव पड़ा –

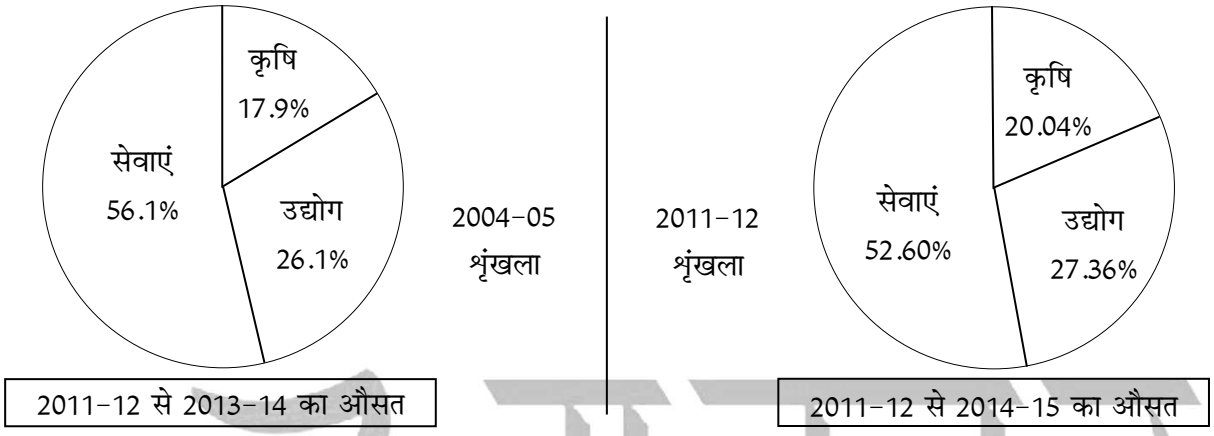

- **वर्तमान में राष्ट्रीय एवं प्रतिव्यक्ति आय**

2015-16 में शुद्ध राष्ट्रीय आय (Net National Income - National Income at Current Prices) 119.62 लाख करोड़ रुपए अनुमानित है, जबकि 2014 में यह 110.8 लाख करोड़ रुपए रही है। इस प्रकार चालू कीमतों पर शुद्ध राष्ट्रीय आय में 8.7 प्रतिशत की वृद्धि 2015-16 में अनुमानित है, जबकि 2014-15 में यह वृद्धि 10.8 प्रतिशत रही थी। चालू मूल्यों पर प्रतिव्यक्ति आय 2015-16 में 93,231 रहने का सीएसओ का अग्रिम अनुमान है, जबकि 2014-15 में यह 86,879 थी। इस प्रकार चालू मूल्यों पर प्रतिव्यक्ति आय में 7.3 प्रतिशत की वृद्धि 2015-16 में होने का सीएसओ का अग्रिम अनुमान है।

उपरोक्त आय अवलोकन के अतिरिक्त लेखांकन की प्रक्रिया को कुछ अन्य क्षेत्रों के संदर्भ में भी समझा जा सकता है –

1) हरित या पर्यावरणीय लेखांकन (Green or Environmental Accounting) – किसी राष्ट्र के आर्थिक विकास की प्रक्रिया में आर्थिख संवृद्धि (Economic Growth) को अधिकतम करने के चलते प्राकृतिक संसाधनों के अपक्षया या ह्रास (Degradation) के कारण जो पर्यावरणीय निम्नीकरण (Environmental Downfall) होता है, उसे राष्ट्रीय आय के आकलन में शामिल नहीं किया जाता है। अत: राष्ट्रीय आय की गणना में पूर्ववर्ती कारकों (राष्ट्रीय आय में शामिल परम्परागत कारक) के साथ-साथ पर्यावरणीय कारकों (Environmental Factors) के ह्रास की लागत को सम्मिलित करने की संकल्पना को हरित लेखांकन कहा जाता है।

सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product - GDP) का परम्परागत मापन चूंकि उन्हीं क्रियाकलापों तक सीमित रहता है, जो बाजार के माध्यम से होते हैं, इसलिए यह पर्यावरण की रक्षा के लिए आंशिक चित्र ही प्रस्तुत करता है। अनेक पर्यावरणीय सम्पत्तियां विशेष रूप से वे जो प्रदुषण (Pollution) तथा अवशिष्ट (Waste) के लिए सिंक (Sink) का काम करती है तथा पर्यावरण के लिए सहायक होती है, बाजार व्यवहार में नहीं आती। इसलिए ये सकल घरेलू उत्पाद की गणना में भी नहीं आती। यही कारण है कि पर्यावरणीय लेखांकन या हरित लेखांकन में सतत् सकल घरेलू उत्पाद (Sustaing GDP) की बात की जाती है। विश्व बैंक (World Bank) के पर्यावरणीय पोषक विकासखण्ड (Environmental Nurturing Development Block) ने किसी देश के संपत्ति के आकलन में एक नया सूचकांक विकसित किया जाता है, जिसे हरित सूचकांक (Green Index) कहा जाता है। इसके अन्तर्गत उत्पादन, प्राकृतिक सम्पदा तथा मानव संसाधन को अलग-अलग मान (Values) प्रदान किए जाते हैं और इस आधार पर प्रत्येक देश की प्रतिव्यक्ति आय (Per Capital Incom - PCI) ज्ञात की जाती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

2) **सामाजिक-आर्थिक लेखांकन (Social-Economic Accounting)** - किसी संस्था, उद्यम, निगम अथवा राष्ट्र के आर्थिक लेखांकन में सामाजिक अवयवों/घटकों (Social Components) तथा मानव कल्याण (Human Welfar) एवं सामाजिक विकास (Social Development) की प्रगति के विवरण या लेखे-जोखे को शामिल करना, सामाजिक-आर्थिक लेखांकन (Social-Economic Accounting) की संकल्पना के अन्तर्गत आता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ (United Nations) ने 2003 में पर्यावरणीय तथा आर्थिक लेखांकन को समन्वित करने का एक प्रारूप तैयार किया। भारत में भी इसे पूर्ण विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है। भारतीय सांख्यिकीविदों (Statisticians) का यह विश्वास है कि भारत का हरित सकल घरेलू उत्पाद (Green GDP) वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद (Real GDP) से बहुत कम होगा, क्योंकि भारत का आर्थिक विकास (Economic Development) अधिक संसाधन-गहन (Resource-Oriented) है। उल्लेखनीय है कि आर्थिक विकास की प्रक्रिया में संसाधनों का क्षय (Dagradation of Resources) होता है और यह क्षय वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद में अवस्फीत (Deflator) का कार्य करेगा, जिससे कि हरित सकल घरेलू उत्पाद ज्ञात किया जा सके।

❐ हिन्दू वृद्धि दर (Hindu Rate of Growth)

इस आवधारणा के प्रतिपादक प्रो. राजकृष्ण थे। स्वाधीनता के प्रथम 3 दशक (50-80) के दौरान भारत (समाजवादी अर्थव्यवस्था) की वास्तविक आर्थिक वृद्धि की दर 3.5 प्रतिशत के आसपास थी, जिसे प्रो. राजकृष्ण ने व्यंग स्वरूप हिन्दू वृद्धि दर कहा है। 7वीं पंचवर्षीय योजना (1985-1990) के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था ने हिन्दू वृद्धि दर को पार कर लिया।

❐ केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (Central Statistical Organisation)

केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (CSO) की स्थापना 2 मई, 1951 ई. को की गई थी। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में स्थित है, जो सांख्यिकी एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय का एक भाग है। यह अपना वार्षिक प्रकाशन **राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी (NSA)** के नाम से जारी करता है। यह देश में सांख्यिकी कार्यकलापों का समन्वय करता है तथा सांख्यिकी मानकों का विकास और उसका अनुरक्षण करता है। इसके कार्यकलापों में राष्ट्रीय लेखा के संकलन, औद्योगिक उत्पादन सूचकांक संकलन, उद्योगों का वार्षिक सर्वेक्षण, आर्थिक गणना का आयोजन तथा उपभोक्ता मूल्य सूचकांक का संकलन भी शामिल है। भारत में राष्ट्रीय आय का आकलन CSO द्वारा किया जाता है। CSO ने राष्ट्रीय आय से सम्बन्धित आंकड़ों के लिए आधार वर्ष 2004-05 से परिवर्तित कर 2011-12 कर दिया है।

❐ राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (National Sample Survey Organisation)

एक बेहतर नियोजन के लिए राष्ट्र के विविध क्षेत्रों (सामाजिक-आर्थिक) के आंकड़ों का संग्रह होना अतिआवश्यक है। इस उद्देश्य हेतु भारत सरकार ने प्रो. पी. सी. महालनोबिस की अध्यक्षता में राष्ट्रीय आय समिति का गठन किया गया, जिसकी अनुशंसा पर 1950 में राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण (NSS) की स्थापना की गई। 1970 में इसका पुनर्गठन कर राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (NSSO) की स्थापना की गई, जो वर्तमान में **राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण कार्यालय (National Sample Survey Office)** के नाम से जाना जाता है। यह सांख्यिकी एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय के अधीन है। वर्तमान में NSSO देशव्यापी आधार पर नमूना सर्वेक्षणों के माध्यम से समाजिक-आर्थिक (Socio-Economic Topics), औद्योगिक सांख्यिकीय (Industrial Statistics), कृषि सांख्यिकी (Agricultural Statistics) और खुदरा कीमतों (Retail Prices) से संबंधित जानकारी एकत्रित करता है।

❐ राष्ट्रीय सांख्यिकीय आयोग (National Statistical Commission)

देश की सांख्यिकीय प्रणाली के समस्त कार्य क्षेत्र समीक्षा हेतु भारत सरकार द्वारा जनवरी 2000 में डॉ. सी. रंगराजन की अध्यक्षता में एक आयोग गठित किया गया। आयोग की अनुशंसा पर सरकार ने 12 जुलाई, 2006 को राष्ट्रीय सांख्यिकीय आयोग की स्थापना की। इसके स्थापना का उद्देश्य डेटा के संग्रह के संबंध में देश में सांख्यिकीय एजेंसियों को आ रही समस्याओं को कम करना है। वर्तमान में इसके अध्यक्ष डॉ. प्रणव सेन हैं। यह सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के अधीन कार्यरत है।

केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन (CSO) और राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO) को केन्द्र तथा राज्य सरकार के विभागों से डेटा एकत्र करने में कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अत: NSC को एक **स्वायत्त निकाय के रूप में** स्थापित किया गया

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

है, ताकि यह अधिक विश्वसनीय तथा निष्पक्ष डेटा का संग्रह सुनिश्चित कर सके। साथ ही सभी एजेंसियों में समन्वय भी स्थापित कर सके। उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय सांख्यिकीय आयोग की स्थापना के बाद NSSO का महत्व कम हो गया है। राष्ट्रीय सांख्यिकीय आयोग के समग्र दिशा के तहत राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय (NSSO) कार्य करता है।

❒ भारतीय सांख्यिकीय संस्थान (Indian Statistical Institute)

भारतीय सांख्यिकीय संस्थान (ISI) की स्थापना 17 दिसम्बर, 1931 को कोलकत्ता में प्रो. पी. सी. महालनोबिस द्वारा की गई थी, जो वर्तमान में सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय के अधीन कार्यरत है। इसका मुख्य कार्य सांख्यिकी एवं संबंधित विषयों में शिक्षण एवं अनुसंधान करना है। यह कोलकता में स्थित है।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

आर्थिक विकास
ECONOMIC DEVELOPMENT

20वीं शताब्दी के मध्य तक अर्थशास्त्र में आर्थिक विकास को आर्थिक संवृद्धि के अर्थ में ही प्रयोग किया जाता था, किन्तु अब इन दोनों संकल्पनाओं में अन्तर किया जाता है। आर्थिक संवृद्धि को प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि के रूप में मापा जाता है, जबिक आर्थिक विकास की अवधारणा आर्थिक वृद्धि से अधिक व्यापक है। यह एक दीर्घकालीन (Longterm), सतत् (Countinuous), गत्यात्मक (Dynamic) तथा बहुआयामी (Multidimensional) प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में **आर्थिक व गैर-आर्थिक** दोनों ही प्रकार के तत्वों का अध्ययन किया जाता है।

आर्थिक विकास से आशय अर्थव्यवस्था के मात्रात्मक (Quantitative) एवं गुणात्मक (Qualatative) परिवर्तनों से है। यह परिवर्तन सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में सामाजिक समानता के साथ आर्थिक वृद्धि को ही आर्थिक विकास कहते हैं। यह तभी संभव है, जब आर्थिक वृद्धि के लाभों का अपेक्षाकृत समानतापूर्ण वितरण हो तथा जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) में सुधार हो।

अतः आर्थिक विकास = आर्थिक वृद्धि + गुणात्मक परिवर्तन
Development = Growth + Change

वर्तमान समय में आर्थिक विकास के संदर्भ में अर्थशास्त्र में 2 मुख्य अवधारणाएं पाई जाती हैं, जो निम्नलिखित है -

- **परम्परागत विचारधारा (Traditional Approach)**

इस विचारधारा में आर्थिक विकास एक ऐसी स्थिति है, जिसमें सकल घरेलू उत्पाद (GDP) 5 से 7 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ता रहे। साथ ही उत्पादन और रोजगार संरचना में इस प्रकार परिवर्तन हो कि उसमें कृषि का हिस्सा कम होता जाए और विनिर्माण तथा तृतीयक क्षेत्र का हिस्सा बढ़ता जाए। इसकी मान्यता है कि यदि सकल घरेलू उत्पाद तथा प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि हो, तो गरीबी, असमानता, बेरोजगारी अपने आप कम हो जाएगी। दूसरे शब्दों में सकल घरेलू उत्पाद और प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि का लाभ धीरे-धीरे रिसकर अन्य क्षेत्रों को प्रभावित करेंगे। इसे संवृद्धि का रिसाव प्रभाव (Trickle Down Effect) कहा जाता है।

- **आधुनिक विचारधारा (Modern Approach)**

20वीं शताब्दी के छठे व सातवें दशक तक विकासशील देशों की लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या को आर्थिक संवृद्धि से कोई लाभ नहीं हुआ। अतः अर्थशास्त्रियों ने परम्परागत विकास विचारधारा को तिलांजलि दे दी। 8वें दशक में कुछ अर्थशास्त्री, जैसे - चार्ल्स किंडलबर्गर, ब्रूस हेरिक, डडले सियर्स, मेहबूब-उल-हक, अर्मत्य सेन आदि ने आर्थिक विकास की अवधारणा को पुनः परिभाषित किया और आर्थिक विकास का मुख्य उद्देश्य गरीबी, असमानता और बेरोजगारी का निवारण रखा। इस दौर में पुनर्वितरण के साथ संवृद्धि (Re-distribution With Growth) का नारा दिया गया। डडले सियर्स ने आर्थिक विकास के अर्थ के विषय में कुछ बुनियादी सवाल उठाए। उनका मानना है कि किसी भी देश में आर्थिक विकास की चर्चा करते समय इन प्रश्नों पर ध्यान देना आवश्यक है -

1) क्या गरीबी के स्तर में कमी हो रही है? **2)** क्या बेरोजगारी का स्तर कम हो रहा है?

3) क्या अर्थव्यवस्था में असमानताएं कम हो रही हैं?

यदि इन प्रश्नों का उत्तर सकारात्मक है, तो निश्चय ही अर्थव्यवस्था में आर्थिक विकास हुआ है। किन्तु यदि इनमें से एक भी प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है, तो इसे आर्थिक विकास कहना अनुपयुक्त होगा। चाहे फिर प्रतिव्यक्ति आय दुगनी ही क्यों न हो जाए।

मेहबूब-उल-हक जैसे अर्थशास्त्रियों ने आर्थिक विकास को गरीबी के विरुद्ध लड़ाई के रूप में परिभाषित करते हैं। चाहे वह गरीबी किसी भी रूप में हो। वहीं अर्मत्य सेन आर्थिक विकास को अधिकारिता (Entitlement) तथा क्षमता (Capabilities) के विस्तार के रूप में परिभाषित करते हैं। जहां अधिकारिता का आशय जीवन कौशल तथा आत्म सम्मान (Self Steem) से संबंधित है, वहीं क्षमता का आशय स्वतंत्रता प्रदान करने से संबंधित है। स्वतंत्रता (Liberty), अज्ञानता (Ignorance) तथा गंदगी से मुक्ति है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

आर्थिक विकास के तत्व
Factors of Economic Development

आर्थिक विकास के तत्वों का आर्थिक एवं गैर-आर्थिक तत्वों के रूप में वर्गीकरण किया जाता है। रेगनर नर्क्स गैर-आर्थिक तत्वों पर अधिक जोर देते हैं। उनके अनुसार उच्च मानव विकास एवं कौशल, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि आर्थिक विकास के अधिक महत्वपूर्ण तत्व है। वर्गीकरण इस प्रकार है -

आर्थिक विकास के तत्व

आर्थिक तत्व	गैर-आर्थिक तत्व
- प्राकृतिक संसाधन	- मानव विकास
- शक्ति एवं ऊर्जा	- सांस्कृतिक एवं सामाजिक ढांचा
- जनसंख्या एवं उसका चरित्र	- राजनीतिक व्यवस्था एवं स्थिरता
- परिवहन एवं संचार	- विज्ञान एवं तकनीकी
- पूंजी निर्माण	

❒ आर्थिक तत्व (Economic Factors)

◆ प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources)

किसी राष्ट्र में प्राकृतिक संसाधन की उपलब्धता एवं दोहन आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण घटक हैं। यहां उपलब्धता गुणात्मक व मात्रात्मक दोनों होना आवश्यक है। ये प्राकृतिक संसाधन ही होते हैं, जिनसे उपलब्ध कच्चे माल पर अन्य औद्योगिक उत्पादन निर्भर होते हैं। प्राकृतिक संसाधन अन्य देशों पर निर्भरता घटाते हैं। किन्तु प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता होना ही आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त नहीं है। उसके दोहन के लिए तकनीक विशेष का ज्ञान होना भी आवश्यक है। अफ्रीका के 38 राष्ट्र प्राकृतिक संसाधन में धनी हैं, किन्तु दोहन के अभाव में वे सभी विकास की अत्यन्त पिछड़ी अवस्था में है। वहीं जापान, जहां प्राकृतिक संसाधन नाममात्र हैं, विकास की उच्च अवस्था में है।

1980 के दशक में एक सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ, नोबेल प्राप्तकर्ता जोसेफ स्टिग्लिज इसके समर्थक रहे हैं। इस मान्यता के अनुसार विश्व के प्राकृतिक संसाधन से धनी देश अल्पविकसित रह गए हैं। इस मान्यता के अनुसार प्राकृतिक संसाधन राष्ट्र के लिए बीमारी है न की लाभ। अफ्रीकी राष्ट्रों के संदर्भ में विशेष रूप से यह सत्य है।

भारत के संदर्भ में भी झारखण्ड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश आदि राज्य बीमार रह गए। मध्य प्रदेश में भी प्राकृतिक संसाधन से प्रचूर पूर्वी मध्य प्रदेश पश्चिमी मध्य प्रदेश की अपेक्षा अल्पविकसित रह गया है। समस्त विकास पश्चिमी मध्य प्रदेश में संकेन्द्रीत है। इस सिद्धान्त का सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता। अभी इस क्षेत्र में और अधिक अनुसंधान होना बाकी है। तमाम मतों के बावजूद यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि मध्यपूर्व के देशों की तेल के अभाव में, कनाडा की यूरेनियम आदि के अभाव में वह स्थिति नहीं होती, जो आज है। प्राकृतिक संसाधनों में नदियों, समुद्री तट रेखा, कृषि भूमि आदि का भी अपना महत्व है।

◆ शक्ति एवं ऊर्जा (Power & Energy)

राष्ट्र की आर्थिक गतिविधियों एवं दैनिक जनजीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए शक्ति एवं ऊर्जा अत्यन्त आवश्यक है। इसमें बिजली, कोयला, यूरेनियम, पेट्रोलियम संसाधन आदि सम्मिलित हैं। आज के संदर्भ में यातायात परिवहन के साधनों मशीनों, आदि को चलाने में पेट्रोलियम महत्वपूर्ण है। बिजली के बिना जीवन की कल्पना करना भी मुश्किल है। परमाणु क्रांति के पश्चात् यूरेनियम का स्थान भी महत्वपूर्ण हो गया है। परमाणु ऊर्जा से विद्युत बनाने की होड़ मची हुई है। ऊर्जा क्षेत्र का एक नया आविष्कार शैल गैस है, जिसकी सतत खोज जारी है। पर्यावरण ह्रास के चलते ऊर्जा के नवीनकरणीय एवं गैर-परम्परागत स्रोतों की मांग बढ़ी है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **जनसंख्या एवं उसका चरित्र (Population & his Characteristics)**

किसी राष्ट्र की आर्थिक विकास के लिए जनसंख्या का अनुकूलतम आकार (Optimum Size) क्या होना चाहिए? यह अर्थशास्त्रीय एवं जनसांख्यिकीयविदों के मध्य विवाद का विषय रहा है। मालथस जो कि जनसंख्या सिद्धान्त के निराशावादी दृष्टिकोण के प्रतिपादक रहे हैं, प्रत्येक परिस्थिति में अधिक जनसंख्या को गलत मानते हैं। एक अन्य जनसांख्यिकीयविद डाल्टन अपने अनुकूलतम जनसंख्या सिद्धान्त में कहते हैं कि 'वह जनसंख्या अनुकूलतम है, जिससे प्रतिव्यक्ति आय अधिकतम हो', अर्थात् – जनसंख्या के इस अनुकूलतम स्तर (Thrash Hold Level) से कम होने पर संसाधनों का अल्पदोहन रह जाएगा एवं इस स्तर से अधिक होने पर यह राष्ट्रीय विकास को अवरोधित करेगी। साथ ही जनसंख्या का चरित्र भी अतिमहत्वपूर्ण है। यह लोग ही होते हैं, जिन पर राष्ट्र का निर्माण होता है। एक प्रयत्नशील, नवोन्मेष से पूर्ण जनसंख्या राष्ट्र का विकास करती है तथा एक आलसी जनसंख्या राष्ट्र पर बोझ बन जाती है।

- **परिवहन एवं संचार (Transportation & Communication)**

कोई राष्ट्र प्राकृतिक संसाधनों में कितना ही धनी क्यों न हो? जनसंख्या का आकार, चरित्र कितना ही उत्तम क्यों न हो? परिवहन एवं संचार के अभाव में राष्ट्रीय विकास को प्राप्त कर पाना मुश्किल है। सड़कों का व्यापक जाल, रेल्वे नेटवर्क, जहाजरानी एवं नदी जल मार्ग अतिमहत्वपूर्ण है। संचार के आधुनिक युग में तीव्रतम संचार के साधनों का होना भी आवश्यक है। साइबर युद्ध के इस दौर में संचार उपलब्धता उच्च मानव विकास से जोड़कर देखी जाती है।

- **पूंजी निर्माण (Capital Formation)**

यह सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक तत्व है। यह क्लासिकल अर्थशास्त्रियों का प्रिय विषय रहा है। एडम स्मिथ, रिकार्डो इसको आर्थिक वृद्धि का सबसे महत्वपूर्ण अस्त्र मानते हैं। ज्ञातत्व है कि पूंजी निर्माण से आशय 'ऐसे विनियोग से है, जो उपभोग के दौरान समाप्त नहीं होते हैं एवं उत्पादन को बढ़ाते हैं'। पूंजी निर्माण के लिए बचत एवं निवेश जैसे तत्व अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाते हैं। जब राष्ट्रीय आय का एक बड़ा हिस्सा बचाकर पुनः निवेश किया जाता है, तो आर्थिक विकास की गति तेज हो जाती है। यदि निवेश के स्तर पर बचत कम रह जाती है ($S < I$), तो विदेशी ऋण, विदेश सहायता एवं विदेशी निवेश की सहायता ली जाती है। डॉ. मनमोहन सिंह प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को सर्वोत्तम मानते हैं। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में पूंजी के साथ-साथ तकनीक भी आती है।

1970 के दशक में जापान ने बचत के स्तर को जीडीपी के 40 प्रतिशत तक पहुंचा दिया एवं विकास की उच्च अवस्था प्राप्त की। हैरॉल्ड एवं डोमर का मॉडल (जो I^{st} FYP का आधार था) पूंजी निर्माण पर बल देता है। भारत ने इस ओर प्रयास किया है, किन्तु संभावना अभी ओर बाकी है।

कई अल्पविकसित देश पूंजी निर्माण की समस्या से ग्रसित रहते हैं। रेगनर नर्क्स इस पर विस्तार से चर्चा करते हुए मांग एवं पूर्ति दोनों पक्षों को उत्तरदायी ठहराते हैं। मांग पक्ष की ओर से समस्या यह है कि अप्लविकसित देशों में बाजार का आकार छोटा होता है, जो निवेश क्रिया को हतोत्साहित करता है। पूर्ति पक्ष की ओर से समस्या यह है कि प्रतिव्यक्ति आय कम होने से समस्त आय उपभोग कर ली जाती है एवं बचत के लिए कुछ भी नहीं बचता। नर्क्स इसे 'निम्न आय का फंदा' (Low Level Income Pash) कहते हैं।

❐ गैर-आर्थिक तत्व

- **मानव विकास** (Human Development)

आर्थिक विकास में जनसंख्या एक महत्वपूर्ण कारक है। मानव से ही उत्पादन कार्य के लिए श्रम की उपलब्धि होती है। यदि किसी देश में श्रम शक्ति कुशल होने के साथ-साथ कार्यक्षम भी है तो उसकी उत्पादन सामर्थ्य निश्चित ही अधिक होगी। दुर्बल, अशिक्षित, अकुशल और रूढ़ियों फंसे हुए व्यक्तियों की उत्पादकता कम होती है। 1990 के बाद एचडीआई के आगमन से मानव विकास आर्थिक विकास के केन्द्र में रहा है। गरीबी, कुपोषण, बेरोजगारी, असमानता को हटाना ही आज आर्थिक विकास महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है।

- **सांस्कृतिक एवं सामाजिक ढांचा (Culutral & Social Structure)**

किसी राष्ट्र के सांस्कृतिक एवं सामाजिक ढांचे का उनके उत्पादन, उपभोग, बचत प्रवृत्ति, जीवन निर्वाह का तरीका आदि पर प्रभाव पड़ता है। यह सभी तत्व आर्थिक विकास के भी महत्वपूर्ण कारक है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **राजनीतिक व्यवस्था एवं स्थिरता (Political System & Stablity)**

आर्थिक विकास के लिए किसी भी राष्ट्र की राजनीतिक व्यवस्था और स्थिरता महत्वपूर्ण तत्व है। यद्यपि इस विषय में विद्वानों के मध्य मतभेद है कि कौन सी राजनीतिक व्यवस्था में विकास अधिक संभव है, किन्तु प्राय: यह देखा गया है कि लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था में आर्थिक विकास की ज्यादा संभावनाएं हैं।

लोकतंत्र में जनता को विभिन्न अधिकारों के माध्यम से अपने सर्वांगिण विकास का अवसर मिलता है, जो उसे एक बेहतर मानव संसाधन बनाता है। साथ ही आर्थिक विकास के लिए देश में राजनीतिक स्थिरता का होना आवश्यक है। आर्थिक विकास एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है, अत: एक स्थिर सरकार ही बेहतर व त्वरित निर्णय ले सकती है। स्थिर सरकार ही निवेशकों को आकर्षित कर सकती है।

- **विज्ञान एवं तकनीकी (Sicence & Technology)**

विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान के अभाव में राष्ट्र के संसाधन बेकार पड़े रह जाते हैं। साथ ही इनका अभाव दूसरे राष्ट्र पर निर्भर होने के लिए विवश कर देता है। विश्व के कई राष्ट्र विज्ञान एवं तकनीक के अभाव में अल्पविकसित रह गए हैं एवं विकसित राष्ट्रों की निर्भरता एवं दबाव का दंश झेल रहे हैं। विज्ञान एवं तकनीक आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देते हैं। कम लागत पर अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है, जो कि उत्पादन का गोल्डन रूल होता है। जैसे-जैसे वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति होती है, वैसे-वैसे उत्पादकों को अधिक उत्पादकता वाले तकनीकों का ज्ञान होता है। जिससे उत्पादन का स्तर तेजी से बढ़ता है।

- **भ्रष्टाचार (Corruption)**

अल्पविकसित तथा विकासशील देशों में व्याप्त भ्रष्टाचार का इन देशों के आर्थिक विकास पर व्यापाक व प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। व्यापाक भ्रष्टाचार के वातावरण में आर्थिक विकास की गति अधिक तेज नहीं हो सकती है।

- **विकास के लिए आकांक्षा (Desire to Develop)**

विकास की प्रक्रिया को मशीनी प्रक्रिया के रूप में नहीं देखा जा सकता है। किसी भी देश में आर्थिक विकास की प्रक्रिया की गति उस देश के लोगों की विकास के लिए आकांक्षा पर निर्भर करती है। यदि चेतना का स्तर नीचा है और जनसाधारण ने गरीबी को अपना भाग्य मान लिया है, तो आर्थिक विकास की अधिक संभावना नहीं होगी। स्पष्ट है कि देश में विकास के लिए जनता में आकांक्षा होनी चाहिए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि आर्थिक विकास के लिए विकसित देशों की तरह ही विकासशील व अल्पविकसित देशों में दृढ़ भौतिक आधार का निर्माण करना आवश्यक तो है ही, साथ ही उन्हें राजनीतिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक कारकों पर भी ध्यान देना होगा। मानवीय तत्वों की उपेक्षा कर विकास के किसी भी कार्यक्रम को सफल नहीं बनाया जा सकता है।

Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

आर्थिक विकास के माप (Measurement of Economic Development)

प्रतिव्यक्ति आय को आर्थिक संवृद्धि के माप के रूप में स्वीकार किया गया है, किन्तु आर्थिक विकास का मापन एक जटिल प्रक्रिया है। इसका कारण यह है कि विभिन्न अर्थशास्त्री आर्थिक विकास को अलग-अलग ढंग से परिभाषित करते हैं। चूंकि इसमें अर्थव्यवस्था के मात्रात्मक परिवर्तन के साथ गुणात्मक परिवर्तन पर बल दिया जाता है। अत: आर्थिक विकास के संदर्भ में किन गुणात्मक परिवर्तनों पर अधिक बल दिया जाए, इस विषय पर अर्थशास्त्रियों में मतभेद हैं। 70 के दशक के बाद विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने विभिन्न मापों का विकास किया, जो निम्नलिखित हैं -

1) **आधारभूत आवश्यकता प्रत्यागम (Basic Needs Approach) -** इसका प्रतिपादन 1970 में विश्व बैंक ने किया था। इसमें मानव विकास के मापन के रूप में आधारभूत आवश्यकताओं के 6 सामाजिक सूचकांकों को शामिल किया गया था।

मूल आवश्यकता	सूचकांक
शिक्षा	प्राथमिक शिक्षा
स्वास्थ	जीवन प्रत्याशा
खाद्य	प्रतिव्यक्ति कैलोरी
स्वच्छता	बाल मृत्यु दर तथा स्वच्छता प्राप्त जनसंख्या का प्रतिशत
जल आपूर्ति	स्वच्छ जलापूर्ति प्राप्त जनसंख्या प्रतिशत
आवास	कैसा है या कोई नहीं

2) **जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचकांक (Physical Quality of Life Index)** - इसे 1979 में मारिश डी. मारिश नामक अर्थशास्त्री ने विकसित कर 23 विकसित एवं विकासशील देशों के सम्बन्ध का अध्ययन किया। उन्होंने 3 संकेतकों - जीवन प्रत्याशा (Life Expectancy - **LE**), शिशु मृत्यु दर (Infant Mortality Rate - **IM**) तथा साक्षरता (Basic Literacy - **BL**) को मिलाकर PQLI का निर्माण किया। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि प्रतिव्यक्ति ऊँची GNP इस बात का आश्वासन नहीं देती की विकास का स्तर भी ऊँचा है। PQLI अधिकतम मूल्य 100 तथा न्यूनतम मूल्य 1 होगा। PQLI का 100 की ओर बढ़ना उत्तम स्थिति का परिचायक होगा, जबकि 1 की ओर जाना खराब स्थिति का परिचायक होगा।

$$\textbf{PQLI} = \frac{1}{3}\textbf{(LEI + IMI + BLI)}$$ (PQLI अधिकतम मूल्य 100 तथा न्यूनतम मूल्य 1 होगा)

3) **क्रयशक्ति समता विधि (Purchasing Power Parity Method - PPP) -** इस विधि का प्रयोग सर्वप्रथम 1993 में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) ने विभिन्न देशों के रहन-सहन के निर्धारण हेतु किया था। वर्तमान में विश्व बैंक इस विधि का प्रयोग विभिन्न देशों के रहन-सहन के स्तर की तुलना के लिए कर रहा है। इसके अन्तर्गत देश विशेष की सकल राष्ट्रीय आय को पूर्व निर्धारित अन्तर्राष्ट्रीय विदेशी विनिमय दर पर व्यक्त न करके, उस देश विशेष के भीतर मुद्रा की क्रयशक्ति (Purchasing Power) के आधार पर व्यक्त किया जाता है।

उदाहरण के लिए - अन्तर्राष्ट्रीय विनिमय दर के अनुसार 1 डॉलर = 50 रुपए है, परन्तु क्रयशक्ति समता विधि में विश्व बैंक क्रय शक्ति के आधार पर नए विनिमय दर का निर्धारण करता है, ताकि सही ढंग से तुलनात्मक स्थिति ज्ञात की जा सके। इसमें यह देखा जाता है कि भारत 50 रुपए में जितनी वस्तुओं तथा सेवाओं का क्रय कर सकता है, उतनी वस्तुओं तथा सेवाओं का क्रय अन्य मानक देश कितने डॉलर, येन या पॉउण्ड में करेगा। इस प्रकार क्रयशक्ति समता से नए विनिमय दर का निर्धारण हो जाएगा। उल्लेखनीय है कि क्रयशक्ति समता के आधार पर भारत विश्व की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था है।

4) **निवल आर्थिक कल्याण (Net Economic Welfare - NEW) मापक** - विलयम नोरधास तथा जेम्स टोविन ने जीवन की गुणवत्ता में सुधार जो आर्थिक विकास का मापक है, की माप के लिए मेजर ऑफ इकोनामिक वेलफेयर (MEW) की धारणा का विकसित की, जिसे बाद में सेमुएलसन ने और संशोधित किया तथा इसे NEW मापक कहा। सेमुएलसन का यह मत था कि NEW लोगों के जीवन निर्वाह में सुधार की सही माप करेगा। उनके अनुसार ,

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

निवल आर्थिक कल्याण (NEW) = GDP – (उत्पादन की छिपी लागत तथा आधुनिक नगरीकरण की हानियां (Disamenities) + अवकाश तथा गृहणियों की सेवाएं)

5) **मानव विकास सूचकांक (Human Development Index)** – इस सूचकांक का प्रतिपादन 1990 में संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) से जुड़े हुए अर्थशास्त्री महबूब–उल–हक व उनके सहयोगी अर्मत्य सेन तथा सिंगर हंस ने किया था। HDI के 3 आधारभूत आयाम हैं – शिक्षा, जीवन प्रत्याशा एवं जीवनस्तर। इनमें किसी भी देश के मानव विकास के संदर्भ में इन 3 मूलभूत आयामों के क्षेत्र में उपलब्धियों की माप ली जाती है। मानव विकास सूचकांक निकालने से पूर्व इन 3 आयामों के अलग–अलग सूचकांक तैयार किए जाते हैं।

इस प्रकार किसी देश की दो अवधियों में आकलित HDI इस बात पर प्रकाश डालेगी कि उस देश में सापेक्षिक आर्थिक विकास हुआ है या नहीं, यह दो देशों की आर्थिक विकास की तुलनात्मक स्थिति पर प्रकाश डालता है, वह भी सीमित चरों के सन्दर्भ में। अपने में किसी देश की निरपेक्ष विकास पर प्रकाश नहीं डालता। HDI प्रभावित करने वाले चरों में अन्य देशों के सन्दर्भ में होन वाले परिवर्तन, जो HDI के चरों के अधिकतम तथा न्यूनतम मूल्य में परिवर्तन ला दें, तो किसी देश के HDI मूल्य में परिवर्तन आ सकता है, लेकिन यह इस पर जरूर प्रकाश डालता है कि कोई देश विश्व औसत की तलना में मानवीय विकास की दृष्टि से उच्च, मध्यम या अल्पविकास की श्रेणी में है। HDI का स्थिर होना यह नहीं स्थापित करता कि आर्थिक विकास नहीं हुआ औ न ही बढ़ता HDI यह आवश्यक रूप से स्थापित करता है कि आर्थिक विकास हुआ है। आर्थिक विकास के माप की HDI विधि निश्चित रूप से PQLI विधि से उत्तम विधि है, क्योंकि PALI में आय को चर के रूप में नहीं लिया गया है, जबकि HDI में इसको एक चर के रूप में लिया गया है। पर इसमें भी केवल तीन ही चरों को लिया गया है, जो आर्थिक विकास पर पूरा प्रकाश नहीं डालते।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

मानव विकास
HUMAN DEVELOPMENT

वर्तमान समय में आर्थिक विकास के केन्द्र में मानव का विकास ही है। 1990 के दशक में कई अर्थशास्त्रियों ने मानव विकास की परिभाषा और उद्देश्य में परिवर्तन किया, जिनमें महबूब-उल-हक व अर्मत्य सेन महत्वपूर्ण हैं। मानव विकास लोगों के विकल्पों में विस्तार के साथ-साथ प्राप्त होने वाले कल्याण के स्तर को ऊँचा करने की प्रक्रिया है।

- **मानव विकास क्या है (What is Human Development)?**

1990 में सर्वप्रथम प्रकाशित Human Development ने मानव विकास को लोगों के सामने विकल्प (Choice) के विस्तार की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है। इनमें सर्वाधिक महत्वर्पू हैं - लम्बा और स्वस्थ्य जीवनयापन, शिक्षा प्राप्ति और अच्छा जीवनस्तर पाना। अन्य विकल्प हैं - राजनीतिक स्वतंत्रता, अन्य मानवाधिकारों की गारंटी और आत्मसम्मान के विविध तत्व। ये सभी जरूरू विकल्प हैं, जिनके अभावमें दूसरे अवसरों में बाधा पड़ती है। अत: मानव विकास लोगों के विकल्पों में विस्तार के साथ-साथ प्राप्त होने वाले कल्याण के स्तर को ऊँचा करने की प्रक्रिया है।

महबूब उल हक के अनुसार आर्थिक संवृद्धि और मानव विकास की विचारधारा में परिभाषात्मक अन्तर यह है कि जहां आर्थिक संवृद्धि में केवल एक विकल्प, अर्थात् - आय पर ही ध्यान केन्द्रित किया जाता है, वहां मानव विकास में सभी मानवीय विकल्पों का विस्तार आ जाता है - ये विकल्प चाहे आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा राजनीतिक हो। मानव के सामने अनेक विकल्प हैं, जो आर्थिक कल्याण से कहीं आगे जाते हैं। ज्ञान, स्वास्थ्य, स्वच्छ भौतिक पर्यावरण, राजनीतिक स्वतंत्रता और जीवन के सरल आनन्द आय पर निर्भर नहीं हैं। धन के संचयन से इन क्षेत्रों में लोगों के विकल्पों का विस्तार हो सकता है, लेकिन ऐसा आवश्यक नहीं है।

- **मानव विकास क्यों (Why Human Development)?**

पॉल स्ट्रीटन के अनुसार मानव विकास निम्नलिखित कारणों से आवश्यक है -

1) मानव विकास उद्देश्य है, जबकि आर्थिक संवृद्धि इस उद्देश्य का सधन मात्र है।
2) मानव विकास ऊँची उत्पादकता का साधन है।
3) यह मानव पुनरुत्पादन को धीमा करके परिवार के आकार को छोटा करने में सहायता पहुंचाता है।
4) भौतिक पर्यावरण की दृष्टि से भी मानव विकास अच्छा है।
5) मानव विकास से तथा गरीबी में कमी से अक स्वस्थ समाज के गठन, लोकतंत्र के निर्माण और सामाजिक स्थिरता में सहायता मिलती है।
6) मानव विकास से सामाजिक उपद्रवों को कम करने में सहायता मिलती है और इससे राजनीतिक स्थिरता बढ़ती है।

उपर्युक्त व्याख्या से यह स्पष्ट है कि मानव विकास प्रतिमान में सम्पूर्ण समाज आ जाता है न कि केवल अर्थव्यवस्था। इसके अन्तर्गत राजनीतक सांस्कृतिक और सामाजिक कारकों को उतना ही महत्व दिया जाता है, जितना कि आर्थिक कारकों को।

- **मानव विकास के अनिवार्य घटक (Essential Components of Human Development)**

महबूब-उल-हक मानव विकास के 4 अनिवार्य घटकों - समानता (औचित्य), धारणीयता, उत्पादकता और सशक्तिकरण पर बल दिया है।

- **समानता (Equity)** - यह मानव विकास का सबसे महत्वपूर्ण घटक है। समानता का अर्थ है कि विकास के अवसरों तथा लाभों का उचित तथा न्यायपूर्ण वितरण। इसके लिए विकास के विकल्पों तथा अवसरों तक न्यायोचित पहुंच होनी चाहिए। अवसरों तक न्यायोचित पहुंच होने के लिए निम्नलिखित दिशाओं में परिवर्तन होने चाहिए -
  1) आय के वितरण में विशेष पुनर्गठन, जिसके लिए ऐसी राजकोषीय नीति का प्रयोग हो, जो अमीरों से गरीबों को आय का अन्तरण करें।
  2) राजनीतिक न्याय की स्थापना की जानी चाहिए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) उत्पादक परिसम्पत्तियों का उचित तथा न्यायपूर्ण वितरण किया जाना चाहिए। यह परिवर्तन भूमि सुधारों के माध्यम से किया जा सकता है।

4) साख प्रणाली को सरल बनाया जाए, ताकि गरीबों के ऋण संबंधी जरूरते पूरी हो।

5) महिला, पिछड़ा वर्ग एवं अल्पसंख्यक वर्गों की महत्वपूर्ण आर्थिक एवं राजनीतिक अवसरों तक पहुंच हो।

- **उत्पादकता (Productivity)** - वर्तमान में विकास मॉडलों का मुख्य आधार मानव पूंजी है। अत: विभिन्न देश उत्पादकता को मानव विकास प्रतिमान का एक आवश्यक घटक मानते हैं। उत्पादकता से आशय मानव को प्रशिक्षित कर उसकी कार्य क्षमता को बढ़ाना है। इसमें मानव के कौशल विकास (Skill Development) पर बल दिया जाता है। इसके लिए मानव में निवेश कर इसे कुशल संसाधन के रूप में परिवर्तित किया जाता है। उदाहरणार्थ - अनेक पूर्वी-एशियाई देश, जैसे - जापान, दक्षिण कोरिया आदि ने मानव विकास में भारी निवेश कर अपनी संवृद्धि को तीव्र बनाया है।
- **सशक्तिकरण (Empowerment)** - मानव विकास प्रतिमान लोगों के सम्पूर्ण सशक्तिकरण की कल्पना करता है। सशक्तिकरण का आशय है कि निर्णय लेने की स्वतंत्रता, अर्थात् - दिए गए विकल्पों में लोग अपने इच्छा स्वातंत्र्य (Freedom of Will) का प्रयोग कर निर्णय ले सके। दूसरे शब्दों में लोग लोकतंत्र में लिए जाने वाले निर्णय में सहभागी बने। इसके लिए आर्थिक उदारवाद जरूरी है, ताकि लोग अत्यधिक नियंत्रणों एवं नियमनों से स्वतंत्र हो। यहां उल्लेखनीय है कि मानव विकास में स्त्री सशक्तिकरण भी शामिल है। उन्हें वे समस्त अधिकार व स्वतंत्रताएं मिलनी चाहिए, जो एक मानव के रूप में प्राकृतिक रूप से सभी को प्राप्त है।
- **धारणीयता (Sustainability)** - धारणीयता का अर्थ है - आने वाली पीढ़ी को वे सभी अवसर मिलने चाहिए, जो हमें प्राप्त हैं। अगली पीढ़ी का यह अधिकार ही धारणीयता को मानव विकास प्रतिमान का अनिवार्य घटक बनाता है। दूसरे शब्दों में हमें विकास की रणनीति इस तरह बनानी है कि बिना नुकसान पहुंचाए हम प्राकृतिक संसाधनों को अपनी आने वाली पीढ़ी को दे सके। धारणीयता हेतु निम्नलिखित प्रयास किए जा सकते हैं -

  1) नवीनकरणीय ऊर्जा स्रोतों की खोज की जा सकती है, जिससे प्रदूषण न्यूनतम हो तथा भावी पीढ़ी के लिए एक स्वच्छ वातावरण उपलब्ध हो सके।

  2) परम्परागत् ऊर्जा स्रोतों एवं संसाधनों पर से निर्भरता को कम किया जा सकता है, ताकि भावी पीढ़ी को भी आवश्यक संसाधन उपलब्ध हो सके।

मानव विकास के सूचक (Indicator of Human Development)

जीवनस्तर में सुधार के लिए आय एक विकल्प है और नि:संदेह यह महत्वपूर्ण विकल्प है। परन्तु आय मानव का कुल जोड़ नहीं है। शिक्षा एवं साक्षरता, स्वास्थ्य, भौतिक पर्यावरण, सभी पुरुषों व स्त्रियों के लिए (बिना जाति व समुदाय में भेदभाव किए) समान अवसर, रानीतिक स्वतंत्रता आदि उतने ही महत्वपूर्ण हो सकते हैं, जितनी कि आय है।

यद्यपि मानव विकास ही सभी आर्थिक गतिविधि का अंतिम लक्ष्य है, तथापि उसका माप करना आसान नहीं है। जहां आर्थिक संवृद्धि को सामान्यत: सकल राष्ट्रीय उत्पाद या प्रतिव्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पाद के रूप में मापा जाता है, वहां मानव विकास का माम कहना बहुत मुश्किल है, मानव विकास के कई आयाम है। एक ऐसे माप की तलाश के प्रयास स्वरूप, जिसमें इन आयामों को किसी तरह शामिल किया जा सके, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम ने 1990 में प्रकाशित अपनी पहली Human Development में मानव विकास सूचकांक की संकल्पना प्रस्तुत की।

यह सच है कि मानव विकास की संकल्पना इतनी व्यापक है कि उसे किसी एक सूचकांक में पूरी तरह व्यक्त कर पाना संभव नहीं है। परन्तु इस प्रकार के सूचकांक से मानव विकास की महत्ता को स्पष्ट करना तथा विकास का एक व्यापक दृष्टिकोण प्राप्त करना संभव हो पाता है। जैसा कि स्ट्रीटन ने कहा है कि इन सूचकांकों के पक्ष में सबसे महत्वपूर्ण तर्क यह है कि इनमें सकल राष्ट्रीय उत्पाद जैसे सूचकांकों की अपर्याप्तता स्पष्ट करने में सहायता मिलती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ यूएनडीपी द्वारा विकसित सूचकांक (Indexes Devlop of UNDP)

मानव विकास को मापने के लिए संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) ने सर्वप्रथम 1990 में HDI का विकास किया था। उसके पश्चात् इसमें संशोधन करते हुए 1995 में लैंगिक विकास सूचकांक (GDI) व लैंगिक सशक्तिकरण माप, (GEM) 1997 में मानव गरीबी सूचकांक (HPI) तथा 2010 में विषमता समायोजित मानव विकास सूचकांक (IHDI) व बहुअयामी गरीबी सूचकांक (MPI) का विकास किया। इन सभी सूचकांकों को निम्नलिखित तरिके से समझा जा सकता है –

1) **मानव विकास सूचकांक (Human Development Index)** – इस सूचकांक का प्रतिपादन 1990 में संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) से जुड़े हुए अर्थशास्त्री महबूब-उल-हक व उनके सहयोगी अर्मत्य सेन ने किया था। HDI के 3 आधारभूत आयाम हैं – शिक्षा, जीवन प्रत्याशा एवं जीवनस्तर। इनमें किसी भी देश के मानव विकास के संदर्भ में इन 3 मूलभूत आयामों के क्षेत्र में उपलब्धियों की माप ली जाती है। मानव विकास सूचकांक निकालने से पूर्व इन 3 आयामों के अलग-अलग सूचकांक तैयार किए जाते हैं। इसके लिए आयाम सूचकांक (Dimension Index) तैयार किया जाता है, जिसे निम्नलिखित सूत्र द्वारा प्राप्त किया जाता है –

$$\text{आयाम सूचकांक (Dimension Index)} = \frac{\text{वास्तविक मूल्य} - \text{न्यूनतम मूल्य}}{\text{अधिकतम मूल्य} - \text{न्यूनतम मूल्य}}$$

मानव विकास सूचकांक (Human Development Index)

आयाम	संकेतक	सूचकांक
स्वास्थ्य	जन्म पर जीवन प्रत्याशा	जीवन प्रत्याशा सूचकांक
शिक्षा	स्कलावधि के औसत वर्ष स्कूलावधि के प्रत्याशित वर्ष	शिक्षा सूचकांक
जीवनस्तर	प्रतिव्यक्ति $GNI_{(PPP)}$	आय सूचकांक

- **जीनव प्रत्याशा सूचकांक (Life Expectancy Index - LEI)** – यह सूचकांक किसी भी देश की जनसंख्या का जन्म के समय सापेक्ष जीवन प्रत्याशा की उपलब्धि का मापन करता है। दूसरे शब्दों में कोई व्यक्ति किसी देश में जन्म लेने पर कितने वर्षों तक उसके जीवित रहने की आशा की जाती है। जीवन प्रत्याशा सूचकांक किसी देश की स्वास्थ्य सुविधाओं पर निर्भर करता है।
- **शिक्षा सूचकांक (Education Index - EI)** – यह 2 संकेतकों पर आधारित है –
  - **स्कूलावधि के औसत वर्ष (Mean Years of Schooling)** – 5 वर्षीय बच्चे द्वारा स्कूल में बिताए गए वर्ष।
  - **स्कूलावधि के अनुमानित वर्ष (Expected Years of Schooling)** – वर्तमान नामांकन दर पर बालक द्वारा अपने जीवन में स्कूल में बिताए जाने वाले प्रत्याशित वर्ष।
- **आय सूचकांक (Income Index - II)** – जीवन निर्वाह स्तर के मापन हेतु सकल राष्ट्रीय उत्पाद को लेते हैं तथा उसके आधार पर क्रयशक्ति समायोजित (PPP) प्रतिव्यक्ति आय ज्ञात करते हैं।

इस प्रकार हमें 3 सूचकांक प्राप्त होते हैं। इन तीनों का ज्यामितीय माध्य (Geometric Mean) ही मानव विकास सूचकांक है।

$$\textbf{HDI} = \sqrt[3]{\textbf{LEI} + \textbf{EI} + \textbf{II}}$$ (**HDI** का अधिकत्म मूल्य 1 तथा न्यूनतम मूल्य 0 होता है)

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

2) **असमानता समायोजित मानव विकास सूचकांक (Inequality Adjusted Human Development Index - IHDI)** - UNDP द्वारा जारी मानव विकास सूचकांक केवल औसत को प्रदर्शित करता है, किसी देश के भीतर लोगों के मानव विकास में पाई जाने वाली विषमताओं को ध्यान में नहीं रखता है। असमानता समायोजित मानव विकास सूचकांक (IHDI) न केवल स्वास्थ्य, शिक्षा तथा आय के द्वारा मापित औसत को ध्यान में रखता है, बल्कि इसको भी ध्यान में रखता है कि यह किस प्रकार वितरीत है। यह HDI के प्रत्येक आयाम में असमानता को प्रदर्शित करता है।

समाज के प्रत्येक व्यक्ति का अपना व्यक्तिगत HDI है। यदि प्रत्येक व्यक्ति के सम्बन्ध में जीवन प्रत्याशा, शिक्षा तथा आय प्राप्त HDI के औसत के बराबर होगा, तो व्यक्तिगत स्तर पर HDI तथा औसत HDI बराबर होगा। परन्तु वास्तविक स्थिति में व्यक्तिगत HDI तथा औसत HDI में असमानता पाई जाती है। अत: इस असमानता को स्पष्ट करने के लिए UNDP ने असमानता समायोजित मानव विकास सूचकांक जारी किया है। HDI तथा IHDI का अन्तर असमानता के कारण मानव विकास की हानि को प्रदर्शित करेगा।

3) **लैंगिक असमानता सूचकांक (Gender Inequality Index - GII)** - UNDP द्वारा 1995 की HDR में महिलाओं से सम्बन्धित 2 सूचकांक लैंगिक विकास सूचकांक (Gender Development Index - GDI) और लैंगिक सशक्तिकरण माप (Gender Empowerment Measure - GEM) जारी किए गए थे। GDI में उन्हीं मूलभूत आयामों को लिया जाता था, जो HDI में प्रयोग किए जाते हैं, किन्तु इनका लिंगानुसार समायोजन किया जाता है। GEM की सहयाता से यह जानने का प्रयास किया गया कि क्या महिलाएं आर्थिक व राजनीतिक जीवन में हिस्सा ले पाती है या नहीं। काफी समय तक लैंगिक असमानता की माप के सम्बन्ध में GDI और GEM बहुत प्रशंसित माप के रूप में स्वीकार किए गए, किन्तु कई आधारों पर इसकी आलोचना भी की गई -

- इन सूचकांकों के आकलन में अनुमानों पर अत्यधिक निर्भरता होती है।
- GEM के लगभग सभी संकेतक शहरी उच्च आय वर्गीय तथा विकसित देशों के पक्ष में है।

इन कमियों को दूर करने के लिए HDR 2010 में GII का प्रतिपादन किया गया। इसमें देश स्तर तक 2 समूह महिला और पुरूषों के मध्य पाई जाने वाली असमानता को लिया गया। इस सूचकांक की गणना के लिए महिलाओं के दृष्टिकोण से 3 महत्वपूर्ण आयामों को लिया गया है -

- **श्रम बाजार (Labour Market Participation)** - इसमें संकेतक के रूप में श्रम शक्ति में महिलाओं की भागीदारी को लिया गया है।
- **सशक्तिकरण (Empowerment)** - इसमें संकेतक के रूप में शैक्षणिक उपलब्धि व संसद में भागीदारी को लिया गया है।
- **प्रजनन स्वास्थ्य (Reproductive Health)** - इसके संकेतक के रूप में किशोर प्रजननता दर (Adolescent Fertility Rate) तथा मातृत्व मृत्यु दर (Maternal Mortality Rate) को लिया गया है।

लिंग असमानता सूचकांक का मान 0 से 1 के मध्य होता है। जहां 0 होने का अर्थ है - महिला और पुरूषों की स्थिति समान है, जबकि 1 होने का अर्थ है - महिलाओं की स्थिति पुरूष की अपेक्षा अत्यधिक खराब है।

4) **बहुआयामी निर्धनता सूचकांक (Multidimensional Poverty Index - MPI)** - UNDP द्वारा जारी HDR-1997 में पहली बार मानव निर्धनता सूचकांक (HPI) को शामिल किया गया। HPI में स्वास्थ्य, शिक्षा तथा जीवनस्तर के समग्र वंचनों को प्रदर्शित करने के लिए राष्ट्रीय औसत को लेता था। यह विशिष्ट व्यक्तियों, परिवारों या लोगों के समूहों की वंचित इकाई के रूप में पहचान नहीं करता था। इसी समस्या के निदान के लिए मानव विकास रिपोर्ट 2010 में HPI के स्थान पर एक नया मापक बहुआयामी निर्धनता सूचकांक (MPI) अपनाया गया है। यह उन्हीं 3 आयामों पर आधारित है, जो HPI में लिए गए हैं तथा इसमें 10 संकेतकों का प्रयोग किया गया है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

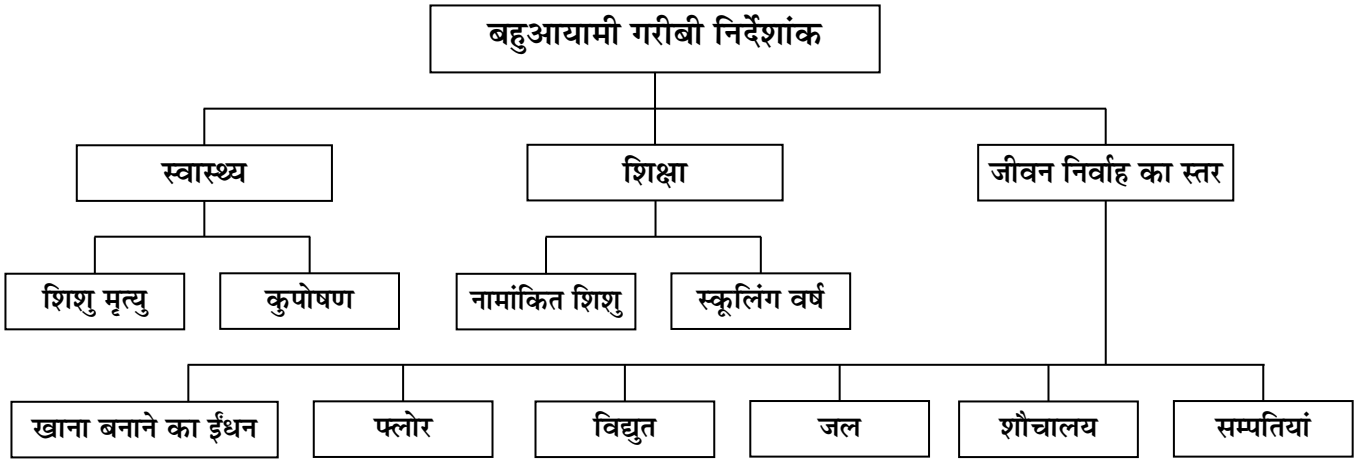

इन संकेतकों के आधार पर यदि कोई परिवार कम से कम 2 से 6 संकेतकों के आधार पर वंचित है, तो उसे बहुआयामी निर्धन माना गया है। इसमें परिवारों के लिए आंकड़ों की समग्रता द्वारा गरीबी या निर्धनता के राष्ट्रीय मापदण्ड को ज्ञात किया जाता है।

5) **Happy Planet Index - HPI -** HDI की विभिन्न आधारों पर आलोचना की जाती है। अन्य बातों के अलावा यह कहा गया है कि HDI उच्च जीवनस्तर की Envirenmental Sustainability को ध्यान में नहीं रखता है। यह ध्यान देने योग्य है कि HDI में उच्च जीवनस्तर को सकारात्मक माना गया है, लेकिन उच्च जीवनस्तर से पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अत: इसके नकारात्मक पक्ष को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

इस कमी को दूर करने हेतु New Economic Foundation (United Kingdom) द्वारा वर्ष 2006 में HPI का निर्माण किया गया। अपने सरलतम रूप में HPI निम्नलिखित सूत्र पर आधारित होता है –

$$\textbf{HPI} = \frac{\text{Experienced well being} \times \text{Life Cmpectancy}}{\text{Ecological Foot Print}}$$

यह प्रतिव्यक्ति GHA (Global Hectare) द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।

उपरोक्त सूत्र को देखने से यह पता लगता है कि Ecological Foot Print का मान बढ़ने से HPI का मूल्य कम हो जाता है। इस प्रकार HPI उच्च जीवनस्तर और उसके अनुसार उच्च Ecological Foot Print को नकारात्मक रूप से समायोजित कर देता है।

- **Ecological Foot Print** – यह किसी भी राष्ट्र में किसी वर्ष में उपभोग किए जा रहे जीवनस्तर को बनाए रखने के लिए प्राकृतिक पूंजी के उपयोग को प्रदर्शित करता है।

❐ निष्कर्ष

उपरोक्त सूचकांकों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यदि मुख्यत: शिक्षा, स्वास्थ्य एवं जीवनस्तर बेहतर होता है, तो समग्र मानव विकास भी उच्चतर होता है। इस मानव विकास में यदि महिलाओं को भी शामिल कर लिया जाए, तो किसी भी देश के मानव विकास के साथ-साथ उसका आर्थिक विकास भी होगा। चूंकि महिलाएं भारत की आबादी का लगभग 48 प्रतिशत (जनगणना 2011) हिस्सा है, इसलिए यह जरूरी है कि सामाजिक-आर्थिक माहौल में उनकी भागीदारी सुनिश्चित की जाए और उन्हें सुरक्षा प्रदान की जाए। इसके लिए आबादी के बड़े हिस्से की पितृसत्तात्मक सोच में बदलाव लाने की आवश्यकता है और सरकार को उपयुक्त नीतियां अपनाकर यह बदलाव लाने में सक्रिय भूमिका निभानी होगी। इसे मानव सूचकांक (HDI) और लैंगिक असमानता सूचकांक (GII) के शीर्ष 50 देशों की श्रेणी में शामिल होने का भी प्रयास करना चाहिए। शिक्षा का निम्न स्तर और कौशल में कमी अधिकांश कार्यबल के निम्न आय स्तरों के लिए उत्तरदायी है, जिससे लोगों के बीच असमानता पनपती रही है।

देश के समक्ष अब चुनौती इस बात की है कि वह अपने जनसांख्यिकीय '**बोझ**' को विकास के अधिक अवसरों में बदलने के लिए योजना बनाए और इस दिशा में कार्य करे। ऐसा जनशक्ति के स्तर को, घरेलू और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों प्रकार के नियोक्ताओं (कृषि

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

से इतर, उद्योग और सेवा-क्षेत्र) की जरूरतों से जोड़कर किया जा सकेगा। समय की मांग है कि इन सपनों को साकार करने के लिए, पंचायती राज संस्थाओं/शहरी स्थानीय निकायों को परिवर्तन के अग्रदूत के रूप में इस्तेमाल करके '**जमीनी स्तर से विकास करने**' का रास्ता अपनाया जाए।

❐ मानव विकास रिपोर्ट 2015

UNDP ने 2015 की मानव विकास रिपोर्ट का शीर्षक **मानव विकास हेतु कार्य** (Work for Human Development) नाम से जारी की है। इसमें 188 देशों को शामिल किया गया है, जिसमें भारत का 130वां स्थान है (2014 की मानव विकास रिपोर्ट में मानव विकास सूचकांक के मामले में 188 देशों में भारत को 135वां स्थान दिया गया था)। भारत के पड़ोसी देशों में श्रीलंका का 73वां स्थान चीन का 91वां स्थान है, जबकि भूटान, बांग्लादेश, नेपाल, पाकिस्तान एवं अफगानिस्तान का क्रमशः 136वां, 142वां, 145वां, 146वां एवं 169वां स्थान है।

मानव विकास सूचकांक स्वास्थ्य, शिक्षा व आय के स्तर के आधार पर तैयाक किया जाने वाला UNDP का सूचकांक है, जिसका उच्चतम मान 1.0 हो सकता है। भारत के लिए सूचकांक 0.609 आकलित है। 0 से 0.548 तक सूचकांक मान वाले देशों को नीचे मानव (Low Human Development) वाले देश, 0.565 से 0.698 सूचकांक वाले दशों को मध्यम विकास (Medium Human Development) वाले देश, 0.702 से 0.798 सूचकांक वाले देशों को उच्च मानव विकास (High Human Development) वाले देश तथा 0.802 से 1.00 तक सूचकांक के मान वाले देशों को बहुत उच्च मानव विकास (Very High Human Development) वाले देश के रूप में रिपोर्ट में वर्गीकृत किया गया है। रिपोर्ट में 49 देश बहुत उच्च मानव विकास, 56 देश उच्च मानव विकास, 38 मध्यम मानव विकास तथा 44 देश निम्न मानव विकास वाले देशों के रूप में वर्गीकृत हैं। बहुत ऊँचे विकास वाले देशों में जहां नार्वे, ऑस्ट्रेलिया, स्विट्जरलैण्ड, डेनमार्क, नीदरलैण्ड्स, जर्मनी, अमरीका व न्यूजीलैण्ड आदि देश शामिल हैं। इनमें सर्वोच्च सूचकांक नार्वे का 0.944 है। इस दृष्टि से उसे सर्वोच्च मानव विकास वाला देश स्वीकार किया गया है। इससे पूर्व 2014 की मानव विकास रिपोर्ट में भी शीर्ष स्थान नार्वे का ही था। मानव विकास की दृष्टि से से 130वें स्थान पर भारत मध्यम मानव विकास वाले देशों में शामिल है। रिपोर्ट में सबसे नीच मानव विकास सूचकांक 0.348 नाइजर का हैं, पिछले वर्ष 2014 की रोपर्ट में भी नाइजर ही सबसे नीचे 187वें स्थान पर था।

UNDP की मानव विकास रिपोर्ट में विभिन्न राष्ट्रों की तुलना मानव विकास सूचकांक (HDI) के साथ-साथ जेंडर इनीक्वेलिटी इंडेक्स (GII) व मल्टी डाइमेंशनल पॉवर्टी इंडेक्स (MPI) के आधार पर भी की जाती है। **जेंडर इनीक्वेलिटी इंडेक्स के आकलन में** मातृत्व मृत्यु दर व किशोर मृत्यु दर महिला सशक्तिकरण (संसदीय सीटों में महिलाओं के प्रतिशत तथा माध्यमिक शिक्षा में दोनों लिंगों की सहभागिता पर आधारित) एवं आर्थिक गतिविधियों (श्रमशक्ति में पुरुषों व महिलाओं के अनुपात पर आधारित) आदि का समावेश किया जाता है। इस सूचकांक के आधार पर भारत की स्थिति कोई अच्छी नहीं बताई गई है। 155 देशों के लिए आकलित इस सूचकांक के आधार पर भारत को 130वां स्थान दिया गया है, जबकि बांग्लादेश का 111वां व पाकिस्तान का 121वां स्थान है। रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत में संसद की 12.2 प्रतिशत सीटों पर ही महिलाएं काबिज हैं, जबकि बांग्लादेश व पाकिस्तान में यह अनुपात क्रमशः 20 प्रतिशत व 19.7 प्रतिशत है। वयस्क महिलाओं में 27 प्रतिशत महिलाएं ही सेकण्डरी स्तर या उससे अधिक शिक्षा प्राप्त हैं। पाकिस्तान में यह अनुपात 19.3 प्रतिशत व बांग्लादेश 34 प्रतिशत है। रिपोर्ट में मातृत्व मृत्यु दर (Maternal Mortality Rate - MMR) के मामले में भी भारत की स्थिति इन पड़ोसी देशों की तुलना में खराब बताई गई है (रिपोर्ट के अनुसार प्रति एक लाख जीवित जन्मों पर MMR भारत में जहां 190 है, वहीं बांग्लादेश व पाकिस्तान में यह 170 है)।

मानव विकास रिपोर्ट के **मल्टी डाइमेंशनल पॉवर्टी इंडेक्स** में एक ही परिवार में शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रहन-सहन के स्तर के वंचन (Deprivations) का आकलन किया जाता है। वर्ष 2015 की मानव विकास रिपोट4 में 2005-06 में भारत की 55.3 प्रतिशत जनसंख्या को **मल्टी डाइमेंशनली पुअर** बताया गया है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

भारत में विकास का अनुभव
Development Experience in India

आज भारत PPP पर विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन चुका है। वर्ष 1947 में उपनिवेशवाद के साएं से निकला भारत विगत 65 वर्षो में पूर्ण रूप से बदल चुका है। समस्त अनुभवजन्य प्रमाण यह सिद्ध करते है कि भारत में यह बदलाव 2 क्रमागत चरणों में देखा गया। प्रथम, वर्ष 1950 एवं उसके बाद का समय, द्वितीय, वर्ष 1980 एवं उसके बाद का समय।

अर्थव्यवस्था मे यह बदलाव विभिन्न संकेतकों सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में वृद्धि, प्रतिव्यक्ति आय में (PCI) वृद्धि, GDP का संरचनात्मक परिवर्तन आदि देखने को मिले। यह परिवर्तन सामान्यत: 'वृद्धि' की अवधारणा से जुड़े हुए है एवं इन परिवर्तनों से 'वृद्धि' के साथ 'विकास' का अनुभव हुआ या नहीं? यह विचार का विषय है। हम इस अध्याय में इन पर विस्तार से चर्चा करेगें।

❐ वृद्धि का अनुभव : वृद्धि के दो चरण

दीपक नय्यर भारत में हुए वृद्धि के अनुभव को प्रमाणित करने के लिए 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध को 2 चरणों में बांटते हैं -

प्रथम, वर्ष 1950-51 से 1979-80 तक GDP में वृद्धि दर केवल 3.5% वार्षिक थी, जिसे व्यंग्य स्वरूप प्रो. राजकृष्णा '**हिन्दू वृद्धि दर**' कहते है। समान अवधि में प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि दर 1.4% वार्षिक थी। यह पूर्वी एशिया (East Asia) से काफी बुरी थी, किन्तु अफ्रीका के कई राष्ट्रों से बेहतर थी। द्वितीय, वर्ष 1980-81 से 2004-05 की दूसरी अवधि में GDP वृद्धि दर 5.6% वार्षिक रही तथा समान अवधि में प्रतिव्यक्ति आय की वृद्धि दर 3.6% वार्षिक रही। यह वृद्धि दर विश्व में कई विकासशील राष्ट्रों से बेहतर थी। इस प्रकार दीपक नय्यर वर्ष 1980 को उपनिवेशवाद के काल से अलगाव (Departure) मानते हैं। यह वही समय था, जब भारत '**हिन्दू वृद्धि दर**' को तोड़कर बाहर आया एवं भारत ने वृद्धि का अनुभव किया।

वर्ष 1980 एवं उसके बाद आए इन परिवर्तनों के पीछे दीपक नय्यर निम्नलिखित कारण देते है -

1) मेक्रोइकॉनामिक स्तर पर अपनाई गई वे समस्त नीतियां, जिन्होंने समग्र मांग को बढ़ाया एवं उत्पादन में वृद्धि हुई।
2) 70 के दशक के बाद से ही निवेश -GDP अनुपात में वृद्धि देखने को मिली थी। 80 एवं उसके बाद के दशक में बढ़ते निवेश - GDP अनुपात का प्रभाव GDP वृद्धि दर पर पड़ा।
3) 80 के दशक में सार्वजनिक निवेश मे वृद्धि की प्रवृत्ति देखी गई। बड़े हुए सार्वजनिक निवेश में पूर्ति बाधाओं को दूर किया एवं GDP में वृद्धि देखने को मिली ।
4) कालांतर में हुए व्यापार उदारीकरण ने भी वृद्धि में योगदान दिया। इस समय पूंजीगत वस्तुओं का उत्पादन बढ़ा।

❐ वृद्धि का अनुभव एवं अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक ढांचे में परिवर्तन

कुजनेट्स एवं चेनरी समस्त विश्व में किए गए अपने अध्ययन के आधार पर पाते हैं कि विकास की प्रक्रिया, कृषि क्षेत्र में GDP के घटते हिस्से के साथ जुड़ी हुई है। कुजनेट्स कहते हैं कि जैसे-जैसे विकास प्रक्रिया अपना स्थान बनाती जाएगी, वैसे-वैसे कृषि में GDP का हिस्सा घटता जाएगा तथा उद्योग एवं सेवा क्षेत्र का हिस्सा बढ़ता जाएगा। किन्तु सेवा क्षेत्र, उद्योग क्षेत्र से अधिक तेज वृद्धि करेगा। **बिल्कुल इसी तरह का पेटर्न रोजगार ढांचे में भी देखने को मिलेगा।**

भारत में वर्ष 1950 में कृषि, उद्योग एवं सेवा का GDP में हिस्सा क्रमश: 58%, 15 % एवं 28% था, जो 1980 में क्रमश: 24%, 38% एवं 38% हो गया। इस प्रकार कृषि क्षेत्र में 20% गिरावट का 9% हिस्सा उद्योग में गया एवं 10% सेवा क्षेत्र को मिला। वर्ष 1980 के बाद वर्ष 2000 में कृषि, उद्योग एवं सेवा क्षेत्र का GDP में हिस्सा क्रमश: 24%, 27% एवं 49% था। इस प्रकार कृषि क्षेत्र से मुक्त हुई 14% जीडीपी का केवल 3% उद्योगों को मिला एवं शेष 11% हिस्सा सेवा क्षेत्र में गया। अत: द्वितीय चरण मे सेवा क्षेत्र उद्योगों से अधिक तेजी से बढ़ा। अत: कुजनेट्स का विश्व अनुभवजन्य प्रमाण, भारत के संदर्भ में भी सिद्ध होता है। अत: कहा जा सकता है कि 1980 का ही समय था, जब भारत में इस विकास प्रक्रिया का अनुभव किया।

भारत इस बात में पिछड़ गया कि वह रोजगार ढांचे में इस पेटर्न का पालन नहीं कर पाया एवं कृषि में श्रमशक्ति की निर्भरता उतनी ही बनी रही। यही एक महत्वपूर्ण कारण रहा कि भारत में 'वृद्धि का अनुभव','विकास का अनुभव' में परिवर्तित नहीं हो पाया। इस तरह का अव्यवस्थित संरचनात्मक परिवर्तन ही विशाल गरीबी, बेरोजगारी एवं व्यापक असमानता का कारण बना।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ वृद्धि का अनुभव - विकास का अनुभव : एक अध्ययन

आज भारत की एक तिहाई जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रही है। तेंदुलकर/लकड़ावाला/रंगराजन आदि थोड़ी बहुत मतभिन्नता के साथ यह स्वीकारते हैं कि भारत में 30% से 40% जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रही है। वर्ष 2011 में तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह एक रिपोर्ट **हंगामा** जारी करते हुए कहते हैं कि भारत में 42% बच्चें कुपोषण से ग्रसित है। लगभग समान स्थिति राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे-3 (NFHS-3) भी प्रस्तुत करता है। यह सभी स्थितियां 80 के दशक के काफी बाद की है। इस प्रकार भारत विकास के संकेतकों पर वृद्धि जैसा परफार्म नहीं कर पाया है। डॉ. विमल जालान अपने शोध-पत्र में स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि वर्ष 1980 में भारत का एचडीआई 0.369 था एवं भारत की सम्पूर्ण रैंकिंग 135 थी। विमल जालान ने यह अनुमान एक विशेष सांख्यिकी विधि से लगाए हैं, क्योंकि एचडीआई की अवधारणा वर्ष 1990 में आई। वर्तमान में 2014 की मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार भारत का एचडीआई 0.586 है तथा उसकी रैंकिंग 135 है। इस प्रकार इन समान अवधि में भारत ने जितनी प्रगति कुल राष्ट्रीय आय एवं प्रतिव्यक्ति आय में की उतनी प्रगति मानव विकास में नही कर पाया।

किन्तु तमाम आलोचनाओं के बावजूद यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि भारत आज प्रत्येक संकेतकों पर 80 के दशक से बेहतर स्थिति में है। मानव विकास के क्षेत्र में प्रयास किए गए है, यह इससे सिद्ध होता है कि वर्तमान मुख्य आर्थिक सलाहकार अरविंद सुब्रह्मण्यम स्वीकार करते हैं कि वर्ष 2004 से 2009 की अवधि में गरीबी में सर्वाधिक कमी देखने को मिली। यहीं हाल शायद पूर्व दशकों में देखी गई वृद्धि का भी होता, यदि रिसाव की रणनीति पर्याप्त रूप से कारगर होती।

❐ भारत के विकास के लिए आगे का रास्ता

गोल्डमैन सेच ने अपनी रिपोर्ट में भारत को विश्व की पांच सर्वाधिक संभावना वाले अर्थव्यवस्था में स्थान दिया है। विश्व बैंक की ताजा रिपोर्ट के अनुसार भारत वर्तमान में प्रतिव्यक्ति आय पर विश्व की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था है एवं वर्ष 2030 तक वास्तविक GDP पर भी विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था होगी। वर्तमान में 2 दशकों से वृद्धि देखने वाले चीन की अर्थव्यवस्था पटरी से उतर रही है। भारत को चीन का विश्व निर्यात में स्थान भरने के लिए तैयार रहना चाहिए। जहां एक ओर विश्व के कई राष्ट्र, जैसे - जापान, चीन, रूस, कोरिया आदि अपनी विशाल वृद्ध आबादी का सामना कर रहे हैं, वहीं दूसरी ओर भारत जनांकिकी लाभांश (Demographic dividend) के दौर से गुजर रहा है। भारत अपनी जनसंख्या को कौशल निर्माण प्रदान करके इस स्थिति का लाभ उठा सकता है। गरीबी, भुखमरी, कुपोषण एवं व्यापक असमानता आदि कुछ मुद्दे है, जिनके लिए भारत को संघर्ष करना है। सहस्त्राब्दी लक्ष्यों (MDG) से भारत अभी काफी दूर है। भारत को 'वृद्धि के अनुभव' को 'विकास के अनुभव' में बदलने के लिए इन लक्ष्यों को प्राप्त करने का तीव्र प्रयास करना चाहिए। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र ने MDG के स्थान पर संपोषणीय विकास लक्ष्यों (SDG) की घोषणा की है। भारत को इस ओर भी सकारात्मक प्रयास करना चाहिए।

Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

मध्य प्रदेश में मंद औद्योगिक विकास के कारण
CAUSES OF LOW INDUSTRIALIZATION OF MP

औद्योगिकीकरण किसी भी देश के आर्थिक विकास का इंजन माना जाता है। कृषि तथा सेवा क्षेत्र का विकास मुख्यत: औद्योगिक क्षेत्र के विकास पर ही निर्भर करता है। वास्तविकता यह है कि औद्योगिक क्षेत्र का विकास जहां एक ओर रोजगार तथा आय सृजन द्वारा अर्थव्यवस्था में मांग उत्पन्न करता है, वहीं दूसरी ओर देश के तीव्र तथा आत्मनिर्भर आर्थिक विकास की नींव तैयार करने में भी मदद करता है। अत: उपयोगी है कि प्रत्येक राज्य अपने समस्त संसाधनों का अधिकतम उपयोग करें, ताकि औद्योगिक विकास को तीव्र किया जा सके। लेकिन संसाधनों के कुशलतम उपयोग एवं दोहन के लिए पूंजी के साथ-साथ तकनीकी की भी जरूरत होती है। इन सबका आभाव उसके विकास में अवरोधक होता है। इन सब बातों से मध्य प्रदेश भी अछूता नहीं है।

मध्य प्रदेश में आर्थिक संसाधनों की कमी नहीं होने कारण भी यहां औद्योगिक क्षेत्र का आपेक्षित विकास नहीं हुआ है। मध्य प्रदेश में मंद औद्योगिक विकास का कोई एक निश्चित कारण नहीं है, बल्कि इसे सूक्ष्मता से देखने की आवश्यकता है। इसी आलोक में यहां के मंद औद्योगिक विकास के कारण का उल्लेख किया जा रहा है –

1) **आर्थिक कुचक्रों का जोर (Force of Economic Vicious Circles)** – यह कहा जाता है कि मध्य प्रदेश एक बीमारू राज्य इसलिए है कि वह औद्योगिक रूप से पिछड़ा है। मध्य प्रदेश में गरीबी तो विद्यमान है ही, साथ ही साथ यहां कि जनसंख्या भी तकनीकी रूप से दक्ष नहीं है, अर्थात् – यहां पर अकुशल श्रम की उपलब्धता उसे इन कुचक्रों से बाहर नहीं निकाल पाते।
2) **यातायात एवं संचार के साधनों की कमी** – मध्य प्रदेश में अभी-भी यातायात एवं संचार के साधनों का यथोचित विकास नहीं हो पाया है, जिसके कारण यहां जो प्रचुर मात्रा में खनिज उपलब्ध हैं, उसके पास तक तकनीक नहीं पहुंच पाई है।
3) **पूंजी का अभाव** – संसाधनों के दोहन, उसके परिशोधन एवं तकनीकी उन्नयन के लिए हमेशा से ही पूंजी की आवश्यकता होती है, जिसका की मध्य प्रदेश में अभाव है। चूंकि यहां पर अवसंरचना का भी विकास नहीं हुआ है, इस कारण से निवेश की कमी देखी जाती है। इससे यहां के उद्योगों को पूंजीगत् सहायता नहीं मिल पाती है।
4) **सरकारी प्रयास** – मध्य प्रदेश में सरकारी प्रयास की रफ्तार तो धीमी है ही, साथ ही सरकार ने निजी क्षेत्र को भी पर्याप्त प्रोत्साहन नहीं दिया। सरकार के द्वारा स्वतंत्र बाजार तंत्रों की व्यवस्था भी नहीं की गई है। गत वर्षों में सरकार ने निजी क्षेत्र को आकर्षित करने के लिए विभिन्न औद्योगिक सम्मेलन आयोजित किए, लेकिन उनमें से एक ने भी सफलता प्राप्त नहीं की।
5) **परम्परावादी समाज** – मध्य प्रदेश में कई ऐसे क्षेत्र हैं, जो आज भी कृषि पर ही निर्भर हैं। इस कारण से उद्योगों में पर्याप्त श्रम नहीं दिखाई देता।

उपर्युक्त कारकों को देखते हुए ही मध्य प्रदेश सरकार ने औद्योगिक विकास की दर को तीव्र करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं –

1) इसी वर्ष मार्च में 'मध्य प्रदेश निवेश प्रोत्साहन योजना' जारी की गई है। इस योजना के तहत् वृहद श्रेणी के उद्योग/निवेश परियोजनाओं को उद्योग संवर्धन नीति 2014 में उल्लिखित सुविधाएं प्रदान की जाएंगी।
2) इसी वर्ष प्रदेश सरकार ने मध्य प्रदेश सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम प्रोत्साहन योजना भी शुरू की है।
3) प्रदेश सरकार ने मध्य प्रदेश के संसाधनों एवं यहां निवेश के अवसर के मद्देनजर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय निवेशक सम्मेलन का आयोजन करने का भी निर्णय लिया है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

भारतीय अर्थव्यवस्था की वर्तमान चुनौतियां
Current Challenges of Indian Economy

क्रय शक्ति समता (PPP) के आधार पर विश्व की तीसरी सबसे बड़ी भारतीय अर्थव्यवस्था विगत 65 वर्षों में पर्याप्त रूप से बदल चुकी है। आज अर्थव्यवस्था का इंजन सेवा क्षेत्र बन चुका है। कृषि GDP हिस्सेदारी में 15 प्रतिशत के आसपास सिमट चुकी है, किन्तु रोजगार, खाद्यान्न एवं कच्चे माल की आगतों के रूप में उसका स्थान यथावत है। भारतीय अर्थव्यवस्था के सामने वर्तमान में घरेलू एवं बाह्य क्षेत्र दोनों मोर्चो पर कई चुनौतियां हैं। घरेलू क्षेत्र में GDP वृद्धि का लाभ सब तक पहुंचाना, गरीबी दूर करना एवं विशाल जनसंख्या को रोजगार तथा मानव विकास उपलब्ध कराना प्रमुख चुनौतियां हैं। दूसरी ओर बाह्य क्षेत्र पर जलवायु परिवर्तन एवं विश्व व्यापार जैसे मुद्दों पर विश्व मंच पर अपने हितों की रक्षा करना। वैश्विकरण के दौर में विश्व अर्थव्यवस्था के झटकों से स्वयं को बचाना आदि शामिल हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था की वर्तमान चुनौतियों का बिन्दुवार इस प्रकार है –

- **बढ़ती असमानता एवं व्यापक गरीबी**

आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (OECD) वर्ष 2011 में अपनी एक रिपोर्ट में कहा है कि भारत में 100 सबसे धनी लोगों की शुद्ध सम्पत्ति (Networth) 12,06,375 करोड़ रुपए थी, जो कुल GDP का 17 प्रतिशत है। OECD पुनः कहता है कि भारत में सबसे अधिक आय वाले ऊपरी 10 प्रतिशत लोगों के पास, निचले 10 प्रतिशत लोगों से 12 गुना अधिक सम्पत्ति थी। उदारीकरण ने इस समस्या को ओर ज्वलंत किया है। अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब होता चला गया। गरीबी इतनी बढ़ी है कि तेन्दुलकर/लकड़वाला/रंगराजन थोड़ी बहुत मत भिन्नता के साथ 30 से 40 प्रतिशत आबादी को गरीबी रेखा के नीचे रखते हैं।

इस तरह की स्थिति किसी भी अर्थव्यवस्था को विकसित व विकासशील जैसे जुमले से दूर रखते हैं। भारत में राजनीतिक लोकतंत्र तो है, किन्तु आर्थिक लोकतंत्र की अभी भी दरकार है। गरीबों की पहचान एवं उन्हें गरीबी से बाहर निकालना भारत के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। वृद्धि का लाभ सबको मिले, अर्थात् विकास समावेशी हो। असमानता कम से कम रहे। आने वाले वर्षों में भारत को इस मोर्चे पर कार्य करना होगा, वरना असंख्य गरीब व व्यापक असमानता के साथ, विकसित होने का तमगा हासिल करने की रेस में दौड़ना स्वयं के साथ छलावा मात्र है।

- **घटिया कौशल निर्माण एवं व्यापक बेरोजगारी**

जहां विश्व 3D प्रिंटर से वस्तु निर्माण की जुगत में लगा है वहीं भारत के सामने चुनौती है कि वह अपने असंख्य कौशलविहीन श्रमशक्ति का क्या करेगा? जहां तकनीक केवल एक दिन में भवन निर्माण में सक्षम हो जाएगी, तब असंख्य मजदूर कहा जाएंगे? क्या भारत की वर्तमान श्रम शक्ति इस तकनीकी संक्रमण के लिए तैयार है? भारत को श्रम शक्ति का कौशल निर्माण करना होगा एवं तकनीक से श्रम शक्ति का मिलन कराना होगा अन्यथा नई तकनीक दक्षता के अभाव में श्रम शक्ति बेकार रह जाएगी।

वर्तमान रोजगार अवसरों का लाभ उठाने के लिए भी उच्च कौशल एवं तकनीक दक्षता की आवश्यकता है। मैकाले के क्लर्क तैयार करने वाली इस शिक्षा प्रणाली के ऊपर नौकरी डॉट कॉम का एक सर्वे प्रहार करते हुए कहता है कि भारत में 60 प्रतिशत स्नातक (Graduates) उपलब्ध नौकरी को करने लायक नहीं है।

विगत वर्षों में भारत ने रोजगारविहीन वृद्धि (Jobbless Growth) का सामना किया है। यह इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि 1997–98 से 2004–05 तक GDP वृद्धि की दर 6.3 प्रतिशत रही, किन्तु रोजगार वृद्धि दर केवल 1.8 प्रतिशत रही। यह वहीं दौर था, जब 'शाइनिंग इंडिया' एवं 'फील गुड' के नारे चरम पर थे। 2004–05 से 2009–10 की अवधि में भी जब वृद्धि दर 9 प्रतिशत के आसपास थी, रोजगार वृद्धि केवल 0.22 प्रतिशत थी। यह दौर 'भारत निर्माण' के नारों का था। 12वीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में भी रोजगार निर्माण को एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया गया है।

मनरेगा इस ओर एक महान प्रयास था, किन्तु लम्बे समय तक श्रमशक्ति से गड्डे नहीं खुदवाए जा सकते, कोई स्थायी समाधान की आवश्यकता है। 'मैक इन इंडिया' एवं 'स्किल इंडिया' इस ओर सकारात्मक प्रयास है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **बढ़ती जनसंख्या एवं कमजोर मानव विकास**

वर्ष 2050 तक भारत को विश्व की सबसे बड़ी जनसंख्या का सामना करना पड़ेगा। समस्त अर्थशास्त्री एवं सामाजिक-राजनीतिक विचारक इस बात पर एक मत है कि विशाल जनसंख्या दबाव के अपने नुकसान है, इसकी दोहरी चुनौतियां हैं। प्रथम, तो यह कि वर्तमान सीमित संसाधन (Scarce Resocres) पर तो दबाव पड़ता ही है। द्वितीय, नई जनसंख्या के लिए संसाधन उपलब्ध कराना, रोजगार उपलब्ध कराना चुनौती है।

विगत दशकों में भारत ने जनसंख्या स्थिरता में उल्लेखनीय सफलता हासिल की है। कई राज्य कुल प्रजनन दर (TFR) के 2.1 के दर को प्राप्त कर चुके हैं, किन्तु उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, बंगाल व महाराष्ट्र जैसे कई राज्य TFR के वांछित लक्ष्य (Desired Aim) से काफी दूर है। यह क्षेत्रीय असमानता को बढ़ावा देते है, जिसका परिणाम प्रवजन (Migration) के रूप में सामने आता है।

भारत को अपनी अर्थव्यवस्था के सम्पूर्ण विकास सुनिश्चित करने के लिए यह आवश्यक है कि वह जनसंख्या स्थिरता के लिए प्रयास करें एवं बढ़ चुकी जनसंख्या के लिए संसाधन उपलब्ध कराए। यह व्यापक चुनौती है। विगत कई वर्षों से भारत का मानव विकास (HDI) में स्थान 130 देशों से ऊपर है। मानव विकास के अनेक संकेतकों शिक्षा, स्वास्थ्य, कुपोषण एवं प्रतिव्यक्ति आय के मोर्चे पर भारत का निष्पादन कमजोर है।

भारत के समक्ष यह गंभीर चुनौती है। अल्प मानव विकास के साथ हम विश्व शक्ति होने का दावा नहीं कर सकते। सरकार द्वारा शुरू किया गया स्किल इंडिया कार्यक्रम इस ओर बेहतरीन कदम है। GOOGLE एवं NASA जैसे संगठनों में 30 प्रतिशत से अधिक भारतीय होना इस बात का संकेत है कि भारतीय श्रम शक्ति किसी से पीछे नहीं है, केवल जरूरत है कौशल विकास के लिए संरचना उपलब्ध कराने की।

- **जलवायु परिवर्तन एवं धारणीय विकास (Climate Change & Sustainable Development)**

IPCC एवं अन्य थिंक टैंकों की विगत वर्षों में जारी विभिन्न रिपोर्टों से यह स्पष्ट है कि वैश्विक तापन (Global Warming) एवं जलवायु परिवर्तन (Climate Change) का सर्वाधिक प्रभाव ऊष्णकटिबंधीय क्षेत्रों पर पड़ने वाला है। इसमें गेहूं व चावल की फसल प्रमुख है। आने वाले वर्षों में भारत को गेहूं आदि की घटती उत्पादकता का सामना करना पड़ सकता है।

जलवायु परिवर्तन व वैश्विक तापन से कम वर्षा, अति वर्षा, सुखा, तूफान, चक्रवात आदि आपदाओं का बढ़ना सुनिश्चित है। पर्यावरणविदों का विचार कि ग्लैशियर पिघलने से समुद्र का जल स्तर बढ़ेगा, यह भारत के संदर्भ में विशेष खतरा है। भारत के कई औद्योगिक एवं सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण शहर समुद्र तटों पर ही बसे है।

ग्लेशियर पिघलने से हिमालयीन नदियां भी प्रभावित होगी, जिनमें दीर्घकाल में जलापूर्ति कम हो जाएगी। जलवायु परिवर्तन भारत के सामने एक वैश्विक चुनौती भी है। उसे विकसित देशों के दबाव के आगे बिना झुके अपने हितों की रक्षा करना है। ज्ञातव्य हो कि भारत जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर 'साझा किन्तु पृथक-पृथक उत्तरदायित्व' (CBDR) का समर्थन करता है। जलवायु परिवर्तन से निपटने के 2 तरीके हैं - अनुकलन (Adaptation) एवं न्यूनीकरण (Mitigation)।

भारत अनुकलन को प्राथमिकता देता है। तकनीक हासिल करना, जलवायु परिवर्तन के खतरों को कम करना एवं खतरों का सामना कर, न्यूनतम हानि के साथ विकास करना प्रमुख चुनौती है। जलवायु परिवर्तन पर एक्शन प्लान - 2008 एक अच्छा कदम है। सरकार का नवीनकरणीय ऊर्जा स्रोतों की ओर ध्यान देना भी आशा के संकेत है।

- **दम तौड़ती कृषि एवं आत्महत्या करते किसान**

निवेश की कमी जलवायु परिवर्तन की मार, उपज की अनिश्चितता और बिजली की आंख-मिचौली से जूझता किसान कृषि को छोड़कर दूसरा विकल्प ढूंढने को मजबूर है। बढ़ती लागत एवं घटता उत्पादन, विपणन समस्या एवं ऋण का मकड़जाल तत्काल सुधारों की मांग करते है। देश की श्रम शक्ति का 55 प्रतिशत कृषि पर निर्भर है। कृषि का उत्थान भारत के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। रोजगार, गरीबी, कुपोषण इन्हीं 55 प्रतिशत लोगों में ज्यादा है। विगत वर्णित सभी चुनौतियां इस पेराग्राफ की चुनौती से हल की जा सकती है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन एक बेहतरीन कदम साबित हुआ है। किसान केड्रिट कार्ड व किसान चैनल का प्रारंभ सकारात्मक कदम है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **विश्व अर्थव्यवस्था से सामंजस्य**

विश्व अर्थव्यवस्था के दैनदिन (Day Today) झटकों से अर्थव्यवस्था को सुरक्षित रखना एक बड़ी चुनौती है। तेल के मूल्यों में गिरावट भारत के लिए राहत लेकर आई है। किन्तु मध्य पूर्व (Middle East) का लगातार हिंसाग्रस्त रहना, हमें भविष्य के लिए तेल पर निर्भरता घटाने का संकेत देते हैं।

मुक्त व्यापार समझौते पर्याप्त रूप से सफल नहीं हो पाए हैं एवं भारत का बाजार चीनी डंपिंग से भरा पड़ा है। ऐसे में स्थानीय उत्पादकों की रक्षा करना भी एक चुनौती है। विश्व व्यापार संगठन के मंच पर भारत विकासशील देशों का नेतृत्वकर्ता बनकर उभरा है। कृषि व अन्य क्षेत्र के सब्सिडी मुद्दों को लेकर भी तनातनी बरकरार है। बाली समझौता (दिसम्बर, 2013) में भारत इस क्षेत्र में अपनी बात को मनवाने में सफल रहा, किन्तु चुनौती विद्यमान है।

विगत कई वर्षों से भारत में कालाधन, टैक्स हेवन देशों में जाता है एवं पुन: निवेश के रूप में वापस आ जाता है। संस्थागत निवेश अस्थायी होता है, जो कभी भी अर्थव्यवस्था को झटका दे सकता है। कालेधन को लेकर सरकार ने विभिन्न देशों के साथ समझौते किए हैं।

पिछले कुछ वर्षों से चालू खाते का घाटा उच्च स्तर पर बना हुआ था, जिससे भुगतान संतुलन की समस्या पैदा होती है। गोल्ड पर कस्टम ड्यूटी व तेल की कीमतों में गिरावट आने से इस क्षेत्र में राहत आई है, किन्तु भविष्य की संभावनाओं से इनकार नहीं किया जा सकता है। भारत को आयात निर्भरता घटाकर, निर्यात प्रोत्साहन करना चाहिए, ताकि विदेशी व्यापार में संतुलन अपने पक्ष में बना रहे।

भारत की रक्षा उपकरणों संबंधी मांग परम्परागत रूप से आयात पर निर्भर रही है। इतनी बड़ी अर्थव्यवस्था का अपनी रक्षा संबंध जरूरतों के लिए विदेशों पर पूरी तरह निर्भर रहना ठीक नहीं है। रक्षा उपकरणों का घरेलू उत्पादन बढ़ाना 'मेक इन इंडिया' कार्यक्रम का हिस्सा हो सकता है।

निष्कर्षत: 2008 की वैश्विक मंदी ने जिस तरह समूचे विश्व को अपनी चपेट में लिया और जिसके झटके बाद में 2011-12 तक भारत में भी महसूस किए गए। इस बात का संकेत है कि हमें वैश्विक अर्थव्यवस्था व उससे जुड़ी चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

- **अन्य चुनौतियां**

1) भ्रष्टाचार एवं कालाधन महत्वपूर्ण चुनौती है। कालेधन के कारण समान्तर अर्थव्यवस्था जन्म लेती है। प्रो. सूरजभान गुप्त के अनुमान के अनुसार देश में GDP के 45 प्रतिशत के आसपास कालाधन विद्यमान है।

2) भारत के समक्ष एक अन्य मुद्दा महंगाई का है। महंगाई का सबसे ज्यादा प्रभाव गरीबों एवं मध्यम वर्ग पर पड़ता है, जो उनके जीवनस्तर को गिराता है। दूसरी ओर महंगाई के कारण घरेलू उत्पाद महंगे हो जाते हैं, जो विश्व बाजार की प्रतिस्पर्धा में टिक नहीं पाते। परिणामस्वरूप निर्यात में गिरावट आ जाती है।

3) विगत कई वर्षों से व्यापारिक बैंकों का NPA बढ़ता जा रहा है। वर्तमान गर्वनर रघुराम राजन इसे भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए सबसे गंभीर चुनौती मानते हैं।

4) राजकोषीय मोर्चे पर भी समस्या बरकरार है। ऊँचा राजकोषीय घाटा किसी भी तरह अर्थव्यवस्था के हित में नहीं है। FRBM Act. के बाद सभी सरकारों ने इस ओर प्रयास किए हैं। वर्ष 2014-15 से सकारात्मक परिणाम आने चालू हुए हैं, किन्तु इसमें अभी और अधिक प्रयास की आवश्यकता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि अंग्रेजी दासता एवं शोषण से स्वतंत्र भारतीय अर्थव्यवस्था में विगत 65 वर्षों में विश्व मंच पर अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया है। इससे सिद्ध होता है कि भारत में क्षमता (Potential) तो है, इसे और अधिक बाहर लाने की आवश्यकता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

भारत में विकास का नियोजन
DEVELOPMENT PLANNING IN INDIA

ब्रिटिश शासन की स्थापना के साथ ही भारतीय अर्थव्यवस्था एक औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में तब्दील हो गई थी। ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था का संचालन ब्रिटिश हितों की पूर्ति हेतु किया गया। ब्रिटिश औपनिवेशिक आर्थिक नीतियों के समक्ष भारतीय कृषि, हथकरघा उद्योग एवं अन्य कुटीर उद्योगों ने दम तोड़ दिया। सर्वप्रथम दादाभाई नौरोजी ने ब्रिटिश आर्थिक नीतियों का शोषणपरक चरित्र उजागर किया। उन्होंने धन के निष्कासन सिद्धान्त के माध्यम से यह सिद्ध किया कि किस प्रकार भारतीय धन का निष्कासन ब्रिटेन की ओर होता है तथा वह पुनः निवेश के रूप में भारत आ जाता है।

यह वही दौर था जब समाजवाद का प्रभाव धीरे-धीरे बढ़ रहा था, जिसकी परिणति 1917 की बोल्शेविक क्रांति में होती है। इसका प्रभाव भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के चरित्र पर भी पड़ा। बढ़ते समाजवाद का प्रभाव तथा ब्रिटिश औपनिवेशिक शोषण ने भारतीय युवा नेता समाजवाद की ओर आकर्षित हुए। आगे चलकर कांग्रेस और उसके नेताओं ने भारत के आर्थिक विकास की आवश्यकता महसूस की। इस संदर्भ में सर्वप्रथम प्रयास सर एम. विश्वेशरैया ने की। उन्होंने 1934 में Planned Economy for India नामक किताब प्रकाशित की, जिसमें उन्होंने भारत के नियोजन की प्रस्तावाना रखी। कालांतर में कांग्रेस ने भी 1938 में नेहरू के अध्यक्षता में राष्ट्रीय नियोजन समिति का गठन किया था।

उल्लेखनीय है कि विभिन्न देशों के विपरीत भारत के नियोजन में बुर्जुआ वर्ग (पूंजीपति) ने भी पहल की। मुम्बई के 8 प्रमुख उद्योगपतियों द्वारा 1944 में अर्देशर दलाल की देख-रेख में एक योजना प्रस्तुत की, जिसे बॉम्बे प्लान कहा जता है। इनके अलावा भारत के विकास हेतु श्रीमन्नारायण ने गांधीवादी योजना, एम. एन. रॉय द्वारा जन योजना (People's Plan) तथा जयप्रकाश नारायण द्वारा सर्वोदय योजना प्रस्तुत की गई। वस्तुतः यह सभी योजनाएं यथार्थ रूप में परिणत नहीं हो पाई, किन्तु इनकी सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि इन्होंने भारत के आर्थिक विकास हेतु विचार प्रस्तुत किए, जो आगे चलकर नीति निर्माताओं के लिए मार्गदर्शक बने।

1947 में भारत की स्वतंत्रता के साथ ही नीति निर्माताओं के समक्ष कई तरह की चुनौतियां मौजूद थीं। एक ओर पिछड़ी हुई औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था, गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, असंतुलित विकास, पिछड़ी हुई कृषि, तो दूसरी ओर भारत विभाजन व साम्प्रदायिकता की त्रासदी ने भारत अर्थव्यवस्था की रीढ़ को हिला कर रख दिया। इस परिस्थितियों में देश के नीति निर्माताओं के समक्ष यह प्रश्न था कि भारत के विकास हेतु क्या रणनीति अपनाई जाए? नीति निर्माताओं ने यह महसूस किया कि बाजार तंत्र पर निर्भर रहकर देश की समस्याओं को हल नहीं किया जा सकता है। अतः उन्होंने आर्थिक नियोजन का मार्ग चुना। आर्थिक नियोजन कैसे कार्यान्वित हो, इसके लिए के. सी. नियोगी समिति (1946) का गठन किया गया। इस समिति की सिफारिश पर 15 मार्च, 1950 को एक संविधानेत्तर संस्था योजना आयोग का गठन किया गया, जिसे नीति आयोग के रूप में पुनर्गठित कर दिया गया है।

❐ आर्थिक नियोजन का अर्थ व तर्काधार (Meaning & Rationality of Economic Planning)

राज्य के नेतृत्व में एक निश्चित अवधि के लिए राष्ट्रीय प्राथमिकताओं को ध्यान में रखकर सीमित संसाधनों के अनुकूलतम दोहन हेतु बनाई गई रणनीति को आर्थिक नियोजन कहते हैं। आर्थिक नियोजन को बेहतर तरीके से कार्यान्वित करने हेतु योजना आयोग का गठन किया गया था। योजना आयोग के गठन से स्पष्ट था कि प्रारंभिक भारतीय विकास के नियोजन में सार्वजनिक क्षेत्र को बड़ी भूमिका निभानी थी। सार्वजनिक क्षेत्र के भारी भरकम स्थान एवं इस तरह के नियोजन की युक्ति के पीछे निम्नलिखित तर्काधार दिए गए -

1) **बाजार तंत्र की सीमाएं** - भारत की अर्थव्यवस्था पिछड़ी हुई थी। अतः इस व्यवस्था में विकास गति बाजार तंत्र की सहायता से तेज रख पाना संभवन नहीं था। निजी क्षेत्र केवल लाभ की दृष्टि से प्रेरित होता है। वह कम लाभ के क्षेत्र में कोई निवेश नहीं करता है, जैसे - शिक्षा, स्वास्थ्य आदि लाभ की दृष्टि से कमजोर निष्पादन दर्शाते हैं। दूसरा, दीर्घकालीन योजनाएं (रेलवे, सड़क आदि), जिनमें लाभ प्राप्ति 20 से 25 वर्षों में होती है, उनमें निजी क्षेत्र द्वारा निवेश संभव न था। ऐसे कई क्षेत्रों में सार्वजनिक क्षेत्र का उतरना अपरिहार्य था। अतः भारत ने आर्थिक नियोजन को अपनाया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

2) **सामाजिक न्याय की आवश्यकता** – नव स्वतंत्र राष्ट्र को निजी क्षेत्र के हाथों में नहीं छोड़ा जा सकता था। असंख्य गरीब, भूखे एवं कुपोषण से ग्रसित लोगों को न्याय की आवश्यकता थी। इसी प्रकार वर्षों शोषण आधारित रही भूमि व्यवस्था को भी न्याय की आवश्यकता है। अत: सार्वजनिक हस्तक्षेप आवश्यक था।

3) **विकास कार्यक्रमों के समग्र संदर्भ में संसाधनों का आवंटन** – भारत के पास संसाधनों का अभाव है, इसलिए यह आवश्यक है कि संसाधनों का आवंटन तर्कपूर्ण व उचित हो। विकास हेतु संसाधनों का आवंटन सार्वजनिक तथा दीर्घकालिक लाभ को ध्यान में रखकर किया जाना था। यह कार्य केन्द्रीकृत नियोजन प्रणाली के अभाव में संभव नहीं था। कुल मिलाकर संसाधनों का आवंटन देश की प्राथमिकताओं को ध्यान में रखकर किया जाना था, जो बाजार तंत्र में संभव नहीं था।

❒ भारतीय आर्थिक नियोजन की विशेषताएं (Importance Features of Indian Economic Planning)

भारतीय आर्थिक नियोजन की विशेषताएं निम्नलिखित हैं –

1) भारतीय आर्थिक नियोजन में केन्द्रीय स्तर पर एक शीर्ष संस्था है, जो योजनाओं का निर्माण करती है और उसके क्रियान्वयन को सुनिश्चित करती हैं।

2) भारतीय आर्थिक नियोजन का स्वरूप निर्देशात्मक (Indicative) है, आदेशात्मक (Imperative) नहीं, क्योंकि भारत ने मिश्रित अर्थव्यवस्था की अवधारणा को अपनाया है। आर्थिक क्रियाओं के संपादन में आदेशों के स्थान पर प्रोत्साहन के माध्यम से कार्य किया जाता है। सरकार केवल नीति बनाने का कार्य करती है, जिसका क्रियान्वयन निजी तथा सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों द्वारा किया जाता है।

3) भारतीय आर्थिक नियोजन में समाजवादी और पूंजीवादी दोनों विचारधाराओं का समन्वय दिखाई देता है।

4) भारतीय आर्थिक नियोजन में दीर्घकालिक एवं व्यापक योजनाएं लागू की जाती हैं। इसके अन्तर्गत सभी क्षेत्रों में सम्पन्न होने वाली आर्थिक क्रियाओं को शामिल किया जाता है।

5) आर्थिक नियोजन 2 प्रकार का होता है – भौतिक नियोजन तथा वित्तीय नियोजन। भारतीय आर्थिक नियोजन मूलत: वित्तीय न होकर भौतिक नियोजन है, आर्थात् – पहले भौतिक लक्ष्यों को निर्धारित किया जाता है और फिर उसके आधार पर वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था की जाती है।

6) भारतीय आर्थिक नियोजन केवल आर्थिक नियोजन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक नियोजन भी है। इसमें उत्पादन वृद्धि के साथ-साथ गरीबी, विषमता, अशिक्षा, स्वास्थ्य आदि पर भी ध्यान दिया गया है।

❒ भारतीय आर्थिक नियोजन के उद्देश्य (Objectives of Economic Planning)

विगत 6 दशकों की पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारूप से भारतीय विकास नियोजन के निम्नलिखित 7 उद्देश्य सामने आते हैं –

1) **आर्थिक संवृद्धि (Economic Growth)** – भारत की सभी पंचवर्षीय योजनाओं का मुख्य उद्देश्य आर्थिक संवृद्धि रहा है। यह माना जाता है कि आर्थिक संवृद्धि के साथ-साथ गरीबी दूर होगी, आर्थिक असमानताएं कम होंगी और रोजगार का विस्तार होगा, किन्तु वास्तव में ऐसा होना जरूरी नहीं है। अक्सर आर्थिक संवृद्धि का लाभ अपेक्षाकृत सम्पन्न वर्ग को होता है, जिससे देश में और आर्थिक असमानता बढ़ती है। भारत में भी यही हुआ है। भारत में आर्थिक वृद्धि दर तो बढ़ी, किन्तु साथ में विषमता भी बढ़ी।

2) **आत्मनिर्भरता (Self-Reliance)** – आर्थिक नियोजन का प्रमुख उद्देश्य भारत को आत्मनिर्भर बनाना था। 1950 में भारत 3 दृष्टियों से अन्य देशों पर निर्भर था। पहला, उसे खाद्यान्न आयात करना होता था, दूसरा, उद्योगों के विकास हेतु भारी इंजीनियरिंग सामान व पूंजीगत वस्तुए आयात करनी होती थीं एवं तीसरा, निवेश हेतु विदेशी सहायता की आवश्यकता थी। किन्तु आर्थिक नियोजन के माध्यम से आज भारत ने कई क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है।

3) **पूर्ण रोजगार (Total Employment)** – गरीबी को दूर करने के लिए बेरोजगारी की समस्या हल होनी चाहिए। वास्तव में बेरोजगारों की बढ़ती हुई संख्या गरीबी का कारण होती है। इसलिए बेरोजगारी निवारण की चर्चा विभिन्न योजनाओं में

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

की गई है और इसे भारतीय आर्थिक नियोजन का उद्देश्य बताया गया है।

4) **असमानताओं में कमी (Retuction in Inequalities)** - भारत में आर्थिक नियोजन का एक प्रमुख उद्देश्य सामाजिक न्याय के साथ आर्थिक विकास प्राप्त करना है, जिसके लिए आर्थिक असमानताओं को कम करना आवश्यक है। इसमें सबसे ज्यादा बल आर्थिक असमानताओं को दूर करने पर दिया गया है। सामाजिक न्याय के प्रमुख लक्ष्य हैं आय तथा संपत्ति के वितरण की विषमताओं में कमी लाना तथा शोषणविहीन समाज की स्थापना करना।

5) **गरीबी निवारण (Removal of Poverty)** - 1970 के दशक के अन्तिम वर्षों तक सरकार और योजना आयोग के नीति निर्धारकों का मत था कि अन्ततः आर्थिक संवृद्धि के लाभ रिस कर गरीबों तक पहुंच जाएंगे, जिससे उनकी स्थिति में सुधार होगा। लेकिन पिछली योजनाओं के अनुभव के आधार पर यह निष्कर्ष निकला कि आर्थिक संवृद्धि के लाभ गरीबों को आसानी से प्राप्त नहीं होते हैं। इसलिए नीति निर्माताओं ने 5वीं पंचवर्षीय योजना में गरीबी निवारण को भी आर्थिक नियोजन का उद्देश्य बनाया।

6) **आधुनिकीकरण (Modernization)** - आधुनिकीकरण आर्थिक क्रिया के रूप में अनेक ढांचागत और संस्थागत परिवर्तनों की ओर संकेत करता है। इसका अर्थ यह है कि आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में उत्पादन का ढांचा बदलेगा, उत्पादक क्रियाओं में विविधता आएगी, तकनीकी आगे बढ़ेगी और संस्थागत परिवर्तन होंगे। विज्ञान और अच्छी तकनीक के प्रयोग से उत्पादन का स्तर ऊँचा उठता है और समय के साथ आर्थिक वृद्धि की दर भी तेज हो जाती है। छठी पंचवर्षीय योजना में पहली बार आधुनिकीकरण के उद्देश्य का साफ-साफ उल्लेख किया गया था।

7) **संवृद्धि की समावेशिता एवं धारणीयता (Inclusiveness & Sustionability of Growth)** - 11वीं एवं 12वीं पंचवर्षीय योजना में संवृद्धि की समावेशिता एवं धारणीयता की बात की गई। समावेशी विकास से आशय है कि विकास प्रक्रिया में समाज के प्रत्येक वर्ग को भागीदार बनाते हुए विकास के लाभों का उचित एवं न्यायपूर्ण वितरण करना। 12वीं पंचवर्षीय योजना में समावेशिता के निम्नलिखित घटकों पर जोर दिया है - गरीबी उन्मूलन, वर्ग समानता, क्षेत्रीय संतुलन, आय असमानता, सशक्तिकरण आदि।

दूसरी ओर विश्वभर में फैलते हुए पर्यावरण प्रदूषण तथा मौसम परिवर्तन के खतरों को देखते हुए अब आर्थिक नियोजन में धारणीयता की आवश्यकता को भी स्वीकार किया जाने लगा है। अब हमें विकास की ऐसी रणनीति बनानी होगी, जिसमें पर्यावरण को कम से कम क्षति हो। 12वीं पंचवर्षीय योजना में भी कहा गया है कि कोई भी विकास प्रक्रिया आर्थिक गतिविधियों के पर्यावरण प्रभावों की अनदेखी नहीं कर सकती है और न ही प्राकृतिक संसाधनों की अंधाधुंध दोहन की अनुमति दे सकती है।

❐ पंचवर्षीय योजनाओं का मूलभूत दृष्टिकोण (Strategy of Indian Development Planning)

योजना आयोग की स्थापना से लेकर 2012 तक 12 पंचवर्षीय योजनाएं लागू की जा चुकी हैं। इन पंचवर्षीय योजनाओं को हम 3 चरणों में देख सकते हैं, जो निम्नलिखित हैं -

◆ प्रारंभिक पंचवर्षीय योजनाएं (1951-1980)

प्रथम पंचवर्षीय योजना 1 अप्रैल, 1951 से प्रारंभ हुई। यह योजना हेरोड-डोमर मॉडल पर आधारित थी। इस समय की सर्वप्रमुख प्राथमिकता खाद्यान्न आत्मनिर्भरता थी। अतः इस योजना में मुख्यरूप से **कृषि तथा सिंचाई** पर बल दिया गया है। इसी योजना में भाखड़ा नागल, दामोदर घाटी एवं हीराकुण्ड जैसी बहुउद्देशीय परियोजनाएं चालू की गईं। इसके अलावा गावों में आर्थिक व सामाजिक विकास हेतु 2 अक्टूबर 1952 को **सामुदायिक कार्यक्रम** प्रारंभ किया गया।

1956 में दूसरी पंचवर्षीय योजना प्रारंभ हुई, जिसमें पहली बार भारत की अर्थव्यवस्था और नियोजन का स्वरूप स्पष्ट किया गया। इसके लिए महालनोबिस मॉडल को स्वीकार किया गया। यह मिश्रित अर्थव्यवस्था पर आधारित था। इस योजना में **आधारभूत तथा भारी उद्योगों** पर विशेष बल के साथ ही देश के तीव्र उद्योगीकरण को प्रमुख लक्ष्य बनाया गया। इस रणनीति के पीछे यह तर्क था कि

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

भारी और आधारभूत उद्योगों के विकास के साथ छोटे उद्योग स्वयं ही तरक्की कर जाएंगे। भारत के अधिकत्तर बड़े सार्वजनिक उपक्रम, जिसमें राउरकेला, भिलाई, दुर्गापुर आदि इस्पात यंत्रों की स्थापना हुई। इंटीग्रल कोच फैक्ट्री तथा चितरंजन लोकोमोटिव द्वितीय पंचवर्षीय योजना की ही उपलब्धि रही। 2nd FYP में इन सभी प्रयासों में कृषि बहुत पीछे छूट गई थी, जिसका परिणाम वृद्धि पर भी पड़ा।

1961 में तृतीय पंचवर्षीय योजना में **कृषि क्षेत्र** को प्राथमिकता देते हुए खाद्यान्न आत्मनिर्भरता की प्राप्ति को पुनः योजना का लक्ष्य बनाया गया। किन्तु चीन व पाकिस्तान के साथ युद्ध, 1965-66 के भयंकर सूखे एवं अकाल के कारण यह योजना विफल हो गई। इन समस्याओं से निपटने के लिए 1966 में रुपए का अवमूल्यन किया गया, ताकि अर्थव्यवस्था को सहारा दिया जा सके। इससे घोर असफलता के बाद पंचवर्षीय योजना को स्थगित करके 1966 से 1969 के दौरान 3 वार्षिक योजनाएं चलाई गई, जिसका उद्देश्य तात्कालिक चुनौतियों से निपटना था। इसे योजना अवकाश (Plan Holiday) भी कहा गया।

1969 से चतुर्थ पंचवर्षीय योजना आरंभ हुई। इसका मुख्य उद्देश्य **स्थिरता के साथ आर्थिक विकास** तथा **आत्मनिर्भरता की प्राप्ति** था। इस योजना की रणनीति मुख्यतः नई कृषि रणनीति (हरित क्रांति) पर केन्द्रित थी, जिसके अन्तर्गत उन क्षेत्रों के संबंध में कार्यक्रमों पर बल दिया गया, जिनमें उत्पादन के बढ़ाने की ज्यादा क्षमता निहित थी। इसी योजना में ही 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण (1969), एमआरटीपी एक्ट (1969) तथा बफर स्टॉक की धारणा लागू हुई। इन समस्त प्रयासों के बावजूद हजारी कमेटी (1969) की रिपोर्ट ने यह स्पष्ट कर दिया था कि लाइसेंस राज्य का अत्यधिक फायदा बड़े औद्योगिक घराने उठा ले गए हैं, जिससे देश में व्यापक रूप से आय असमानता जनित हुई है।

5वीं पंचवर्षीय योजना में **गरीबी निवारण तथा न्यायपूर्ण वितरण** की बात कही गई। इस योजना को जनता पार्टी सरकार ने समय से एक वर्ष पूर्व ही समाप्त घोषित कर दिया तथा अनवरत योजना (Rolling Plan) के आधार पर छठी पंचवर्षीय योजना प्रारंभ की। यह योजना 1980 में सत्ता परिवर्तन के साथ ही समाप्त हो गई। इस प्रकार इन प्रारंभिक 5 पंचवर्षीय योजनाओं में औसत वृद्धि दर 3.5 प्रतिशत रही। योजनावार संवृद्धि दर की उपलब्धि लक्ष्य के तुलना में इस प्रकार रही –

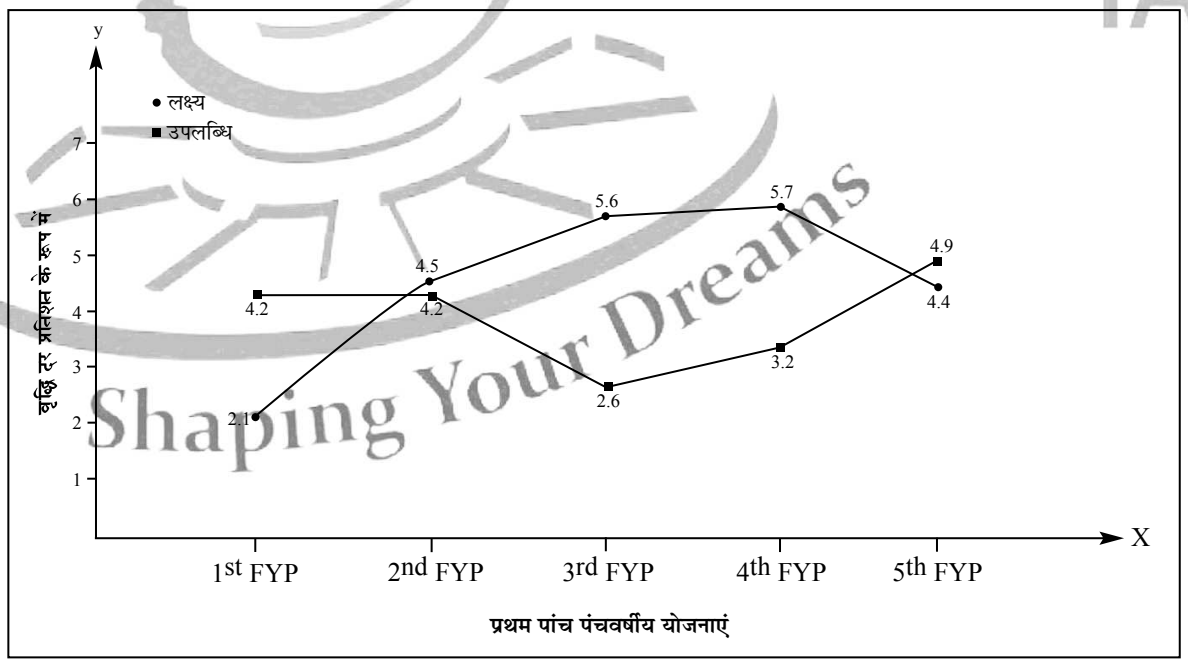

- **1980 का दशक एवं पंचवर्षीय योजनाएं**

6th FYP में बड़े जोर-शोर से गरीबी हटाओं के नारे के साथ कई रोजगार कार्यक्रम की शुरुआत की गई। लाभदायक रोजगार अवसरों के सृजन तथा तकनीकी व आर्थिक आत्मनिर्भरता के उद्देश्यों को महसूस किया गया। गरीबी निवारण, आर्थिक विकास, आधुनिकीकरण, आत्मनिर्भरता, सामाजिक न्याय योजना के प्रमुख उद्देश्य थे। अर्थव्यवस्था के **आधुनिकीकरण** को पहली बार छठी पंचवर्षीय योजना में अपनाया गया। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सरकार ने कुछ विशेष रोजगार कार्यक्रम, जैसे – राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP), ट्राइसेम (TRYSEM) आदि लागू किए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

7th FYP भी पिछली योजनाओं का ही ब्ल्यू प्रिंट साबित हुई, किन्तु इसमें **सामाजिक न्याय** पर अधिक जोर दिया गया। इस प्रकार इस योजना में भी संवृद्धि, आधुनिकीकरण, आत्मनिर्भरता और सामाजिक न्याय पर जोर था।

यह वहीं समय था, जब भारत प्रो. राजकृष्णा की हिन्दू वृद्धि दर से बाहर आ रहा था। इस योजना में उदारीकरण की प्रथम लहर दिखाई दी। जब तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने इस कथन के साथ कि 'सार्वजनिक क्षेत्र कई क्षेत्रों में घूस आया है, जहां इसे नहीं होना था', कई उद्योगों को लाइसेंस में छूट दी।

7वीं योजना में हासिल 5.2 वृद्धि की दर अत्यधिक सार्वजनिक व्यय द्वारा जनित थी, जिसने राजकोषीय घाटे को जन्म दिया। आयात उदारीकरण से ऐसी वस्तुओं का आयात बढ़ा, जिनसे विलासिता की वस्तुओं को प्रोत्साहन मिला। इसने चालू खाते के घाटे को बढ़ाया। इसी अवधि में सरकार ने राजकोषीय घाटे को पूरा करने के लिए बड़ी-बड़ी मात्रा में विदेशों से ऋण लिए। यह भी भुगतान संतुलन के गड़बड़ाने का कारण बना। इन सभी का सम्मिलित प्रभाव बाह्य क्षेत्र पर भी पड़ा एवं 1990 तक आते-आते भारत के द्वार पर एक विशाल आर्थिक संकट खड़ा था। यहां तक कि आयात के लिए भारत के पास केवल 3 सप्ताह के लिए ही विदेशी मुद्रा भण्डार पर्याप्त बचा था। अनेक राजनीतिक व आर्थिक कारणों से 1991 व 1992 में 2 वर्ष पुन: Plan Holiday साबित हुए। 80 के दशक में पंचवर्षीय योजनाओं की औसत संवृद्धि दर 5.9 प्रतिशत रही एवं योजनावार संवृद्धि की दर लक्ष्य तुलना में इस प्रकार रही –

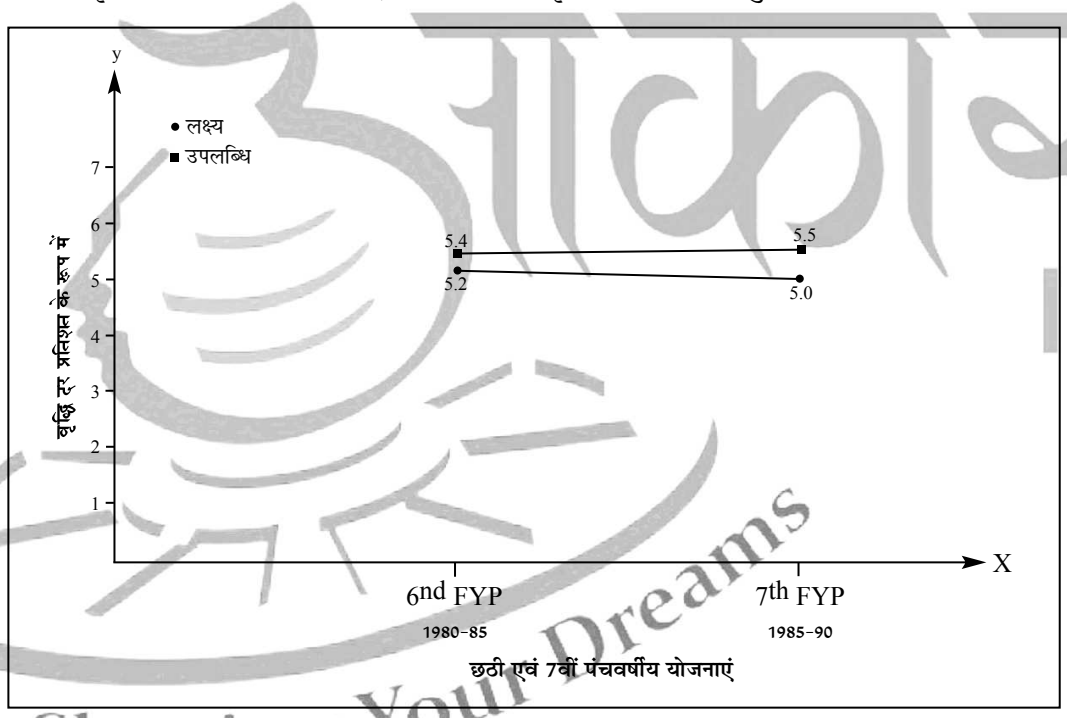

- **उदारीकरण का आगमन एवं पंचवर्षीय योजनाएं**

1992 में 8वीं पंचवर्षीय योजना शुरू हुई। इसके लिए राव-मनमोहन मॉडल को आधार बनाया गया। इसका प्रारूप LPG के महान प्रयासों के सार में लाया गया था। 24 जुलाई, 1991 की औद्योगिक नीति से स्पष्ट था कि अब सरकार की भूमिका आर्थिक क्रियाओं में पहले जैसी नहीं रही। अब निजी क्षेत्र की भूमिका का विस्तार किया गया और बाजार कारकों को अपेक्षाकृत अधिक महत्व दिया गया। 8th FYP में **मानव संसाधन विकास** पर ध्यान दिया गया। शताब्दी के अंत तक लगभग पूर्ण रोजगारी की प्राप्ति का लक्ष्य रखा गया। इस प्रकार रोजगार सृजन, जनसंख्या नियंत्रण, साक्षरता, शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, खाद्य पदार्थों की उपलब्धि आदि प्रमुख लक्ष्य थे।

1997 में 9वीं पंचवर्षीय योजना शुरू हुई। 9th FYP का मूलमंत्र **सामाजिक न्याय के साथ संवृद्धि** था, जो स्वयं अर्थव्यवस्था की किताबों में काफी पुराना हो चला था। 9th FYP भी पूर्ववर्ती सरकार की उदारीकरण के पद चिह्नों पर चलने में गुजर गई। मानव विकास, रोजगार आदि 8वीं पंचवर्षीय योजना के मुख्य मुद्दे इस पंचवर्षीय योजना में भी केन्द्रीय समस्या के रूप में स्वीकार किए गए।

1 अप्रैल, 2002 से 10वीं पंचवर्षीय योजना ऐसे समय लागू की गई, जब अर्थव्यवस्था में आर्थिक सुधारों का दौर अपने चरम पर था। 10वीं योजना की रणनीति 2 आधारभूत तत्वों पर आधारित थी – विगत वर्षों में प्राप्त उपलब्धियों को निरन्तर बनाए रखते हुए इन्हीं

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

पर आगे का विकास करना और विगत वर्षों में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के विकास में आई बाधाओं को प्राथमिकता के आधार पर दूर करना। इस प्रकार निर्धनता अनुपात में कमी लाना, साक्षरता को बढ़ावा देना, गांवों में पेयजल, प्रदूषण नियंत्रण तथा जनसंख्या रोकथाम आदि प्रमुख लक्ष्य थे। 10वीं योजना में सर्वाधिक बल **कृषि विकास** पर था, जबकि ऊर्जा पर सर्वाधिक व्यय किया गया।

1 अप्रैल, 2007 से 11वीं पंचवर्षीय योजना लागू हुई। इस पंचवर्षीय योजना का शीर्षक '**अधिक तीव्र व अधिक समावेशी वृद्धि**' (Faster & more Inclusive Growth) की प्राप्ति था। इसमें बेरोजगारी दूर करना, कृषि विकास की दर को बनाए रखना, श्रम शक्ति में उच्च गुणवत्ता पैदा करना, साक्षरता दर को बढ़ाना आदि प्रमुख लक्ष्य थे। उच्च शिक्षा में 3 बिन्दुओं Expansion, Equity, Excellence (E^3) पर ध्यान केन्द्रीत किया गया। संचार के क्षेत्र में गांवों तक टेलीफोन सुविधा बढ़ाना तथा प्रत्येक गांव को ब्राण्डबैंड सुविधा से जोड़ना प्रमुख उद्देश्य था। उदारीकरण के बाद पंचवर्षीय योजनाओं की औसत संवृद्धि दर 6.5 प्रतिशत रही एवं योजनावार संवृद्धि की दर लक्ष्य तुलना में इस प्रकार रही –

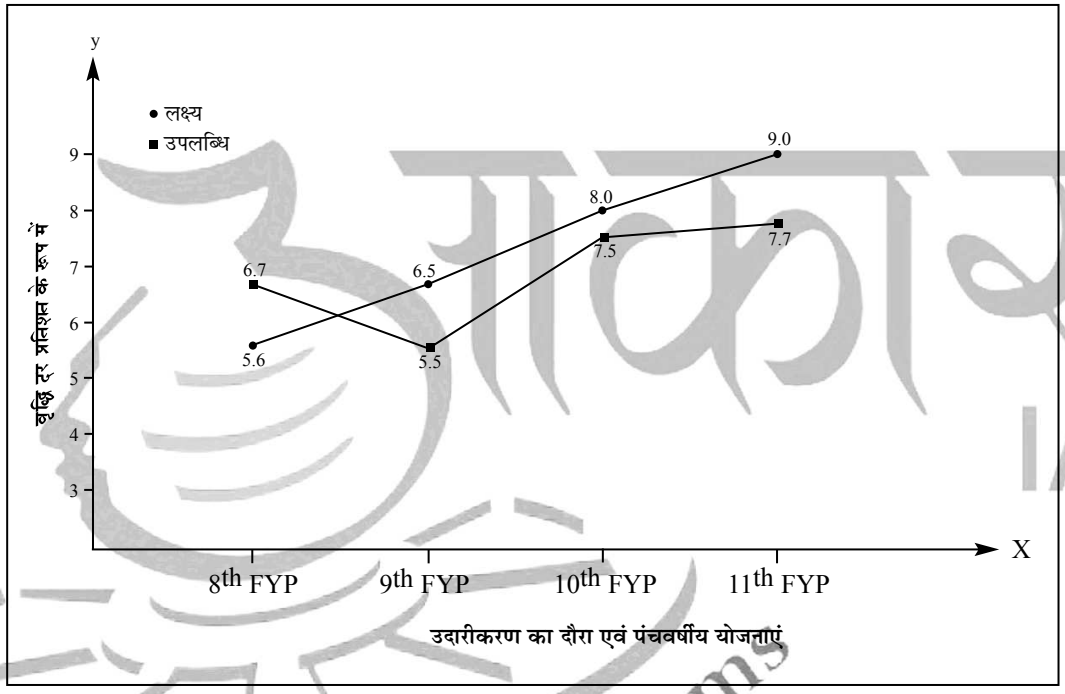

उदारीकरण का दौरा एवं पंचवर्षीय योजनाएं

❒ 12वीं पंचवर्षीय योजना

12वीं पंचवर्षीय योजना की शुरुआत 2 सतत् वैश्विक संकट पहले 2008, फिर 2011 की पृष्ठभूमि में हुई। 12वीं पंचवर्षीय योजना का शीर्षक '**तीव्र, अधिक समावेशी एवं सतत् वृद्धि**' (Faster, Sustainable & more Inclusive Growth) है। 12वीं पंचवर्षीय योजना में 3 वैकल्पिक मार्ग चुने जाएंगे – पहला, मजबूत समावेशी विकास, दूसरा, अधूरे कार्य पूरे करना एवं तीसरा, पॉलिसी लोकजाम को दूर करना।

❖ 12वीं पंचवर्षीय योजना के मुख्य लक्ष्य

➢ आर्थिक संवृद्धि

1) सकल घरेलू उत्पाद की वास्तविक वृद्धि 8 प्रतिशत तक बढ़ाना।

2) कृषि क्षेत्र में 4 प्रतिशत, उद्योग क्षेत्र में 9.6 प्रतिशत तथा सेवा क्षेत्र में 10 प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा गया।

3) 11वीं योजना की तुलना में प्रत्येक राज्य को औसतन उच्च आर्थिक वृद्धि प्राप्त करने का लक्ष्य रखा।

➢ गरीबी और रोजगार

1) गरीबी के वर्तमान स्तर को 10 प्रतिशत को कम करना।

2) अतिरिक्त रोजगार के अवसर पैदा करते हुए शिक्षित बेरोजगारी को दूर करना।

3) कृषि क्षेत्र में अलग से कौशल सृजित करना।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- **शिक्षा**
  1) योजना के अन्त तक स्कूलिंग के औसत **7** वर्ष का लक्ष्य रखा गया।
  2) लिंग व सामाजिक अन्तराल पर आधारित भेदभाव समाप्त करना।
- **स्वास्थ्य**
  1) शिशु मृत्यु दर (IMR) 25, मातृत्व मृत्यु दर (MMR) 1 प्रति 1000 तथा 0-6 आयु वर्ग में **950** लिंगानुपात को प्राप्त करना।
  2) 0-3 वर्ष के बच्चों में कुपोषण के स्तर को कम करना।
  3) प्रजनन दर को प्रतिस्थापन स्तर 2.1 तक लाना।
- **आधारभूत ढांचा एवं ग्रामीण अवसंरचना**
  1) आधारभूत ढांचे में **9** प्रतिशत तक निवेश को बढ़ाना।
  2) सिंचाई में सकल सिचित क्षेत्र में 90 मिलियन हेक्टेयर से बढ़ाकर **103** मिलियन हेक्टेयर तक लाना।
  3) ग्रामीण भारत में टेली डेन्सिटी को **70** प्रतिशत तक बढ़ाने का लक्ष्य है।
  4) ग्रामीण भारत में 12वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक **50** प्रतिशत ग्राम पंचायत को निर्मल ग्राम का स्तर अवश्य प्राप्त करना होगा।
- **पर्यावरण एवं सतत् विकास**
  1) ग्रीन कवर को 1 मिलियन हेक्टेयर प्रतिवर्ष बढ़ाना।
  2) 30,000 मेगावॉट की अतिरिक्त पुर्नसंभरणीय ऊर्जा को बढ़ाना।
  3) उत्सर्जन क्षमता को भी 2020 तक 25 प्रतिशत तक कम करना।
- **सेवाएं**
  1) इस योजना के अंत तक 90 प्रतिशत भारतीय परिवारों में बैंकिंग सुविधाओं पहुंचाने का महत्वकांक्षी लक्ष्य भी निर्धारण किया गया है।
  2) सभी प्रमुख सब्सिडी व कल्याणकारी योजनाओं को प्रत्यक्ष लाभ हस्तान्तरण में शामिल करते हुए आधार प्लेटफार्म का प्रयोग भी शामिल है।

❐ आर्थिक नियोजन की उपलब्धियां (Achievements of Plans)

सोवियत संघ के तर्ज पर भारत ने 1951 में भारत ने पंचवर्षीय योजनाओं की शुरुआत की और तब से लेकर वर्तमान तक 12 पंचवर्षीय योजनाओं को हम देख चुके हैं। इन सभी योजनाओं का विश्लेषण किया जाए, तो हम निम्नलिखित उपलब्धियां पाते हैं -

- **संवृद्धि प्रक्रिया का तीव्र होना**

आजादी के बाद अर्थव्यवस्था की गतिहीनता को तोड़ पाना मुश्किल था। निजी क्षेत्र इस कार्य को कर पाने में असमर्थ था। ऐसी स्थिति में भारतीय आर्थिक नियोजन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्रथम पंचवर्षीय योजना की शुरुआत में संवृद्धि की दर 2.7 प्रतिशत थी, जो विगत कई वर्षों से 5 प्रतिशत से ऊपर बनी हुई है। 1950 में विश्व की सबसे पिछड़ी अर्थव्यवस्थाओं में शुमार भारत आज PPP पर विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। हाल ही में भारत ने चीन को पछाड़ कर, सर्वाधिक संवृद्धि वाली अर्थव्यवस्था का गौरव प्राप्त कर लिया है।

- **आत्मनिर्भरता**

आर्थिक नियोजन का प्रमुख लक्ष्य आत्मनिर्भरता प्राप्त करना है। आत्मनिर्भरता के 3 क्षेत्र - खाद्यान्न, तकनीकी एवं विदेशी सहायता हैं। इनमें से भारत ने खाद्यान्न व तकनीकी क्षेत्र में लगभग आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है। इस समय भारत के निर्यातों में इंजीनियरिंग वस्तुओं में प्रथम स्थान है। तात्पर्य यह है कि भारत का पूंजी आधार अब काफी मजबूत है। खाद्यान्न के क्षेत्र में बफर स्टॉक बना हुआ

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

है। ये आत्मनिर्भरता के सूचक हैं।

- **आधारिक संरचना**

आधारिक संरचना के विकास के बारे में निर्धारित लक्ष्य प्राप्त नहीं किए जा सके, लेकिन साथ ही यह भी सच है कि इस दिशा में आयोजित ढंग से प्रयास न किया गया होता, तो परिवहन, सिंचाई और ऊर्जा क्षेत्र बहुत पिछड़े हुए होते। आज भारत में 7 हजार किमी लम्बी रेल्वे लाइन का निर्माण, 5 हजार लम्बी रेल्वे लाइन का बिजलीकरण का जाल एवं 1950-51 में 2.26 करोड़ हेक्टेयर सिंचाई सुविधा का 11.32 करोड़ हेक्टेयर (2011-12) में हो जाना तथा 1955 में 3400 MW बिजली उत्पादन का 2012 तक 2,09,276 मेगावॉट बिजली उत्पादन पहुंच जाना योजनाकाल की उपलब्धि बताते है।

- **कृषि में संस्थागत सुधार एवं हरित क्रांति**

योजनाकाल में कृषि क्षेत्र में किए गए प्रयास एवं हरित क्रांति का ही परिणाम था कि भारत को खाद्यान्न अनुपलब्धता के कारण पड़ने वाले अकालों से मुक्ति मिल गई। 1986 में बफर स्टॉक की धारणा ने जन्म लिया एवं भारत बम्पर उत्पादन प्राप्त करने लगा। इन सबका लाभ नीचे किसानों तक पहुंचा या नहीं? यह अन्य विचार का विषय है।

- **सार्वजनिक क्षेत्र का विकास**

भारत में आर्थिक नियोजन की एक बड़ी उपलब्धि सार्वजनिक क्षेत्र का विकास है। यही सार्वजनिक क्षेत्र काफी हद तक भारत में आर्थिक विकास का इंजन है। आजादी के समय इसका विस्तार बहुत सीमित था। आर्थिक नियोजन की अवधि में कुल निवेश का लगभग 40 प्रतिशत निवेश सार्वजनिक क्षेत्र में किया गया है। इसके अलावा सार्वजनिक क्षेत्र में स्थापित वित्तीय संस्थाओं ने निवेश के लिए बचतों या साधनों को एकत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

❐ आर्थिक नियोजन व पीछे छूटे क्षेत्र (Economic Planning & Neglected Areas)

1) **व्यापक गरीबी**, वर्तमान में विद्यमान है। जो तेन्दुलकर/एस. आर. हाशिम/रंगराजन/लकड़वाला के विभिन्न अनुमान थोड़े-बहुत अन्तर के साथ स्पष्ट करते हैं कि भारत में 30 से 40 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा के नीचे रखती हैं। विश्व बैंक PPP पर 80 करोड़ लोगों को ऐसी श्रेणी में रखता है, जो 1.25 डॉलर प्रतिदिन से कम पर जीवन व्यतीत करते हैं।

2) **प्राथमिक से सीधे तृतीयक क्षेत्र में छलांग व संरचना गड़बड़ाना** - यूरोप एवं अमेरिकी देशों में विकास सर्वप्रथम कृषि क्षेत्र में फिर उद्योग क्षेत्र में और सबसे अंत में सेवा में हुआ। महान अर्थशास्त्री कॉलिन-क्लार्क भी इस तरह के संक्रमण को सही मानते हैं, किन्तु भारतीय अर्थव्यवस्था का संक्रमण कृषि क्षेत्र से सीधे सेवा क्षेत्र में हुआ। औद्योगिक क्षेत्र पर ज्यादा प्रभाव नहीं पड़ा। इसका पहला नुकसान यह हुआ कि कृषि क्षेत्र से छूटी श्रमशक्ति उद्योगों में खपाई नहीं जा सकी तथा दूसरा नुकसान यह हुआ कि सेवा क्षेत्र की कम श्रमशक्ति अधिक GDP का लाभ उठा ले गई। इससे आर्थिक विषमता को बढ़ावा मिला।

3) **पूर्ण रोजगार** का लक्ष्य अधूरा रह गया। व्यापक तौर पर प्रच्छन्न बेरोजगारी का पाया जाना इस बात का प्रमाण है। एक अनुमान के अनुसार ग्रामीण श्रमशक्ति का 28 प्रतिशत भाग प्रच्छन्न बेरोजगार है। जो रोजगार तैयार किए गए, वे भी कौशल विकास के अभाव में कुछ लोगों तक सीमित रह गए।

4) **मानव विकास** का उचित लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका, विगत कई वर्षों से भारत का विश्व HDI में स्थान 130 देशों से ऊपर बना हुआ है। जो आर्थिक नियोजन के सामाजिक क्षेत्र में असफलता की कहानी कहते हैं। व्यापक रूप में स्वास्थ्य सुविधाओं का कमी मातृत्व मृत्यु दर का 178 प्रति 1 लाख पर बना रहना, 42 प्रतिशत बच्चों का कुपोषण से ग्रसित होना। कमजोर मानव विकास की ओर इशारा करते हैं।

5) **किसानों की आत्महत्या,** खेती छोड़ते किसान एवं किसानों का खेतिहर मजदूर में परिवर्तन होना, इस बात का घोतक है कि पंचवर्षीय योजनाओं के कृषि क्षेत्र में प्रयासों एवं हरित क्रांति का लाभ शायद बड़े किसानों को ही मिला। NSSO ने अपनी रिपोर्ट में स्वीकार किया कि विगत 17 वर्षों में 3 लाख किसानों ने आत्महत्या की। पुन: NSSO कहता है कि आज 42 प्रतिशत किसान कृषि छोड़ने को राजी है। यह आंकड़े एवं तथ्य, भारतीय नियोजन की सबसे काली तस्वीरों में से एक है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

6) **क्षेत्रीय असमानता** में वृद्धि हुई। जहां एक ओर राज्यों के मध्य असमानाता बढ़ी, वहीं दूसरी ओर स्वयं राज्यों के अन्दर ग्रामीण व नगरीय असमानता बढ़ी। नियोजन का बड़ा लाभ केवल शहरों तक सीमित होकर रह गया। प्रवजन के विशाल आंकड़े इस बात की पुष्टि करते हैं।

❐ आर्थिक नियोजन की असफलता के कारण (Reasons of Faliure)

नियोजन की आंशिक सफलता व व्यापक असफलता क्यों हुई? यह अर्थशास्त्रियों के दिमागी जुगाली करने का मुख्य विषय बनकर रह गई। डी. आर. गाडगिल कहते हैं कि भारतीय नियोजन का कोई सुस्पष्ट 'पॉलिसी फ्रेम नहीं' है, वहीं अशोक रूद्र का मानना है कि हमारे नियोजन का '**बहुक्षेत्र मॉडलों**' पर आधारित नहीं होना था। यह केवल पश्चिम की भौंडी नकल साबित हुई। उनके विचार में एक क्षेत्र को पहले बड़ा धक्का (Big Push) दिया जाता, फिर अन्य क्षेत्र विकास करते हैं।

सहयोगात्मक संघवाद के अनुयायी योजना आयोग के अत्यधिक केन्द्रीकृत नीति निर्माण संस्था के रूप से खुश नहीं थे। उनका तर्क था कि इतनी बड़ी अर्थव्यवस्था जहां निजी क्षेत्र की भूमिका भी पर्याप्त है, वहां नियोजन का निर्णय केवल एक केन्द्रबिन्दु से लेना गलत होगा। वास्तविकता पसंद अर्थशास्त्री कहते हैं कि योजनाओं का ढांचा, स्वरूप कैसा ही क्यों न रहा हो, अगर सही कार्यान्वयन (Implenetation) होता तो शायद बुरी से बुरी हालत में यह स्थिति नहीं होती। इसके अलावा भी कुछ अन्य कारण निम्नलिखित हैं –

1) भारतीय आर्थिक नियोजन के पास स्पष्ट वित्तीय रणनीति का अभाव रहा। यह धारणा स्पष्टत: गलत है कि जो भौतिक रूप से संभव है, वह वित्तीय रूप से संभव होगा ही। वित्तीय क्षेत्र में उतने प्रयत्न नहीं किए गए, जितने आवश्यक है। यही कारण है कि वित्तीय साधनों का उचित मात्रा में प्राप्त करना कठिन हो गया।

2) उद्योग में निवेश को आर्थिक विकास का सबसे महत्वपूर्ण निर्धारक माना गया। नीति निर्माताओं का यह विश्वास था कि निवेश दर को बढ़ाने से आर्थिक विकास दर को तेज किया जा सकेगा, जिससे सभी आर्थिक समस्याओं का समाधान हो सकेगा। किन्तु इसका परिणाम यह हुआ कि आर्थिक विकास के कई निर्धारकों, जैसे – बेहतर प्रबंधन, उन्नत कौशल तथा मानव पूंजी की अवहेलना की गई।

3) नियोजनकर्ताओं के पास रोजगार हेतु कोई स्पष्ट रणनीति नहीं है। वह यह मानते रहे कि उत्पादक और रोजगार में सीधा धनात्मक संबंध है, अर्थात् उत्पादन में वृद्धि होने से रोजगार के स्तर में उसी अनुपात में वृद्धि होती है, किन्तु 12 पंचवर्षीय योजनाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि उत्पादन और रोजगार के संबंध में कोई सीधा धनात्मक संबंध नहीं है।

4) भारतीय नियोजन में एक लम्बे समय तक सार्वजनिक क्षेत्र पर अत्यधिक बल दिया गया। लम्बी अवधि तक घाटे में चल रहे सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को चालू रखा गया, जिसने आर्थिक विकास में अवरोध पैदा किया।

5) इनके आलावा भ्रष्टाचार, अफसरशाही, राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी आदि कारकों ने भी नियोजन को प्रभावित किया।

यह सच है कि नियोजन को अपनी उद्देश्यों की प्राप्ति में पूरी तरह से सफल नहीं कहा जाएगा। लेकिन उससे भी बड़ा सच यह है कि नियोजन ने औद्योगिक ढांचे के साथ-साथ वह सामाजिक व आर्थिक आधारभूत ढांचा प्रदान किया, जिस पर देश आज प्रगति पथ पर अग्रसर है और वैश्विकरण की चुनौतियां का सामना करने के लिए सक्षम है। फिर भी संतुलित विकास के रूप में चुनौती इसके समक्ष मौजूद है। सरकार द्वारा इस दिशा में आगे बढ़ने की कोशिशें लगातार की जा रही है।

❐ नीति आयोग (नेशनल इंस्टीट्यूट फॉर ट्रांसफारमिंग इंडिया-NITI)

यह भारत सरकार द्वारा गठित एक नया संस्थान है, जिसे **1 जनवरी, 2015** को योजना आयोग के स्थान पर बनाया गया है। यह संस्थान सरकार के थिंक टैंक के रूप में सेवाएं प्रदान करेगा और उसे निर्देशात्मक एवं नीतिगत गतिशीलता प्रदान करेगा। योजना आयोग और नीति आयोग में मूलभूत अंतर यह है कि इससे केंद्र से राज्यों की तरफ चलने वाले एक पक्षीय नीतिगत क्रम को बदलकर विकासवादी परिवर्तन के रूप में राज्यों की वास्तविक और सतत् भागीदारी से बदल दिया जाएगा।

नीति आयोग ग्राम स्तर पर विश्वसनीय योजना तैयार करने के लिए तंत्र विकसित करेगा और इसे उत्तरोत्तर उच्च स्तर तक पहुंचाएगा। आयोग राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय विशेषज्ञों के सहयोग से ज्ञान, नवाचार व उद्यमशीलता के विकास हेतु प्रणाली बनाएगा। इसके अतिरिक्त

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

यह कार्यक्रमों और नीतियों के क्रियान्वयन के लिए प्रौद्योगिकी उन्नयन और क्षमता निर्माण पर जोर देगा।

- **उद्देश्य**

1) सशक्त राज्य से सशक्त राष्ट्र – इस मंत्र से सहकारी संघवाद को बढ़ाना।
2) ग्राम स्तर पर योजनाएं बनाने के लिए तंत्र विकसित करना।
3) राष्ट्रीय सुरक्षा के हितों और आर्थिक नीति में तालमेल बिठाना।
4) आर्थिक प्रगति से वंचित रहे वर्गों पर विशेष ध्यान देना।
5) रणनीतिक और दीर्घावधि के लिए नीति तथा कार्यक्रम का ढांचा बनाना।

- **संरचना**

अध्यक्ष – प्रधानमंत्री।

उपाध्यक्ष – प्रधानमंत्री नियुक्त करेंगे (वर्तमान में अरविंद पानगढ़िया, जिनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'दि इमर्जिंग जाइअन्ट' है)

गवर्निंग काउंसिल – सभी मुख्यमंत्री, केंद्र शासित प्रदेशों के उपराज्यपाल।

क्षेत्रीय परिषद – जरूरत के आधार पर गठित, मुख्यमंत्री व क्षेत्र के लेफ्टिनेंट गवर्नर को शामिल किया गया (इनकी अध्यक्षता नीति आयोग के उपाध्यक्ष करेंगे)।

विशेष आमंत्रित सदस्य – विशेषज्ञ, जो प्रधानमंत्री द्वारा नामित किए जाएंगे।

पूर्णकालिक सदस्य – अधिकतम 5।

अंशकालिक सदस्य – अग्रणी विश्वविद्यालय शोध संस्थानों और संबंधित संस्थानों से अधिकतम दो पदेन सदस्य, अंशकालिक सदस्य बारी के आधार पर होंगे।

पदेन सदस्य – अधिकतम 4 केंद्रीय मंत्री प्रधानमंत्री द्वारा नामित होंगे।

मुख्य कार्यकारी अधिकारी – केन्द्र के सचिव स्तर का अधिकारी, निश्चित कार्यकाल के लिए प्रधानमंत्री नियुक्त करेंगे। वर्तमान में इसके सीईओ अमिताभ कान्त हैं।

तीन विभाग होंगे – नए नीति आयोग में तीन विभाग होंगे। पहला इंटर-स्टेट काउंसिल की तर्ज पर होगा।
– दूसरा लंबे समय की योजना बनाने और उसकी निगरानी का काम करेगा।
– तीसरा डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर व यूआइडीएआइ को मिलाकर बनेगा।

Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

आधारिक संरचना विकास एवं मुद्दे
Infrastructure Development & Issues

❐ अवसंरचना की अवधारणा (Concept of Infrastructure)

अवसंरचना से आशय उन मूलभूत कारकों से है, जो अर्थव्यवस्था की उत्पादक गतिविधियों में सहायक व्यवस्था (Supporting System) की तरह कार्य करता है, जिससे अर्थव्यवस्था का आर्थिक व सामाजिक विकास होता है। अवसंरचना विकास के अभाव में किसी अर्थव्यवस्था का विकास करना तो दूर वह स्वयं ही शैशवावस्था में दम तोड़ देती है। अवसंरचना के बिना दैनिक जीवन की सुचारू होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। कल्पना करें ऐसे जीवन की जहां सड़कों का अभाव हो, यातायात न हो, संचार एवं शिक्षण संस्थान न हो। यह कल्पना हमें सीधे आदिम (Premitve) अवस्था में ले जाती है।

अर्थव्यवस्था में जब भी बात आधारिक संरचना पर जाती है, तो सड़के, पुल, रेलवे, संचार आदि पर आकर टीक जाती है, किन्तु हर्शमैन जैसे बड़े अर्थशास्त्री आधारिक संरचना को 2 भागों में बांटते हुए कहते हैं कि सड़कें, पुल, परिवहन, संचार आदि तो केवल भौतिक अधोसंरचना (Physical Infrastructure) है। वहीं वे शिक्षा, स्वास्थ्य, कौशल विकास के संसाधन आदि को सामाजिक अधोसंरचना (Social Infrastructure) में रखते हैं।

हर्शमैन सामाजिक अधोसंरचना को महत्व देते हुए अर्थव्यवस्था विकास का एक अहम हिस्सा मानते हैं। वे अधोसंरचना विकास के लिए रास्ता बताते हुए कहते हैं कि या तो सरकार सीधे बड़ा निवेश कर अधोसंरचना स्थापित कर दें एवं फिर निजी क्षेत्र इसका उपयोग करें, जिससे अर्थव्यवस्था विकास के पथ पर अग्रसर हो। वहीं वे दूसरा रास्ता बताते हैं कि निजी क्षेत्र निवेश करें, जिसके फलस्वरूप अधोसंरचना विकास की कमी पैदा हो और राजनीतिक दबाव के कारण अवस्थापना विकसित करने के लिए सरकार बाध्य हो जाए। 1991 के उदारीकरण के बाद भारत में दोनों प्रत्यागम का मिश्रण अपनाया गया एवं सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) का आगमन हुआ आज भारत में अवसंरचना विकास से जुड़ी अधिकाधिक परियोजनाएं PPP मॉडल पर ही संचालित हो रही हैं।

❐ अवसरंचना व आर्थिक विकास (Infrastructure & Economic Development)

अवसंरचना निम्नलिखित रूप से अर्थव्यवस्था विकास में सहायता प्रदान करती है –

1) **अवसंरचना उत्पादकता बढ़ाती है** – अवसंरचना से उत्पादकता का सीधा संबंध है। यदि हम कृषि क्षेत्र का उदाहरण ले, जो भारत में साधारणत: मानसून पर निर्भर है, वहां सिंचाई जैसी अवसंरचना के अभाव में दम तोड़ सकती है। अत: सिंचाई की स्थिर संरचना होने पर वह सीधे तौर पर उत्पादकता को बढ़ाती है। अब बात द्वितीय क्षेत्र की करें, तो कोयला, पेट्रोलियम, विद्युत आदि ऊर्जा स्रोतों के अभाव में औद्योगिक उत्पादन असंभव है। तृतीय क्षेत्र अथवा सेवा क्षेत्र की उत्पादकता भी अवसंरचना के बगैर अधूरी है। तीव्र परिवहन एवं संचार के अभाव में पर्यटन जैसी सेवा का विस्तार कर पाना असंभव है।

2) **अवसंरचना विनियोग को त्वरित करती है** – यह बात नितान्त रूप से स्वीकार करनी होगी कि निजी निवेश (जो केवल लाभ की दृष्टि से प्रेरित होगी) के बिना अवसंरचना वाले देश में शायद ही निवेश करें। देशी निजी निवेशक भी एक अच्छी अवसंरचना वाले माहौल में गति पा सकते हैं।

3) **अवसंरचना विकास, ऑउट सोसिंग को बढ़ावा देती है** – विश्व का बी. पी. ओ सेवा विगत वर्षों में भारत को ऑउट सोर्स हुई है। भारत इस क्षेत्र में विश्व नेता बनकर उभरा है। विशाल सूचना प्रौद्योगिकी में दक्ष मानव संसाधन की वजह से ही भारत को आई. टी. सॉफ्टवेयर में अग्रणी भूमिका निभाने का अवसर मिला है।

4) **अवसंरचना विकास प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) को आकर्षित करता है** – अल्पविकसित एवं विकासशील देश सदैव पूंजी की कमी से जुझते हैं। पर्याप्त अवसंरचना के अभाव में निवेश प्रभावित होता है, जबकि पर्याप्त अवसंरचना FDI को आकर्षित करता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❒ अवसंरचना का वर्गीकरण (Classification of Infrastructure)

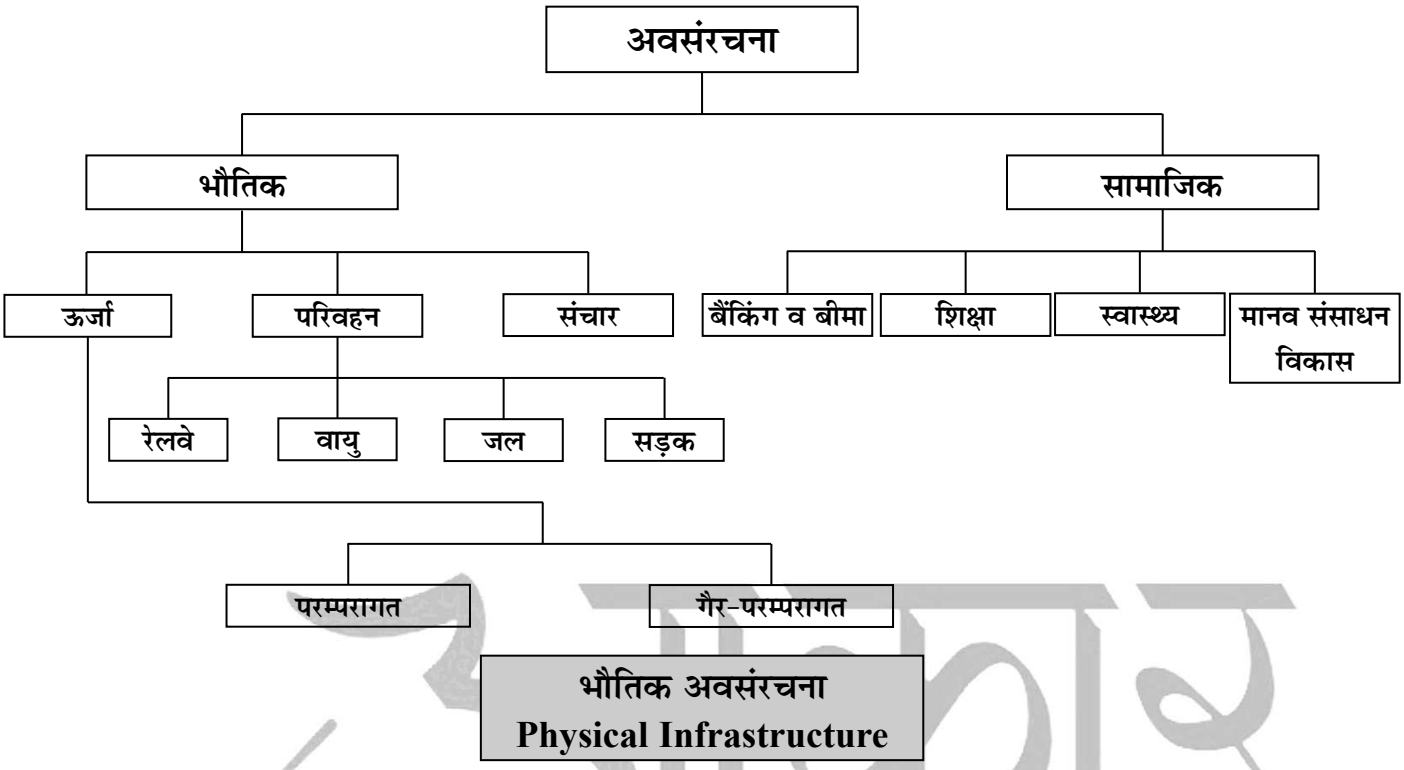

भौतिक अवसंरचना
Physical Infrastructure

❒ ऊर्जा (Enegry)

किसी देश के आर्थिक विकास पर सीमा बंधन लगाने वाला सबसे महत्वपूर्ण एकमात्र कारण ऊर्जा की उपलब्धि है। भारत एक बड़ा ऊर्जा उत्पादक और उपभोक्ता भी है। आज भारत विश्व का 7वां सबसे बड़ा ऊर्जा उत्पादक व 5वां सबसे बड़ा उपभोक्ता है। अध्ययन की दृष्टि से इसे हम 2 भागों में बांट सकते हैं - परम्परागत एवं गैर-परम्परागत।

- **परम्परागत ऊर्जा स्रोत**

1) **विद्युत शक्ति या बिजली (Power or Electricity)** - जैसा कि 5वीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप में कहा गया है कि बिजली ऊर्जा का बहुमुखी रूप है तथा आर्थिक विकास की धुरी है। घरेलू प्रकाश, खाद्य परिष्कण उद्योग, एल्यूमिनियम उर्वरक, पेट्रो रसायन आदि हर उद्योग बिजली पर निर्भर है। भारत में 2011-12 में बिजली का वास्तविक उत्पादन 928.2 मिलियन किलो मेगावॉट हो गया है। आज भारत में विद्युत शक्ति के संबंध दोहरी चुनौती (Dual Challanges) है। पहली चुनौती सब तक बिजली पहुंचाना, अर्थात् - मांग के अनुरूप पूर्ति पैदा करना है। दूसरी चुनौती कम लागत पर बिजली सुनिश्चित करना। भारत में पॉवर स्टेशनों में आयातित पेट्रोलियम का आगत के रूप में उपयोग होता है, जो काफी महंगा है। इस प्रकार विद्युत उत्पादन की लागत बढ़ जाती है।

चूंकि विद्युत स्वयं भी कई उद्योगों की आगत (Input) है। इस प्रकार यह स्फीतिक दबाव (Inflationary Pressure) पैदा करती है। वहीं दूसरी ओर 32 रुपए प्रतिदिन से कम पर जीवन व्यतीत करने वाली करोड़ों जनता के लिए ऊँची लागत पर बिजली उपभोग कर पाना दुष्कर है। आवश्यक है कि तकनीक व नवीनकरणीय स्रोतों से कम लागत वाली वहनीय (Affordable) विद्युत का उत्पादन व वितरण हो।

- **भारत में अब तक हुई विद्युत उत्पादन क्षमता का आलोचनात्मक अवलोकन**

बिजली की आँख मिचौली से जुझते किसान, बिजली की कमी से बंद होती गन्ना फैक्ट्रियां एवं ग्रामीण विद्युतीकरण के क्षेत्र में क्षणिक सफलता इस बात की ओर इशारा करती है कि भारत को इस क्षेत्र में अभी मीलों सफर करना है। भारत के विद्युत उत्पादन प्लांट लगातार कोयले की कमी से जुझते रहते हैं। कोयला घोटाले के बाद सुप्रीम कोर्ट द्वारा खदान लाइसेंस के निरस्त होने से इसने और गंभीर रूप धारण कर लिया है। भारत में बिजली क्षेत्र में लक्ष्यों व उपलब्धियों के बीच भारी अन्तर के निम्नलिखित कारण हैं -

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

1) परियोजनाओं को बनाने और उनके कार्यान्वयन में अत्यधिक विलंब होता है। इसके कई कारण हैं, जैसे - परियोजना के लिए जमीन ग्रहण करने में देरी, कमजोर प्रबंध व्यवस्था, इस्पात, सीमेंट तथा बिजली उपकरण की आपूर्ति में देरी, श्रम विवाद, वित्तीय कठिनाइयां इत्यादि।

2) राज्य बिजली बोर्डों (State Electricity Boards) की कार्यविधि में कई कमजोरियां हैं तथा उन्हें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, जैसे - प्रबंधकीय अकुशलताएं, वित्तीय संसाधनों का अभाव, जो उनके भविष्य में कार्यक्रमों में अड़चने पैदा करता है, केन्द्रीय बिजली संस्थाओं को भुगतान करने की असमर्थता, व्यापक संचारण व वितरण (Transmission and Distribution) हानियां इत्यादि।

3) बिजली वितरण से प्राप्त आय, इसकी लागत भी पूरा नहीं कर पाती है। आंकड़े यह स्पष्ट करते हैं कि अधिकतर राज्यों में बिजली की बिक्री से जो आय प्राप्त होती है, वह उसका उत्पादन करने की लागत से कम है।

दिल्ली सरकार द्वारा बिजली बिल माफ करना व विद्युत की दरों को कम करना : केस स्टडी

दिल्ली की नवनिर्वाचित सरकार जो बिजली के कम दामों व बिल माफी के साथ सत्ता में आई थी, ने जब विद्युत के दामों को कम किया तो देश में एक नई बहस छिड़ गई। इस संबंध में प्रश्न खड़ा होता है कि बिजली उत्पादन कम्पनियां, जो ऊँची लागत का सामना कर रही है, उनके नुकसान की भरपाई कौन करेगा? यदि सरकार करती है, तो वह सब्सिडी के बोझ में दब जाएगी और अन्ततः यह सब्सिडी करदाता के जेब से निकलेगी।

अतः सरकार लोकप्रियता के नाम पर लोकलुभावन नीति की बजाय, तकनीक जनन पर निवेश करें। विद्युत की लागत कम हो। नवीनकरणीय स्रोतों को बढ़ावा मिले। बिल माफी की जगह उद्देश्य हर घर तक बिजली की पहुंच हो। बिजली की स्वयं की भी लागत होती है, तेल लगता है, मशीनरी लगती है, मानव संसाधन लगते हैं, वितरण व संचारण की भी लागत है। अतः इसे मुफ्त में नहीं बांटा जा सकता है।

क्या आप उपर्युक्त अवलोकन से सहमत हैं - हां या नहीं? यदि हां, तो आप बाजार समर्थक हैं और यदि नहीं, तो आप समाजवाद समर्थक हैं।

❐ कोयला (Coal)

कोयले को भारत में ऊर्जा का एक मुख्य साधन माना जाता है। कुल थर्मल बिजली उत्पादन में कोयले पर आधारित बिजली उत्पादन का हिस्सा लगभग 80 प्रतिशत है। देश में भू-गर्भीय अनुमानों के अनुसार 1 अप्रैल, 2010 को कोयले के कुल भंडार 27,861 करोड़ टन थे। अन्य ईंधनों की तुलना में कोयले की स्थिति भिन्न है, क्योंकि उसे अन्य स्रोतों, जैसे - बिजली व गैस में परिवर्तित किया जा सकता है। कोयले के महत्त्व और देश में इसके भंडारों को देखते हुए योजना काल के शुरू से ही कोयला उद्योग के वैज्ञानिक आधार पर विकास के प्रयास किए गए हैं।

कोयला क्षेत्र में उत्पादन के पीछे रह जाने व आपूर्ति की कमी के कई कारण हैं। सबसे महत्वपूर्ण कारण खनन तकनीक का पिछड़ापन है। दूसरी समस्या कोयले की कीमत को लेकर है। कोयले की ऊँची कीमत से ही निजी निवेशक आकर्षित होते हैं, किन्तु ऊँची कीमत अन्य उद्योगों की लागत को बढ़ा देगी। तीसरी समस्या लाइसेंस आवंटन के तरीके व लाइसेंस की बोली को लेकर है। क्या ऊँचे दामों पर लाइसेंस बेचकर केवल सरकारी खजाने की सेहत का ख्याल रखा जाए या कम दामों पर लाइसेंस देकर निजी निवेश को आमंत्रित कर तकनीक प्रोत्साहन दिया जाए? CAG अपनी तमाम रिपोर्ट में केवल सरकारी खजाने की सेहत का ध्यान रखता है, किन्तु एक आम नागरिक तक ऊर्जा जरूरत पहुंचाना, सरकारी खजाने से ज्यादा महत्वपूर्ण है।

2G स्पेक्ट्रम नीलामी प्रकरण में सुप्रीम कोर्ट भी यह स्वीकार कर चुका है कि प्राकृतिक संसाधनों की नीलामी का आधार अधिक आय का अर्जन करना न होकर, देशहित में सेवा पहुंचाना भी हो सकता है। सरकार ने रंगराजन कमेटी के सुझाव कोल खदानों के आवंटन, नीलामी, वितरण सभी प्रक्रिया को ई-नेटवर्क आधारित कर दिया है, ताकि इस क्षेत्र में पारदर्शिता बनी रहे।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ तेल एवं गैस (Oil & Gas)

भारत में पेट्रोलियम के भंडार सीमित हैं फिर भी ऊर्जा के इस स्रोत पर हमारी निर्भरता बढ़ती गई है। औद्योगिकीकरण और परिवहन के विकास के परिणामस्वरूप पेट्रोलियम के उपभोग में कुछ वृद्धि तो होनी ही थी। दुर्भागय की बात यह है कि इस देश में जो औद्योगिक व परिवहन ढांचा खड़ा किया गया है वह पेट्रोलियम के बढ़ते हुए उपयोग पर आधारित है एवं पेट्रोलियम के लिए हम आयात पर निर्भर है। इस निर्भरता को घटाने के लिए 1955 में तेल व प्राकृतिक गैस कॉरपोरेशन (Oil & Natural Gas Corporation) तथा 1959 में आयल इंण्डिया लिमिटेड (Oil India Limited) की स्थापना की गई। इनके प्रयासों के उत्साहवर्द्धक परिणाम प्राप्त हुए। विश्व की इतनी बड़ी अर्थव्यवस्था भारत को तेल के लिए आयात के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता। मध्य पूर्व के लगातार अस्थिर होते हालात एवं 1973 के तेल आघात (Oil Shock) के कटु अनुभव से सबक लेते हुए हमें नितान्त नए कदमों की आवश्यकता है।

भारत में तेल एवं गैस वितरण का सम्पूर्ण बाजार सब्सिडी की भेंट चढ़ा हुआ है। सम्पूर्ण भारत में तेल एवं गैस पर समान रूप से सब्सिडी प्रदत्त की जाती है। जो न केवल उपभोग को बढ़ावा देती है, बल्कि आयातित बिल को बढ़ाते हुए चालू खाते के घाटे (CDA) में भी योदान देती है। यह प्रश्न सदैव खड़ा होता है कि क्या 15 लाख की Scorpio चलाने वाले को सब्सिडी दी जानी चाहिए। सब्सिडी का बड़ा लाभ बड़ी गाड़ी वाले ही पाते हैं क्योंकि Scorpio का Averege 14 किमी/घंटा है, वहीं मध्यम वर्गीय की स्कूटर का 40 किमी/घंटा है। रंगराजन कमेटी की वृहत सिफारिशों के बाद सर्वप्रथम डीजल मूल्य को बाजार शक्तियों पर छोड़ा गया व फिर पेट्रोल के मूल्य को भी बाजार शक्तियों के निर्धारण पर छोड़ दिया गया।

ज्ञातव्य है कि तेल वितरण कम्पनियां बाजार कीमत से कम पर अपने उत्पाद बेचती है एवं इसकी क्षतिपूर्ति सरकार द्वारा की जाती है। भारत में सब्सिडी का यह एक अन्य बड़ा बोझ है। सरकार सब्सिडी का एक बड़ा हिस्सा नवप्रवर्तन, खोज, शोध व तकनीकजनन पर खर्च कर सकती है। इन्हीं सब्सिडी प्रयोग उर्जा के नवीनकरणीय स्रोतों को बढ़ावा देने में किया जा सकता है।

❐ परमाणु ऊर्जा (Atomic Enery)

भारत, विश्व के उन चुनिंदा देशों में से है, जिन्होंने परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में काफी प्रगति की है। भारत में परमाणु ऊर्जा की सहायता से स्थापित बिजली उत्पादन क्षमता 4,560 मिलियन वॉट है। परमाणु ऊर्जा विकास कार्यक्रमों का उद्देश्य आत्मनिर्भरता प्राप्त करना है। परन्तु फिलहाल इस व्यापक कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए न्यूक्लियर पॉवर कॉर्पोरेशन (Nuclear Power Corporation) के पास उपयुक्त मात्रा में वित्तीय संसाधन उपलब्ध नहीं है। इसके अलावा यह भी एक चिन्ता का विषय है कि परियोजनाओं को लागू करने में अत्यधिक देरी हुई है, जिससे परियोजनाओं की वास्तविक लागतें बहुत बढ़ गई हैं।

अमेरिका के साथ हुए परमाणु करार के बाद भारत को परमाणु वनवास से मुक्ति मिल गई है। इसके बाद ऑस्ट्रेलिया व कनाडा के साथ भी इसी तरह के परमाणु करार हुए। आज विश्व के कई देश भारत को परमाणु भट्टियां बेचने के लिए लाईन में खड़े हैं, तो वहीं दूसरी ओर भारत में स्थानीय स्तर पर जैतापूर से लेकर कुडनकुलम तक इसका विरोध हो रहा है।

पर्यावरण हितों, स्वास्थ्य चिंताओं को लेकर विशाल विरोध प्रदर्शन है। फूकुशिमा संयंत्र की त्रासदी देख चुके विश्व में परमाणु ऊर्जा को लेकर संशय बरकरार है। विदित हो कि अमेरिका अपनी पुरानी भट्टियों को ही बेचता है जहां आजकल स्वयं अमेरिका का इस ऊर्जा से मोहभंग हो चुका है। वह एक नए क्षेत्र शैल गैस ऊर्जा में अपने कदम बढ़ा रहा है, जिसके बल पर वह मध्यपूर्व से तेल निर्भरता कम करने के फेर में है।

क्या भारत का परमाणु ऊर्जा की ओर इस तरह भागना जायज है या सर्तकता के साथ शैल गैस की ही तरह अन्य नवीनकरणीय स्रोत की खोज की जाए? बढ़ते जलवायु परिवर्तन की भविष्य में सबसे ज्यादा मार हम जैसे ऊष्णकटिबंधीय देशों पर ही पड़ने वाली है। क्या हमें अभी से अपने आपको नवीनकरणीय स्रोतों के साथ नहीं ढाल लेना चाहिए?

◆ ऊर्जा के गैर-परम्परागत स्रोत (Non-conventional Energy Sources)

ऊर्जा के पारम्परिक स्रोतों से ही भारत के ऊर्जा संकट का समाधान संभव नहीं। इस कारण गैर-परम्परागत और नवीनकरणीय स्रोतों को बढ़ावा देना आवश्यक है। सौभाग्यवश भारत में गैर-परम्परागत स्रोत जैसे, - जैव ऊर्जा, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि की भारी क्षमता

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

विद्यमान है। यह ग्रामीण क्षेत्रों की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने में काफी सहायक हो सकते हैं। पूरे विश्व में आजकल पर्यावरण अनुकूल विकेन्द्रित ऊर्जा प्रणालियों पर जोर दिया जा रहा है। भारत में गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोतों का अनुमानित संभाव्य 1,83,000 मिलियन वॉट है। इसके विपरीत, 31 मार्च, 2010 तक उपलब्धि मात्र 19,972 मेगावॉट थी।

1) **सौर ऊर्जा (Solar Energy)** - भारत जैसे ऊष्णकटिबंधी देश में गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोतों में सौर ऊर्जा का विशेष महत्व है। भारत में सौर ऊर्जा, सौर भट्टियों और सौर पॉवर प्रणालियों के प्रयोग को उच्च प्राथमिकता देनी होगी। इससे विशेषकर ग्रामों की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकता है। सौर ऊर्जा के व्यवसायिक प्रयोग को बढ़ाया जा सकता है। होटलों, भोजनालयों, सार्वजनिक प्रतिष्ठानों आदि जगहों पर इनका उपयोग किया जा सकता है।

2) **पवन शक्ति (Wind Power)** - बीते समय में जब बिजली का विकास बहुत कम हुआ था, पवन-चक्कियों की सहायता से पवन शक्ति का उत्पादन किया जाता था तथा उसका प्रयोग दूरदराज क्षेत्रों में लघु सिंचाई, कृषि उपयोगों तथा लकड़ी काटने जैसे कार्यक्रमों में होता था। हाल की अवधि में बिजली की आसान उपलब्धि से पवन शक्ति का महत्व काफी कम हो गया है। अब एक बार फिर से पवन शक्ति की ओर सरकार एवं निजी कंपनियों का ध्यान आकर्षित हुआ है। हाल में किए गए कुछ अध्ययनों से यह बात सामने आई है कि देश के कई क्षेत्रों में यद्यपि पवन की औसत गति पवन आधारित उपकरणों को चलाने के लिए बहुत कम है तथापि वर्ष के उन महीनों में यह गति अपेक्षाकृत काफी अधिक होती है जब अतिरिक्त सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसलिए, देश में पवन शक्ति के उपयोग की संभावनाएं मौजूद हैं। 31 मार्च, 2010 को पवन शक्ति द्वारा जनित बिजली केवल 14,155 मेगावाट थी जबकि संभाव्य 45,195 मेगावाट अनुमानित है।

3) **बायो गैस (Biogas)** - पशुओं के अपशिष्ट (Waste) को बायो गैस में परिवर्तन करने की प्रौद्योगिकी काफी विकसित है तथा लगभग 40 लाख बायो गैस प्लांट कार्यरत हैं। इस क्षेत्र में मुख्य भूमिका खादी व ग्रामीण उद्योग आयोग निभा रहा है। आजकल और भी कुछ संस्थाएं गैस उत्पादन की कुशलता में सुधार लाने तथा बायो गैस इकाइयों की पूंजी लागत को कम करने के लिए प्रयास कर रही हैं। बायो गैस का अनुमानित शक्ति 16,881 मेगावॉट है। परन्तु इसके विपरीत 31 मार्च, 2010 को बायो गैस के उत्पादन के लिए कुल स्थापित क्षमता केवल 9,710 मेगावॉट थी। बायो गैस कार्यक्रम के माध्यम से ग्रामीण परिवारों की ऊर्जा आवश्यकताओं की आपूर्ति करके ईंधन पर निर्भरता को कम किया जा सकता है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों के पर्यावरण में भी सुधार किया जा सकता है तथा जैव खाद (Organic Manure) प्राप्त की जा सकती है। इस कार्यक्रम द्वारा ऊर्जा आपूर्ति के स्थानीय स्त्रोंतों को विकसित करने की काफी संभावनाएं पैदा की जा सकती हैं।

- **भारत में ऊर्जा क्षेत्र में क्षमता विस्तार के लिए उपाय**

1) प्राकृतिक स्रोतों के आंवटन, वितरण, उपभोग आदि के संदर्भ में पारदर्शी प्रक्रिया अपनाई जाए। किसी भी तरह बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधनों का अनुचित तथा अंधाधुंध वितरण सही नहीं है।

2) सब्सिडी की बजाय, व्यय का एक बड़ा हिस्सा तकनीक प्रोत्साहन में खर्च किया जा सकता है। अनुसंधान व शोध एक बड़े निवेश की मांग करते हैं।

3) परम्परागत क्षेत्र में हुए आपूर्ति अंतराल को भरने के लिए गैर परम्परागत स्रोतों पर निर्भरता बढ़ाई जा सकती है।

4) पूर्ति आधारित प्रत्यागम (Supply Based Approch) के साथ-साथ मांग आधारित प्रत्यागत (Dimand Based Approch) पर कार्य हो, अर्थात - ऊर्जा जरूरतों की मांग का विविधीकरण (Diversification) किया जाए। निजी वाहन की पेट्रोलियम मांग को सार्वजनिक परिवहन पर, स्ट्रीट लाइटों की विद्युत मांग को सौर ऊर्जा पर एवं कोयला जनित विद्युत मांग को सौर, वायु व ज्वारीयजनित विद्युत उत्पादन से प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

5) विद्युत क्षेत्र चोरी की घटनाओं से काफी जुझता है। एक बड़ा विद्युत का हिस्सा चोरी हो जाता है। इस क्षेत्र में भी व्यापक सुधार की जरूरत है।

6) पेट्रोलियम एवं गैस सब्सिडी केवल वंचित वर्ग तक ही पहुंचे इस दिशा में कदम उठाएं जा सकते हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

7) विद्युत का एक बड़ा हिस्सा संप्रेषण (Transmission) के समय क्षय हो जाता है। इस क्षेत्र में भी तकनीक सुधार की आवश्यकता है।

❒ परिवहन (Transportation)

भारत के निरंतर विकास में सुचारू और समन्वित परिवहन प्रणाली की महत्वपूर्ण भूमिका है। वर्तमान प्रणाली में यातायात के अनेक साधन जैसे रेल, सड़क, तटवर्ती नौ-संचालन, वायु परिवहन इत्यादि शामिल हैं। पिछले कुछ वर्षों में इस क्षेत्र में उल्लेखनीय वृद्धि के साथ-साथ इसका विस्तार हुआ है और क्षमता भी बढ़ी है। भारत के कुल मार्गों का 83 प्रतिशत सड़कें, 9 प्रतिशत रेलें, 6 प्रतिशत वायुमार्ग एवं 2 प्रतिशत जलमार्ग हैं। वर्तमान में भारत के सुदूर क्षेत्र अभी-भी किसी भी प्रकार के परिवहन से अछुते हैं। इन पिछड़े क्षेत्रों में परिवहन के अभाव में विकास प्रक्रिया के लाभ नहीं पहुंच पाते हैं। वर्तमान उपलब्ध सड़कें भी गुणवत्ताहीन हैं। सार्वजानिक निजी भागीदारी आने के पश्चात् टोल की ऊँची लागतें भी विवाद का विषय हैं। आवश्यकता इस बात की है कि सब तक परिवहन सुविधाओं को पहुंचाया जाए और जो पहुंच चुका है, उन्हें गुणवत्तापूर्ण व वहनीय बनाया जाए।

❒ संचार (Telecommunication)

टेलीफोन उपभोक्ताओं की कुल संख्या के आधार पर भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा संचार नेटवर्क वाला देश है। साथ ही भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा इंटरनेट यूजर बेस है। हालांकि अभी भी भारत के 5वें हिस्से तक ही इंटरनेट की पहुंच है। मोबाइल उपभोक्ता के मामले में भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। भारत में दूरसंचार घनत्व (टेलीडेंसिटी) 77.58 प्रतिशत है। ग्रामीण टेलीडेंसिटी 46.09 प्रतिशत है। सरकार द्वारा लाई गई ऑप्टिकल फाइबर योजना इस ओर बेहतर प्रयास है। आवश्यकता है कि कार्यान्वयन के स्तर पर अधिक प्रयास किया जाए।

- **भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण (ट्राई)**

एक वैधानिक व विनियामक निकाय के रूप में भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण (Telecom Regulatory Authority of India - TRAI) की स्थापना 20, फरवरी 1997 को की गई थी। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है और राहुल कुमार इसके मौजदा अध्यक्ष हैं। ट्राई में अध्यक्ष के अलावा 2 पूर्णकालिक सदस्य व 2 पार्टटाइम सदस्य होते हैं।

सामाजिक अवसंरचना
Social Infrastructure

❒ स्वास्थ्य (Health)

देश के समग्र सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए स्वास्थ्य एक बुनियादी आवश्यकता है, क्योंकि स्वस्थ्य नागरिक ही स्वस्थ्य व मजबूत राष्ट्र का निर्माण कर सकता है। भारत सदैव एक कमजोर स्वास्थ्य निष्पादन वाला देश रहा है। अत्यधिक कुपोषण, मातृत्व मृत्युदर का ऊँचा होना, लौह अपर्याप्तता एवं संस्थागत प्रसव की कमी भारत के लिए चिंता का विषय है।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (NHM) इस ओर सरकार का बेहतर प्रयास है, किन्तु भ्रष्टाचार व क्रियान्वयन की कमी के कारण यह अभी लक्ष्यों से काफी दूर है। आवश्यकता है कि स्वास्थ्य सुविधा रोगी को निकटतम क्षेत्र में कम लागत पर उपलब्ध कराई जाए। साथ ही स्वच्छ पेयजल, शौचालय आदि का विकास कर स्वास्थ्य जागरूकता को भी बढ़ाया जा सकता है।

❒ शिक्षा (Education)

शिक्षा किसी भी राष्ट्र के विकास का एक महत्वपूर्ण संकेतक है। यह लोकतंत्र को मजबूत करने तथा व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन की समग्र गुणवत्ता को ऊँचा उठाने का भी एक कारगर साधन है। एक कुशल एवं नवप्रवर्तन से भरी श्रम शक्ति देश के उत्पादन एवं सम्पूर्ण आर्थिक विकास में अधिक योगदान दे सकती है। इसके विकास के लिए सरकार द्वारा सर्वशिक्षा अभियान, मध्याह्न भोजन योजना, शिक्षा का अधिकार दिया गया है। इसके अलावा उच्च एवं तकनीकी शिक्षा का विकास, जैसे - IIT, IIM की संख्या बढ़ाना आदि प्रयास किये जा रहे हैं। इन सभी के बावजूद विगत कई वर्षों से उच्च शिक्षित बेरोजगारी का बढ़ना, चिंता का विषय है। इस प्रकार शिक्षा के

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

क्षेत्र में दोहरी चुनौतिया हैं - सब तक शिक्षा पहुंचाना एवं गुणवत्तापूर्वक व रोजगारपरक शिक्षा पहुंचाना।

❐ बैंकिंग एवं बीमा (Banking & Insurance)

किसी भी राष्ट्र के सामाजिक व आर्थिक विकास में बैंकिंग व बीमा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। वर्तमान में कई सरकारी योजनाएं, जिनका क्रियान्वयन बैंकों के माध्यम से किया जा रहा है। भारत में आज भी जनसंख्या का एक बड़ा वर्ग बैंकिंग सुविधाओं से वंचित है। अत: बैंकिंग अवसंरचना का अभाव इन योजनाओं की सफलता पर प्रश्न चिह्न लगा देता है। इसके अलावा कृषि व लघु उद्योग के क्षेत्र में बैंकिंग सुविधाओं को मजबूत करने की आवश्यकता है। सभी वर्गों तक बैंकिंग सुविधा पहुंचाने के लिए व्यापक वित्तीय समावेशन आवश्यक है। जन-धन योजना इस और एक सराहनीय प्रयास है।

अर्थव्यवस्था में बीमा क्षेत्र का महत्वपूर्ण स्थान है। अफसोस कि भारत में बीमा क्षेत्र व्यापक रूप से असफल हुआ है। आवश्यकता है कि बीमा कवरेज को बढ़ाया जाए। एक सस्ती व लागत बीमा प्रणाली से जनता को जोड़ा जाए। उदाहरणार्थ - विगत महीनों में पाला पड़ जाने से फसल बर्बादी से किसानों द्वारा आत्महत्या की जा रही है। यदि फसल कटाई के पूर्व ही प्रत्येक किसान तक बीमा कवरेज होता, तो शायद फसल की असफलता पर किसानों द्वारा आत्महत्या नहीं की जाती। आश्चर्य की बात यह है कि सरकार ने फसल बर्बादी के बाद 26,000 करोड़ रुपए के ऋण माफ किए, अच्छा तो यह होता कि यह राशि पूर्व में ही बीमा प्रीमियम के रूप में दे दी जाती। यहां अमेरिका का दृष्टांत उल्लेखनीय है जहां सम्पूर्ण किसानों के पास बीमा कवरेज है।

❐ मानव संसाधन विकास (Human Resource Development)

उच्च मानव विकास वाली जनसंख्या देश के सम्पूर्ण आर्थिक विकास के लिए आवश्यक है। भारत अप्रत्याशिज जनसांख्यिकी परिवर्तनों के चरण से गुजर रहा है। जनगणना के अनुमानों की रिपोर्ट दर्शाती है कि एक वर्ष से 59 वर्ष के बीच कार्य करने वाली आयु के व्यक्तियों की जनसंख्या का अनुपात 2001 में लगभग 58 प्रतिशत से बढ़कर 2021 तक 64 प्रतिशत से अधिक होने की संभावना है। आवश्यकता है कि इस जननांकीय संरचना का लाभांश में बदला जाए। लाभांश प्राप्त करने के लिए जनसंख्या को 'मानव विकास' के चरणों से गुजरना होगा। विश्व के सभी अध्ययन बताते हैं कि जिन देशों का 'मानव विकास' ऊँचा है, उन देशों का 'आर्थिक विकास' भी ऊँचा है।

Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

गरीबी
Poverty

❐ अवधारणा (Concept)

गरीबी का अर्थ उस सामाजिक क्रिया से है, जिसमें समाज का एक भाग अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं को भी पूरा करने में असमर्थ हो। जब समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग न्यूनतम जीवनस्तर से वंचित रहता है और केवल निर्वाह स्तर () पर गुजारा करता है, तो यह कहा जाता है कि समाज में गरीबी विद्यमान है।

वस्तुतः गरीबी के संदर्भ में 2 दृष्टिकोण देखने को मिलते हैं - संकीर्ण एवं व्यापक। संकीर्ण दृष्टिकोण गरीबी के मात्रात्मक पहलू पर बल देता है, जबकि व्यापक दृष्टिकोण गरीबी के मात्रात्मक पहलू के साथ गुणात्मक पहलू पर भी बल देता है। परम्परागत अर्थशास्त्री गरीबी को न्यूनतम जीवन निर्वाह स्तर से जोड़कर देखते हैं, जिसमें केवल खाद्यान्न आवश्यकता को ही केन्द्र में रखा जाता है। भारत के संदर्भ में पूर्व में योजना आयोग ने न्यूनतम उपभोग स्तर के आधार पर गरीबी रेखा को परिभाषित किया। 2400 कैलोरी प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 2100 कैलोरी प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन शहरी क्षेत्रों में निर्धारित की गई है। कई वर्षों तक इसी मापदण्ड को आधार बना कर गरीबी के अनुमान प्रदर्शित किए गए, किन्तु रोनाल्ड जोसेफ इस आधार पर अनुमानित गरीबी रेखा को भूखमरी की रेखा कहते हैं, उनके अनुसार यह भूख है, जिसे कैलोरी के रूप में मापा जा सकता है, जबकि गरीबी सामान्य समृद्धि के वर्तमान स्तर के संदर्भ में सापेक्ष स्थिति है।

1990 के दशक में कुछ अर्थशास्त्रियों ने गरीबी की परम्परागत परिभाषा को अस्वीकार कर दिया। इन्होंने गरीबी को अब एक बहुआयामी अवधारणा के रूप में परिभाषित किया। गरीबी के परिभाषा के बहुआयामी निर्देशांकों को अपनाने का चलन 1990 की उस विचारधारा परिवर्तन के पश्चात् देखा जा सकता है, जब मेहबूब-उल-हक एवं अर्मत्य सेन जैसे अर्थशास्त्रियों के प्रयासों के चलते मानव विकास रिपोर्ट का आगमन हुआ एवं गरीबी को आत्म-सम्मान (Self-steem) एवं स्वतंत्रता (Freedom) जैसे ऊँचे आदर्शों के साथ जोड़ा गया। UNDP द्वारा प्रायोजित मानव विकास रिपोर्ट के अन्तर्गत गरीबी के संदर्भ में बहुआयामी निर्धनता सूचकांक जारी करती है, जिसमें स्वास्थ्य, शिक्षा एवं जीवनस्तर को सम्मिलित किया जाता है। ज्ञातव्य हो कि जीवनस्तर के लिए UNDP ईंधन, आवास, विद्युत, जल, शौचालय एवं सम्पत्ति को भी शामिल करता है। इस प्रकार गरीबी बहुआयामी हो जाती है।

इस प्रकार के वैश्विक नीतिगत परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए तेन्दुलकर समिति (2009) ने भी गरीबी को बहुआयामी अवधारणा के रूप में परिभाषित किया है। उन्होंने गरीबी के निर्धारण में कैलोरी पर होने वाले व्यय के अलावा उपभोग की अन्य वस्तुओं व सेवाओं पर होने वाले व्यय को भी शामिल किया, ताकि गरीबों द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य आदि पर किए खर्च का हिसाब भी इसमें आ जाए। इस प्रकार तेन्दुलकर समिति की गरीबी बहुआयामी हो जाती है।

❐ गरीबी की माप (Measurment of Poverty)

गरीबी को 2 रूप में देखा जा सकता है - सापेक्ष गरीबी एवं निरपेक्ष गरीबी।

◆ सापेक्ष गरीबी (Relative Poverty)

सापेक्ष गरीबी यह स्पष्ट करती है कि विभिन्न आय वर्गों के मध्य कितनी विषमता है। इसके अन्तर्गत जनसंख्या के विभिन्न आय वर्ग, चतुर्थांश (Quartile) या दसांश (Decile) के संबंध में आय संबंधी अनुमान लिए जाते हैं। उदाहरणार्थ - जनसंख्या के निचले 5 से 10 प्रतिशत आय समूह की तुलना ऊपरी 5 से 10 प्रतिशत आय समूह से की जाती है तथा इससे प्राप्त परिणाम सापेक्षित गरीबी की स्थिति को प्रदर्शित करते हैं। इसे मापने के लिए 2 विधियां प्रयोग में आती हैं - लारेंज वक्र विधि (Lorenz Curve Method) तथा गिनी गुणांक (Gini Coufficient)।

◆ निरपेक्ष गरीबी (Absolute Poverty)

सापेक्षित गरीबी से इस बात की जानकारी नहीं हो पाती है कि गरीब लोगों की मात्रा क्या है। इस कमी को दूर करने के लिए निरपेक्ष गरीबी का माप लिया जाता है। निर्धनता की माप के लिए निरपेक्ष प्रतिमान के अन्तर्गत एक निश्चित मापदण्ड के आधार पर तय

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

करते हैं कि कितने लोग इस मापदण्ड के नीचे हैं और उन्हें हम गरीब कहते हैं। उदाहरणार्थ – यदि हम ये मान ले कि जिन लोगों की आय 2400 कैलोरी प्रतिदिन भोजन देने वाली आय से कम होगी, उन्हें हम गरीब कहेंगे। इस मापक के नीचे आने वाले सभी लोग गरीब कहलाएंगे। गरीबी ज्ञात करने की इस विधि को हम सिर गणना विधि (Head Count Method) कहते हैं।

❒ गरीबी रेखा का निर्धारण (Determination of Poverty Line)

गरीबी रेखा के निर्धारण के लिए एक परम्परागत् दृष्टिकोण तथा दूसरा बहुआयामीय दृष्टिकोण है, जो निम्नलिखित हैं –

• मूलभूत दृष्टिकोण (Basic Approch)

गरीबी रेखा के निर्धारण तथा गरीबी के अनुमान के संबंध में हम सामान्यत: योजना आयोग के ही माप तथा दृष्टिकोण को स्वीकारते हैं। भारत में निर्धनता रेखा के निर्धारण का पहला अधिकारिक प्रयास योजना आयोग द्वारा जुलाई, 1962 में किया गया था, जिसमें आयोग ने जीवन निर्वाहन के न्यूनतम स्तर के लिए 20 रुपए प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह को उपभोग व्यय स्वीकार किया था।

गरीबी रेखा के निर्धारण के संबंध में अधिक प्रभावी तथा अधिकारिक प्रयास छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान 1977 में आए। जब योजना आयोग ने न्यूनतम आवश्यकता तथा प्रभावपूर्ण मांग के पूर्वानुमान के लिए एक कार्यदल का गठन किया। इस कार्यदल ने 1958 के भारतीय चिकित्सा शोध परिषद के न्यूनतम पोषाहार आवश्यकता रिपोर्ट को आधार बनाते हुए ग्रामीण क्षेत्र के लिए प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन लगभग 2400 कैलोरी (20 रुपए प्रतिमाह) और शहरी क्षेत्र के लिए प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन लगभग 2100 कैलोरी (25 रुपए प्रतिमाह) की सिफारिश की थी। गरीबी की इस मापन प्रणाली को भोजन ऊर्जा प्रणाली (Food Energy Method) भी कहते हैं।

इसके बाद निर्धनता पर 1989 में प्रोफेसर टी. टी. लकड़ावाला कमेटी ने प्रत्येक राज्य में मूल्य स्तर के निर्धारण के लिए अलग-अलग निर्धनता रेखा का निर्धारण किया। इस प्रकार लकड़ावाला समिति की सिफारिशों के बाद अब कोई विशिष्ट निर्धनता रेखा (Unique Poverty Line) नहीं है, बल्कि इसके स्थान पर राज्यवार निर्धनता रेखाएं हैं, जिनकी सहायता से एक अखिल भारतीय निर्धनता रेखा का निर्धारण किया जाता है। उल्लेखनीय है कि विश्व बैंक ने विकासशील देशों में गरीबी रेखा के लिए $ 1.25 प्रतिदिन आय को मानक के रूप में लिया है।

• बहुआयामीय दृष्टिकोण एवं तेन्दुलकर कमेटी (Mnltidimensional Approch & Tendulkar Committee)

गरीबी के बहुआयामीय दृष्टिकोण के अन्तर्गत हम अनेक चरों को लेते हैं, जो न केवल जीवन निर्वाह की आवश्यकताओं की संतुष्टि से सम्बन्धित होते हैं, बल्कि हम उन चरों को भी लेते हैं, जो जीवन की गुणवत्ता (Quality of Life) को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार गरीबी के माप की यह अधिक व्यापक धारणा है, जिसका एच. डी. आर. 2010 में प्रतिपादित बहुआयामी गरीबी निर्देशांक (Mnltidimensional Poverty Index - MPI) में उल्लेख किया गया है।

गरीबी की व्याख्या करने के लिए वैसे उन्हीं तीन चरों स्वास्थ्य, शिक्षा तथा जीवन निर्वाह स्तर को लिया गया है, जो एच. डी. आई. को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार वंचन (Deprivation) को अधिक व्यापक सन्दर्भ में लिया गया है। एम. पी. आई. की गणना के लिए एच. डी. आर. में 3 मुख्य आयाम तथा 10 संकेतकों को लिया गया। सुरेश तेन्दुलकर कमेटी की सिफारिशें भी गरीबी के परम्परागत् रूप से हटकर इसे बहुआयामी रूप में लेती है। तेन्दुलकर कमेटी की नियुक्ति का मुख्य उद्देश्य इसका परीक्षण करना था कि क्या भारत में गरीबी वास्तव में गिर रही है या नहीं।

तेन्दुलकर कमेटी ने अब तक चली आ रही गरीबी के अनुमान से संबंधित कार्यपद्धति की प्रमुख रूप से 3 कमियों की ओर संकेत किया है, जो निम्नलिखित हैं –

1) गरीबी रेखा के अनुमान के संबंध में ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में उपयोग ढांचे में आने वाली वस्तुओं को 3 दशक पहले 1973-74 में निश्चित किया गया, लेकिन इनमें हाल के वर्षों में काफी परिवर्तन हुए हैं, जिन्हें दृष्टिगत रखना आवश्यक हैं।
2) मूल्य समायोजन की एक ऐसी पद्धति अपनाई गई, जिसकी वजह से एक अव्यवहारिक परिणाम प्राप्त हुए। कुछ राज्यों के शहरी क्षेत्रों में ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में गरीबी रेखा से नीचे की जनसंख्या अधिक देखी गई।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) गरीबी रेखा के अब तक के अनुमान यह मानकर चलते हैं कि शिक्षा तथा स्वास्थ्य पर होने वाले व्यय केवल राज्य द्वारा किए जाएंगे, निजी क्षेत्र द्वारा नहीं।

तेन्दुलकर कमेटी ने अपनी रिपोर्ट दिसम्बर, 2009 में सौंपी। तेन्दुलकर कमेटी ने ग्रामीण रेखा के पुनर्माप की सिफारिश की, जिसमें कहा गया कि नगरीय गरीबी रेखा बनाई जाए तथा ग्रामीण रेखा को इसके साथ तुलनीय बनाया जाए। तेन्दुलकर कमेटी के अनुसार गरीबी रेखा का निर्धारण उपभोग में लाए जा रहे खाद्यान्नों के अलावा 6 बुनियादी आवश्यकताओं – शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी संरचना, स्वच्छ वातावरम तथा महिलाओं की काम तथा लाभ तक पहुंच के आधार पर हो।

❒ भारत में गरीबी (Poverty in India)

जहां एक ओर प्रति-व्यक्ति समता (PPP) पर भारत विश्व की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था है, वहीं दूसरी ओर विश्व बैंक कहता है कि सम्पूर्ण विश्व के एक तिहाई (1/3) गरीब भारत में निवास करते है। अशोक सेन गुप्ता अपनी विस्तृत रिपोर्ट में स्वीकार करते हैं कि भारत के 80 करोड़ लोग 20 रुपए प्रतिदिन से कम पर जीवन निर्वाह के लिए विवश है। सुरेश तेंदुलकर/लकड़वाला/ एस. आर. हाशिम आदि सभी विभिन्न कार्यदल 35 प्रतिशत से 40 प्रतिशत लोगों को गरीबी रेखा के नीचे रखते हैं।

विभिन्न कार्यदल के गरीबी रेखा के अनुमान

	लकड़ावाला		तेन्दुलकर	
	1993-1994	2004-2005	1993-1994	2004-2005
शहरी	32.4	25.7	31.8	25.7
ग्रामीण	37.3	28.3	50.1	41.8
कुल	36.0	27.5	45.3	37.2

• भारत में गरीबी आकलन के विभिनन दृष्टिकोण

1) एकसमान संदर्भ अवधि (Uniform Reference Period - URP) 1993-94 तक – यह सूचना 30 दिन के उपभोग व्यय पैटर्न की याददाश्त पर आधारित थी।

2) मिश्रित संदर्भ अवधि (Mixed Reference Period - MRP) 1999-2000 से –

- ➢ याद्दाष्त अवधि (Recall Period) 30 दिन, साथ ही साथ कुछ वस्तुओं के लिए यह 365 दिन थी।
- ➢ वर्तमान में सभी गरीबी रेखा आंकड़े एमआरपी पद्धति से संकलित किए जाते हैं।
- ➢ इसमें सुरेश तेंदुलकर एवं रंगराजन समिति के अद्यतन अनुमान भी शामिल है।

3) संशोधित मिश्रित अवधि (Modified Mixed Reference Period - MMRP)

- ➢ हाल ही में विश्व बैंक ने इसका प्रयोग किया है।
- ➢ यह कुछ उच्च आवृत्ति वस्तुओं (High Frequency Items), जैसे – खाद्य वस्तुओं के लिए 7 दिन की अवधि का व्यय पैटर्न ग्रहण करता है।
- ➢ कम आवृत्ति की वस्तुओं (Low Frequency Items) के लिए 30 दिन के याद्दाश्त की जगह 1 वर्ष के याद्दाश्त का संकलन किया जाता है।
- ➢ इसका उपयोग विश्व बैंक भी गरीबी में आकलन हेतु करता है।
- ➢ **इस दृष्टिकोण की कमियां** – इसमें स्वास्थ्य लागत, रहन-सहन लागत एवं अन्य छिटपुट लागतों, जैसे – शिक्षा पर व्यय को दर्ज नहीं किया जाता।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

2009 में तेंदुलकर समिति एवं 2014 में रंगराजन समिति ने भी निर्धनता हेतु भिन्न-भिन्न मापदण्ड प्रस्तुत किए हैं, जो कि निम्नलिखित तालिका में देखे जा सकते हैं -

	निर्धनता अनुपात			निर्धनों की संख्या (मिलियन में)		
वर्ष	**ग्रामीण**	**शहरी**	**कुल**	**ग्रामीण**	**शहरी**	**कुल**
रंगराजन विशेषज्ञ समूह विधि						
2009-10	39.6	35.1	38.2	325.9	128.7	454.6
2011-12	30.9	26.4	29.5	260.5	102.5	363.0
निर्धनता अनुपात में प्रतिशतांक कमी	8.7	8.7	8.7	65.4	26.2	91.6
तेन्दुलकर विशेषज्ञ समूह विधि						
2009-10	33.8	20.9	29.8	278.2	76.5	354.7
2011-12	25.7	13.7	21.9	216.7	53.1	269.8
निर्धनता अनुपात में प्रतिशतांक कमी	8.1	7.2	7.9	61.5	23.4	84.9

वैश्विक स्तर पर **विश्व बैंक 1.25 अमेरिकी डॉलर** की प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन आय (क्रय शक्ति क्षमता के अधार पर) निर्धनता रेखा मानता है।

विशेषज्ञ	**वर्ष**	**प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन उपभोग व्यय (रुपए में)**		**प्रतिव्यक्ति औसत मासिक उपभोग (रुपए में)**		**अखिल भारतीय निर्धनता रेखा (पांच व्यक्तियों के परिवार का औसत मासिक उपभोग) रुपए में**	
		ग्रामीण	**नगरीय**	**ग्रामीण**	**नगरीय**	**ग्रामीण**	**नगरीय**
रंगराजन विशेषज्ञ	2011-12	32.4	46.9	972	1407	4760	7035
समूह	2009-10	26.7	39.9	801	1198	4005	5990
तेन्दुलकर विशेषज्ञ	2011-12	27.2	33.3	816	1000	4080	5000
समूह	2009-10	22.4	28.7	673	860	3365	4300

❒ भारत में गैर-आय गरीबी (Non-income Poverty in India)

जब बात समाज में गरीबी पर जाती है तो वह आय गरीबी पर आकर ठहर जाती है, किन्तु गरीबी का एक गम्भीर रूप गैर-आय आधारित गरीबी है। इसमें हम स्वास्थ्य, कुपोषण, दरिद्रता में रहन-सहन, अशिक्षा आदि शामिल हैं।

- राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे-3 (NFHS-3), 2005-2006 के अनुसार 3 वर्ष आयु से कम के 46 प्रतिशत व 6 वर्ष आयु से कम के 49 प्रतिशत बच्चे कुपोषण से ग्रसित है।
- पुन: NFHS-3 कहता है कि 56 प्रतिशत बच्चे टीकाकरण से बाहर है एवं 79 प्रतिशत बच्चों ने पिछले 6 महीनों में विटामिन ए का कोई डोज नहीं लिया।

• NFHS-3 के अनुसार

- 33 प्रतिशत विवाहित महिलाएं लोह-अपर्याप्तता से ग्रसित है।
- 58 प्रतिशत विवाहित महिलाएं एनिमिया से ग्रसित है।
- 59 प्रतिशत प्रसव संस्थागत नहीं है।
- 32 प्रतिशत लोगों के पास बिजली नहीं है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- 58 प्रतिशत लोगों के पास स्वच्छ पानी नहीं है।
- 55 प्रतिशत लोगों के पास शौचालय नहीं है।
- 59 प्रतिशत लोगों के पास पक्का घर नहीं है।

❒ भारत में गरीबी के कारण (Causes of Poverty in India)

भारत में गरीबी के अनेक कारण है, जो निम्नलिखित हैं –

1) **भारत में उत्पादन का ढ़ाचां प्राथमिक क्षेत्र में क्रियाशील है** – भारत में राष्ट्रीय आय का केवल 17 प्रतिशत कृषि द्वारा उपलब्ध कराया जाता है, किन्तु कुल श्रम शक्ति का 55 प्रतिशत भाग कृषि क्षेत्र में संलग्न है। वही सेवा क्षेत्र में लगी केवल 23 प्रतिशत श्रम शक्ति कुल राष्ट्रीय आय का 55 प्रतिशत भाग ले जाती है। भारत में स्वतंत्रता के बाद से ही उद्योग का राष्ट्रीय आय में स्थान लगभग यथावत् बना हुआ है। एवं उद्योग क्षेत्र बहुत कम ही श्रम शक्ति को रोजगार दे पाने सफल हो सका है। आर्थर लुईस के शब्दों में उद्योगों को कृषि क्षेत्र से छुटी श्रम शक्ति के लिए शरणार्थी ग्रह (Rescue Home) की तरह काम करना चाहिए, किन्तु भारत में ऐसा नहीं हो पाया। इस प्रकार व्यापक प्रच्छन्न बेरोजगारी एवं आय का असमान वितरण गरीबी का प्रारंभिक एवं मुख्य कारण है।

चित्र – GDP का विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिशत वितरण एवं श्रम शक्ति का विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिशत वितरण।

2) **व्यापक बेरोजगारी** – भारत में ढ़ाचांगत, शिक्षित एवं प्रच्छन्न बेरोजगारी व्यापक रूप से पाई जाती है। 2009–10 की अवधि में भारत में बेरोजगारी की दर 7 प्रतिशत के आसपास थी। शकुन्तला मेहरा अपने अध्ययन में इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि कृषि कार्य में लगी हुई कुल श्रम शक्ति का 17.1 प्रतिशत फालतु है, अर्थात, प्रच्छन्न बेरोजगार हैं। रोजगार विहिन संवृद्धि भी बेरोजगारी का प्रमुख कारण है। 1999–2000 से 2004–2005 की अवधि में जहां आर्थिक वृद्धि दर 6.5 प्रतिशत औसत प्रतिवर्ष थी। इसी दौरान रोजगार वृद्धि की दर 1.25 प्रतिशत थी। 2004–05 से 2009–10 की अवधि में जहां आर्थिक वृद्धि दर 9 प्रतिशत औसत प्रतिवर्ष थी। इसी दौरान रोजगार वृद्धि की दर 0.92 प्रतिशत थी। इस तरह जनसंख्या वृद्धि की तुलना में भी समान अवधि में रोजगार वृद्धि दर कम रही। यह सभी कारण व्यापक बेरोजगारी के लिए जिम्मेदार है।

3) **सार्वजनिक वितरण प्रणाली की असफलता एवं खाद्यान्न अनुपलब्धता** – 60 के दशक की हरित क्रांति एवं 70 के दशक की बफर स्टॉक की अवधारणा ने भारत को खाद्यान्न कमी के कारण पड़ने वाले अकालों से निजात दिला दी। खाद्यान्न उपलब्धता तो है, लेकिन खाद्यान्नों का सही वितरण नहीं हुआ है। देश के ज्यादा उत्पादन वाले राज्य से कम उत्पादन वाले राज्य में सरकार खाद्यान्न पहुंचाने में असफल रही है। राशन की दुकानों द्वारा वितरण में रिसाव, FCI की कार्यशैली सभी वितरण की असफलता के लिए जिम्मेदार रहते है।

4) **व्यापक महंगाई** – महंगाई के कारण बम्पर उत्पादन के बावजूद भी खाद्यान्न जनता की पहुंच से दूर हो गया है। भारत में गरीबी, भूखमरी, क्रय शक्ति की गरीबी एवं भूखमरी है। बढ़ती महंगाई ने खाद्यान्नों को उपभोक्ता की पहुंच से दूर कर दिया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

5) **जनसंख्या दबाव** – अधिकांश अल्पविकसित देशों की भाँति भारत में जनसंख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है। भारत में 1961 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या 43.0 करोड़ थी। 2011 की जनगणना के अनुसार 121 करोड़ थी। जनसंख्या में वृद्धि जीवन निर्वाह के साधनों के लिए अतिरिक्त मांग उत्पन्न कर विकास कार्य में बाधक होती है। स्पष्ट है कि अल्पविकसित देश में जिस तेजी से जनसंख्या बढ़ती है, उसके उत्पादन कार्य में लगाने के लिए पर्याप्त तेजी के साथ उद्योगों का विकास नहीं होता। नतीजा यह होता है कि भूमि पर जनसंख्या का भार और प्रच्छन्न बेरोजगारी में वृद्धि होती है।

6) **पूंजी का अभाव (Scarcity of Capital)** – आर्थिक विकास की गति को तेज करने वाले कारकों में पूंजी की भूमिका सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। किसी देश में पूंजी का संचय ही उस देश की अर्थव्यवस्था को उसके पिछड़ेपन से मुक्ति दिला सकता है। कुजनेत्स (S. Kuznets) का मत है कि पूंजी निर्माण के निम्न अनुपात के फलस्वरूप राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि दर कम होती है। कहने का अर्थ यह है कि देश में तेजी के साथ विकास के लिए भारी मात्रा में पूंजी का निर्माण होना आवश्यक है।

❐ गरीबी निवारण हेतु सरकारी प्रयास (Government Initiatives for Poverty Eradication)

1) IRDP, SGSY, IAY, JRY, MANREGA आदि।
2) सामाजिक वर्गों के लिए कार्यक्रम, जैसे – ICDS, MDM आदि।
3) भूमि सुधार कार्यक्रम।
4) PDS, TDPS आदि।
5) सार्वजनिक निवेश (मानव संसाधन व सार्वजनिक वस्तु, जैसे – शिक्षा एवं स्वास्थय में निवेश)।

❐ गरीबी दूर करने का उपाय (Measures for Poverty Eradication)

निम्नलिकित 2 प्रश्नों के आसपास भारत में गरीबी के कारण एवं इनके उत्तरों के आसपास गरीबी के निवारण घुमते हैं –

◆ पहले पहचाना जाए गरीब कौन है (Problems of Identification)

तमाम प्रयासों के बावजूद भारत में एक मान नहीं निर्धारित हो पाया है, जिससे गरीबी रेखा का निर्धारण किया जा सके। योजना आयोग/तेन्दुलकर कमेटी की रिपोर्ट के बाद सदैव 32 रुपए/28 रुपए पर बहस होती है, मेथाडोलॉजी पर नहीं। आंकड़ों पर बहस करने के बजाय, मेथोडोलॉजी पर बहस हो। एक उचित मेथोडोलॉजी का निर्धारण हो, जिससे वास्तविक हकदारों व वंचित वर्ग का चुनाव में आसानी हो।

◆ गरीबी दूर करने के प्रत्यागम को पहचानना जाए (Problems of Selection of Choice)

गरीबी दूर करने के 4 प्रत्यागम (Approch) हैं, जो निम्नलिखित हैं –

- **प्रथम प्रत्यागम** – यह प्रत्यागम इस आशा पर आधारित है कि आर्थिक संवृद्धि के, अर्थात् – सकल घरेलू उत्पाद और प्रतिव्यक्ति आय में तीव्र वृद्धि के लाभ समाज के सभी वर्गों तक पहुंच जाएंगे। ये समाज के निर्धनतम वर्गों तक भी धीरे-धीरे पहुंच पाएंगे। 1950 से 1960 के दशक के पूर्वार्द्ध में योजनाओं का मुख्य उद्देश्य यही था। यह माना जा रहा था कि तीव्र दर से औद्योगिक विकास और चुने हुए क्षेत्रों में हरित क्रांति के माध्यम से कृषि का पूर्ण काया-कल्प निश्चित ही समाज के अधिक पिछड़े वर्गों को लाभान्वित करेगा। जनसंख्या वृद्धि के परिणामस्वरूप प्रतिव्यक्ति आय में बहुत कमी हुई, इन्हीं कारणों से धनी और निर्धन के बीच की खाई और भी बढ़ गई। हरित क्रांति ने विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के बीच तथा छोटे और बड़े किसानों के बीच का फासला बहुत बढ़ा दिया है। अर्थशास्त्रियों के कथनानुसार आर्थिक संवृद्धि के लाभ निर्धनों तक नहीं पहुंच पाए।
- **द्वितीय प्रत्यागम** – यह प्रत्यागम कार्य सृजन पर आधारित है। निर्धनों के विकास के लिए विकल्पों की खोज के क्रम में नीति निर्धारकों को ऐसा लगा कि अतिरिक्त परिसंपत्तियों और कार्य-सृजन के साधनों द्वारा निर्धनों के लिए आय और रोजगार को बढ़ाया जा सकता है। ऐसा निर्धनता निवारण कार्यक्रमों के माध्यम से ही हो पाएगा। इसी क्रम में 1970 के दशक में चलाया

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

गया काम के बदले अनाज एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम रहा। इस दिशा में चल रहे अधिकतर गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम 10वीं पंचवर्षीय योजना की विकास दृष्टि पर आधारित हैं। अब स्वरोजगार तथा मजदूरी पर आधारित रोजगार कार्यक्रमों को निर्धनता निवारण का मुख्य माध्यम माना जा रहा है। स्व-रोजगार कार्यक्रमों के उदाहरण हैं, ग्रामीण सृजन कार्यक्रम (REGP), प्रधानमंत्री की रोजगार योजना (PMRY) तथा स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना (SJSRY) आदि।

- **तृतीय प्रत्यागम** - यह प्रत्यागम कार्य स्वरोजगार हेतु योग्य बनाती है। पहले के स्व-रोजगार कार्यक्रमों के अन्तर्गत परिवारों और व्यक्तियों को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती थी। पर 1990 के दशक से इस नीति में बदलाव आया है। अब इन कार्यक्रमों का लाभ चाहने वालों को स्वयं सहायता समूहों में गठन करने के लिए प्रेरित किया जाता है। प्रारंभ में उन्हें अपनी ही बचतों को एकत्र कर परस्पर उधार देने को प्रोत्साहित किया जाता है। बाद में सरकार बैंकों के माध्यम से उन स्वयं सहायता समूहों को आंशिक वित्तीय सहायता समूहों को आंशिक वित्तीय सहायता उपलब्ध कराती है। ये समूह इसका निश्चय करते हैं कि स्व-रोजगार कार्यक्रम के लिए किसे ऋण दिया जाए। स्वर्ण जयंती ग्राम स्व-रोजगार योजना ऐसा ही एक कार्यक्रम है।
- **चतुर्थ प्रत्यागम** - यह प्रत्यागम लोगों को न्यूनतम आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराना रही है। भारत विश्व के उन प्रथम देशों में से एक है जहां ऐसा सोचा गया। सस्ता अनाज, शिक्षा, स्वास्थ्य, जलपूर्ति, स्वच्छता आदि सामाजिक उपयोग आवश्यकताओं पर सार्वजनिक व्यय लोगों के जीवनस्तर को सुधार सकता है। इस विधि के अन्तर्गत निर्धनों के उपभोग, रोजगार अवसरों का सृजन तथा स्वास्थ्य और शिक्षा में सुधार की संपूर्ति की जाएगी। यह विधि 5वीं पंचवर्षीय योजना में अपनाई गई है। उस योजना के दस्तावेज में कहा गया था कि 'रोजगार के अवसरों में विस्तार के बाद भी निर्धन व्यक्ति अपने लिए सभी आवश्यक वस्तुओं और सेवाओं को नहीं खरीद पाएंगे। एक निश्चित सामाजिक न्यूनतम स्तर तक उनके उभोग और निवेश को समर्थन देना निम्नलिखित रूपों में अनिवार्य रहेगा - अनिवार्य खाद्यान्न, पेय-जल, शिक्षा, पोषण-स्वास्थ्य सेवाएं, संचार और विद्युत पूर्ति।' निर्धनों के खाद्य उपभोग और पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले 3 प्रमुख कार्यक्रम ये हैं - सार्वजनिक वितरण व्यवस्था, एकीकृत बाल विकास योजना तथा मध्यावकाश भोजन योजना।

- **सतत् गरीबी न्यूनीकरण को कैसे प्राप्त करें?**
  - कौशल विकास द्वारा लाभदायक रोजगार का सृजन करके।
  - उत्पादक क्षेत्रों, जैसे - सेवाएं तथा विनिर्माण में अधिक रोजगार सृजन करके।
  - हाशिए पर स्थित वर्गों, जैसे - महिलाएं, एससी/एसटी, दलित पर विशेष ध्यान देकर।
  - आर्थिक विकास के मॉडल में परिवर्तन, उद्योगों के संकेन्द्रण के स्थान पर बहुकेन्द्रित विकास मॉडल का प्रयोग करके।
  - बेहतर कार्य निष्पादन हेतु व रिसाव को रोकने के लिए तकनीकी उपकरणों, जैसे - जैम त्रिक (JAM trinity जनधन, आधार, मोबाइल) का उपयोग करके।

Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

बेरोजगारी
Unemployment

कोई भी अर्थव्यवस्था हो चाहे वह विकासशील या विकसित सदैव विभिन्न तरह की बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है। जब बात विश्व में बेरोजगारी पर जाती है, तो प्रथम विश्वयुद्ध के बाद मांग में कमी के कारण उत्पन्न महामंदी (1930-1936) (The Great Depression) पर टिक जाती है, उस समय विश्व के सभी देशों ने व्यापक बेरोजगारी का अनुभव किया व इसके निराकरण के लिए महान अर्थशास्त्री जॉन मेनार्ड कींस ने कहा है कि 'चाहे गड्ढे खुदवाओं, फिर भरवाओ' लोगों को काम दो। काम से मजदूरी मिलेगी, मजदूरी आगे मांग पैदा करेगी, फिर मंदी दूर होगी। बेरोजगारी पर चर्चा करने से पूर्व यह आवश्यक है कि बेरोजगारी क्या है? इसे कैसे मापा जाता है? इसका मूलभूत अध्ययन किया जाए।

❒ श्रमशक्ति (Labour Force)

किसी राष्ट्र में श्रमशक्ति पर 15 वर्ष से 65 वर्ष आयु तक के उन लोगों से है, जो रोजगार में लगे हैं एवं वे भी रोजगार की तलाश में हैं। अत:

श्रमशक्ति = रोजगार में लगे लोगों की संख्या + बेरोजगार लोगों की संख्या

बेरोजगारी = श्रमशक्ति - रोजगार में लगे लोगों की संख्या

इस प्रकार किसी समय विशेष पर किसी देश में बेरोजगारी, देश की कुल श्रमशक्ति में से रोजगार में लगे लोगों की संख्या को घटाने से प्राप्त होती है।

❒ बेरोजगारी की दर (Rate of Unemployment)

बेरोजगारी की दर, श्रमशक्ति के प्रतिशत के रूप में बेरोजगारी की संख्या व्यक्त कर ज्ञात की जाती है। अत:

$$\text{बेरोजगारी की दर} = \frac{\text{बेरोजगारों की संख्या}}{\text{कुल श्रमशक्ति}} \times 100$$

उदाहरणार्थ - कुल श्रमशक्ति 42 करोड़ हो एवं 8 करोड़ लोग बेरोजगार हो, तब -

$$\text{बेरोजगारी की दर} = \frac{8 \text{ करोड़}}{42 \text{ करोड़}} \times 100$$

बेरोजगारी की दर = 19.04 प्रतिशत

❒ बेरोजगारी का अनुमान निकालने की विभिन्न विधियां (Different Methods to find Unemployment)

भगवती कमेटी (1973) सिफारिश के आधार पर बेरोजगारी मापन की निम्नलिखित 3 धारणाएं प्रचलित हैं -

- **सामान्य स्टेटस (Usual Status)** - यह समीक्षा वर्ष के पूर्व के 365 दिनों में किसी व्यक्ति के कार्य की स्थिति को प्रदर्शित करता है। यदि कोई व्यक्ति वर्ष में अधिकांश 183 दिनों तक कार्य नहीं करता है, उसे सामान्य स्टेटस का बेरोजगार कहते हैं।
- **चालू साप्ताहिक स्टेटस (Current Weekly Status)** - यदि किसी ने समीक्षा सप्ताह में 1 घंटा भी कार्य नहीं किया हो, तो उसे चालू साप्ताहिक स्टेटस का बेरोजगार कहेंगे।
- **चालू दैनिक स्टेटस (Current Daily Status)** - यदि कोई व्यक्ति एक दिन में 4 घंटे या इससे अधिक कार्य करता है, तो उसे उस दिन पूर्ण रोजगार में कहेंगे। पर यदि उसने 1 घंटे से अधिक पर 4 घंटे से कम काम किया हो तो उसे आधा दिन कार्यरत मानेंगे। इस प्रकार यदि किसी ने किसी दिन 1 घंटा भी काम नहीं हो, तो उसे चालू दैनिक स्टेटस पर बेरोजगार कहेंगे।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

❒ भारत में बेरोजगारी (Unemployment in India)

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (NSSO) ने अपने विभिन्न राउंडों में बेरोजगारी के अनुमान प्रस्तुत किए तथा साथ ही वकील एवं ब्रह्मानन्द, प्रोफेसर राजकृष्ण तथा भगवती कमेटी (1973) ने भारत में बेरोजगारी के विभिन्न तथ्य प्रस्तुत किए। सभी इस बात पर एकमत है कि भारत में बेरोजगारी विकसित देशों की तरह मांग में कमी के कारण न होकर **ढांचागत बेरोजगारी** है। 2011-12 के आधार पर बेरोजगारी 2.7 प्रतिशत थी। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की दर, शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक थी। (सर्वाधिक आकलित बेरोजगारी आधार पर रही। ज्ञातव्य हो कि में 68वें राउंड में पाया कि सभी वर्गों में महिलाओं की बेरोजगारी, पुरुषों की अपेक्षा अधिक रही है।

बेरोजगारी दरें

	ग्रामीण	शहरी	कुल
UPS	2.3	3.9	2.7
CWS	3.4	4.4	3.7
CDS	5.7	5.5	5.6

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 68वां राउण्ड (2011-12)

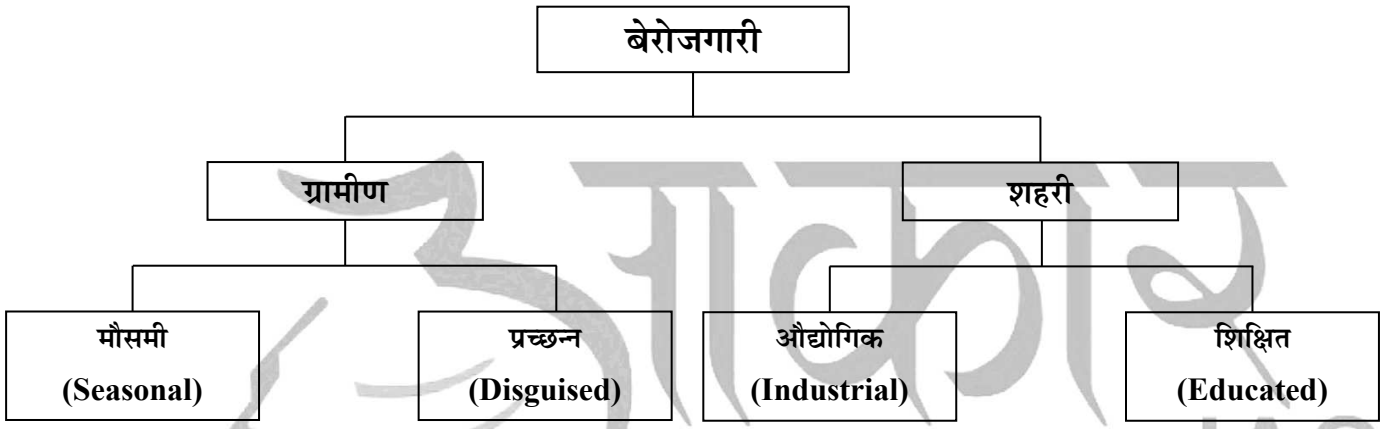

◆ ग्रामीण बेरोजगारी (Rural Unemployment)

भारत की जनसंख्या का लगभग 68 प्रतिशत भाग गांवों में निवास करता है, जिनके जीवन निर्वाह का साधन बहुतया कृषि ही है। भारत में व्यापक रूप से बेरोजगारी गांवों में ही दिखाई देती है। ग्रामीण बेरोजगारी को 2 भागों में वर्गीकृत किया गया है -

➢ मौसमी बेरोजगारी (Seasonal Unemployment)

यह एक सामान्य दशा है, जिसमें फसलावधि में तो व्यक्ति रोजगार में रहते हैं, किन्तु फसल समाप्ति के बाद वह बेरोजगार हो जाते हैं। उदाहरण स्वरूप गेहूं कटाई के लिए उपलब्ध मजदूर कटाई के पश्चात् बेरोजगार हो जाएंगे। उन्हें निकटतम अगली फसल कटाई तक बेरोजगार रहना पड़ता है।

➢ प्रच्छन बेरोजगारी (Disguised Unemployment)

यह भारत की सबसे बड़ी समस्या है। यह अप्रत्यक्ष होती है, अर्थात् दिखाई नहीं देती। प्रच्छन्न बेरोजगारी का आशय किसी ऐसे अतिरिक्त श्रमिक को लगाए जाने पर उसके द्वारा किया उत्पादन शून्य हो, अर्थात् सीमान्त उत्पादन (Marginal Product, MP = 0)। साधारण शब्दों में एक खेत में 15 कृषक परिवार के 15 सदस्य कार्यरत हैं, किन्तु वही उत्पादन केवल 5 सदस्य कार्य करने पर भी प्राप्त किया जा सकता है। अत: यहां दिखाई देने पर 15 व्यक्ति ही रोजगार में है, किन्तु छूपे रूप मे 5 व्यक्तियों को ही रोजगार प्राप्त है एवं 10 बेरोजगार है। यही प्रच्छन्न बेरोजगारी है। शकुन्तला मेहरा के अनुसार भारत में कृषि कार्य में लगी कुल श्रमशक्ति का 17.1 प्रतिशत फालतू, अर्थात् प्रच्छन्न बेरोजगार है।

◆ शहरी बेरोजगारी (Urban Unemployment)

शहरी क्षेत्रों में लगभग सभी बेरोजगारी प्रत्यक्ष है, अर्थात् - जो खुले रूप से दिखाई देती है। NSSO ने अपने विभिन्न दौरों में शहरी बेरोजगारी के विभिन्न मानकों पर अनुमान प्रस्तुत किए। हाल के दशकों में शहरी क्षेत्रों में बेरोजगारी श्रमशक्ति के 10 प्रतिशत के आसपास रही। शहरी बेरोजगारी को 2 भागों में वर्गीकृत किया गया है -

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

➢ **औद्योगिक बेरोजगारी (Industrial Unemployment)**

किसी अर्थव्यवस्था में उद्योग क्षेत्र का स्थान महत्वपूर्ण होता है। किसी समय विशेष में औद्योगिक क्षेत्र में पाई जाने वाली बेरोजगारी औद्योगिक बेरोजगारी कहलाती है। इसके 2 कारण है –

1) उद्योगों का बड़े शहरों में जमावड़ा, जो भारी मात्रा में लोगों को आकर्षित करता है, किन्तु सभी को रोजगार देने में असफल रहता है।

2) उद्योगों के बंद हो जाने, छंटनी आदि की वजह से उद्योगों से बाहर निकली वह श्रम शक्ति है, जो बेरोजगार हो जाती हैं।

➢ **शिक्षित बेरोजगारी (Educational Unemployment)**

शिक्षित वर्ग में बेरोजगारी मोटे तौर पर शहरी बेरोजगारी का ही एक अंश है। एक ओर जहां विकासशील देशों में (विशेषकर मध्य पूर्व व अफ्रीका में) कुशल श्रम का अभाव है, तो वहीं भारत में इंजीनियरिंग डिग्री व डिप्लोमा वाले लोग भी कभी-कभी बेरोजगार रह जाते हैं। यह एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि भारत में मैट्रिक पास युवकों के पास कोई व्यवसायिक प्रशिक्षण (Vocational Training) नहीं होता है, इसलिए वे कोई भी कुशल कार्य करने में सक्षम नहीं होते हैं। वे सभी क्लर्की व अन्य कम वेतन वाले अकुशल रोजगार अवसरों के पीछ दौड़ते हैं। भारत में शिक्षित बेरोजगारी के निम्नलिखित कारण हैं –

1) दोषपूर्ण शिक्षा व्यवस्था, नौकरी तलाश करने वालों में तकनीकी प्रशिक्षण तथा आवश्यक योग्यता की कमी, शिक्षित लोगों की मांग व पूर्ति मे असंतुलन आदि इस बेरोजगारी के प्रमुख कारण हैं।

2) आर्थिक विकास की धीमी विकास दर सभी शिक्षित लोगों को रोजगार प्रदान कर पाने में असमर्थ है।

3) भारत में उच्च शिक्षा की निजी लागत उसके अनुमानित प्रतिफल की तुलना में बहुत कम है, इसलिए आवश्यकता से बहुत अधिक लोग उच्च शिक्षा प्राप्त करने में लगे हैं। ऐसे लोगों का प्रयास केवल यह होता है कि इस तरह रोजगार के अवसरों को बढ़ाया जाए, किन्तु ऐसा करते समय वे कम शिक्षित लोगों के लिए परेशानी खड़ी कर देते हैं।

❒ भारत में बेरोजगारी के कारण (Causes of Unemployment in India)

भारत में बेरोजगारी के कारणों को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत देख सकते हैं –

• रोजगारविहीन संवृद्धि (Jobless Growth)

विभिन्न कई दशकों से वृद्धि के रथ पर सवार भारत को यह पर्याप्त अनुभव हो चुका है कि वृद्धि रोजगारविहीन (Jobless) रही है। इस बात कि पुष्टि यह आंकड़े भी करते हैं –

वर्ष	GDP	रोजगार
1972-73 से 1983	4.7 प्रतिशत	2.4 प्रतिशत
1983 से 1993-94	5 प्रतिशत	2 प्रतिशत
1993-94 से 2004-05	6.3 प्रतिशत	1.8 प्रतिशत
2004-05 से 2009-10	9 प्रतिशत	0.22 प्रतिशत

• जनसंख्या विस्फोट व श्रम की पूर्ति में वृद्धि (Population Explosion & Increase in Labour Supply)

स्वतंत्रता के बाद जैसे ही भारत में तेजी के साथ मृत्यु दर नीचे आई, इससे देश में जनसंख्या विस्फोट का दौर शुरू हुआ। परिणामस्वरूप श्रम की पूर्ति में लगातार वृद्धि हो रही है। इस वृद्धि के मुख्यरूप से 2 कारण हैं – जनांकिकीय (Demographic) और सामाजिक (Social)। ग्रामीण क्षेत्र में जनसंख्या में तेजी के साथ वृद्धि से कृषि में प्रच्छन्न बेरोजगारी बढ़ी है। सामाजिक कारण में भारत में शिक्षा के प्रसार और स्त्रियों में रोजगार पाने की बढ़ती हुई मांग को पूरा कर पाना सम्भव नहीं हो सका है। वहीं शहरी क्षेत्र में बेरोजगारी की संख्या 2 प्रकार से बढ़ रही है। एक तो शहरों में स्थायी रूप से रहने वालों के लिए रोजगार के अवसरों में आवश्यक वृद्धि नहीं हो सकी है। इसके अलावा गांवों में भूमि पर जनसंख्या के बढ़ते हुए दबाव के कारण लोग शहरों की ओर तेजी से प्रवास कर रहे हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **अनुपयुक्त तकनीकों का प्रयास (Use of Inappropriate Technology)**

भारत में जहां पूंजी का अभाव है, वहीं श्रम की बहुतायत है। इस तरह के देशों में यदि बाजार की शक्तियां ठीक तरह से कार्य करें, तो उत्पादन की श्रम-प्रधान तकनीक (Labour Intensive Technique) का प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि भारत में उद्योगपति, जहां तक संभव होता है, श्रम को पूंजी से प्रतिस्थापित करने की कोशिश करते दिखाई देते हैं। पश्चिमी देशों में जहां पूंजी बड़ी मात्रा में उपलब्ध है, स्वचालित मशीनों का उपयोग ठीक है, लेकिन भारत में इनके उपयोग से बेरोजगारी बढ़ती है।

- **अनुपयुक्त शिक्षा प्रणाली (Inappropriate Educational System)**

भारत में शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है। दरअसल, यह शिक्षा प्रणाली वही है, जिसकी औपनिवेशिक काल में मैकाले ने शुरुआत की थी। गुन्नार मिर्डल (Gannar Myrdal) के अनुसार, भारतीय शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य मानव स्रोतों को विकसित करना नहीं रहा है। यहां की शिक्षा प्रणाली सरकार और व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के लिए क्लर्क और नीचे दर्जे के प्रशासनिक अफसर पैदा कर सकती है। अभिप्राय यह है कि यदि भारत में शिक्षित लोगों की बेरोजगारी कम करनी है तो उसके लिए शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण परिवर्तन करने होंगे। जो शिक्षा मानव स्रोतों का विकास नहीं करती, वह लोगों को व्यापक स्तर पर रोजगार भी नहीं दिला सकती है।

- **बेरोजगारी निवारण संबंधी सरकार उपाय एवं मुख्य रोजगार कार्यक्रम (Main Employment Programmes)**

ऐसा नहीं है कि सरकार बेरोजगारी निवारण के लिए प्रयास नहीं करती। समय-समय पर विभिन्न सत्तारूढ़ सरकारों ने रोजगार जनन कार्यक्रम चलाए एवं बेरोजगारी दूर करने का प्रयास किया। प्रारंभिक पंचवर्षीय योजनाओं में यह स्वीकार किया गया कि तेज आर्थिक संवृद्धि से स्वयं बेरोजगारी का निदान हो जाएगा। इस प्रकार रोजगार को विकास का कभी केन्द्रीय लक्ष्य नहीं रहा। छठी पंचवर्षीय योजना तक आते-आते यह भ्रम टूटा एवं योजना दस्तावेज में यह स्वीकार किया गया कि अब तक हुए प्रयास रोजगार जनन व गरीबी निवारण के लिए असफल रहे। 'गरीबी हटाओं' के महान नारे के साथ कई योजनाओं की शुरुआत हुई, जैसे -

1) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP)।
2) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (NREP)।
3) आरपरेशन फ्लड-II डेरी प्रोजेक्ट।
4) ग्रामीण युवकों को कौशल विकास योजना।
5) फिश फार्मर्स डेवलमेन्ट एजेंसी, आदि।

इस प्रकार रोजगार जनन अब पंचवर्षीय योजनाओं का केन्द्रीय लक्ष्य हो चला था।

❐ बेरोजगारी निवारण हेतु चलाए गए कार्यक्रम (Programmes for Unemployment Eradication)

1) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (NREP)।
2) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP)।
3) जवाहर रोजगार योजना ()।
4) स्वर्ण जयंती रोजगार योजना ()।
5) स्वर्ण जयंती ग्रामीण रोजगार योजना ()।

मनरेगा : एक दृष्टांत

तत्कालीन UPA सरकार ने अपने न्यूनतम साझा कार्यक्रम (Common Minimum Programme) के अन्तर्गत रोजगार गारंटी अधिनियम पारित किया। यह योजना पूर्व की सभी योजनाओं से इस तरह भिन्न थी कि यह संसद के अधिनियम द्वारा निर्मित हुई थी एवं काम के लिए कानूनी गारंटी दी गई, अर्थात् - काम करने का अधिकार (Right to Work) मिला। मनरेगा के मुख्य बिन्दु हैं -

1) एक वित्तीय वर्ष में 100 दिन का रोजगार, जो कि एक परिवार में एक व्यक्ति को मिलेगा।
2) 15 दिनों में मजदूरी भुगतान किया जाएगा, यदि रोजगार न दिया गया, तो 15 दिनों बाद में रोजगार भत्ता दिया जाएगा।
3) यह रोजगार लाभार्थी को उसके आवास के 5 किमी के अन्दर उपलब्ध कराया जाएगा और यदि रोजगार 5 किमी के दायरे के बाहर हो, तो 10 प्रतिशत अलग से किराया भत्ता।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

4) कुल रोजगार का एक तिहाई महिलाओं को प्रदान किया जाएगा।

5) मूलभूत सुविधा का प्रावधान, जैसे - पानी, छाया, चिकित्सा लाभ, 6 से ज्यादा बच्चों पर झुलाघर व्यवस्था।

6) महिलाओं और पुरुषों को समान वेतन दिया जाएगा।

7) पंचायत राज द्वारा क्रियान्वयन।

आन्ध्र प्रदेश, राजस्थान, केरल आदि राज्यों में मनरेगा सर्वाधिक सफल सिद्ध हुई। जहां एक ओर मनरेगा के द्वारा कई परिसम्पत्तियों का निर्माण हुआ, वहीं इसने ग्रामीणों की क्रय-शक्ति को भी बढ़ाया है। मनरेगा का एक अन्य लाभ यह हुआ कि इसने गांवों से शहरों के पलायन को कम किया व गांवों में ही रोजगार उपलब्धता सुनिश्चित हुई। मनरेगा ने मौसमी बेरोजगारी से लड़ने में ग्रामीणों की सहायता की। विशेष रूप से मनरेगा ने महिलाओं को लाभ पहुंचाया। कई अध्ययनों में यह सामने आया कि निकट क्षेत्र में ही महिलाओं ने रोजगार प्राप्त किया व उन्हें शहरी पलायन से मुक्ति मिली।

- **मनरेगा : कुछ पीछे छूटे हुए क्षेत्र**

कार्यान्वयन में अनुत्साह, नामावली में छेड़छाड़ व्यापक भ्रष्टाचार, मजदूरी भुगतान में देरी, भत्ता अदायगी में देरी एवं स्टॉक की कमी आदि कारकों ने मनरेगा को असफल बनाने का पूरा प्रयास किया। वर्तमान सरकार भी इसे चलाने के लिए अनिच्छुक थी, किन्तु लोक दबावों के चलते उसे अपना निर्णय बदलना पड़ा।

निष्कर्षत: मनरेगा की कमजोरी उसके क्रियान्वयन से जुड़ी हुई है। एक नई सोच उभरकर भी सामने आई है कि कब तक भारत के लोगों से गड्ढे खुदवाएं जाएं। क्या 36,000 करोड़ रुपए मनरेगा पर खर्च करने के बजाय उन्हें कौशल विकास देकर स्वयं ही इस लायक नहीं बना दिया जाए कि वह स्वयं का विकास कर सके। उद्योग स्थापित कर फालतू श्रम-शक्ति को खपाया जाए। इस सोच या विकास के समर्थक मनरेगा को बंद करने में यकीन रखते हैं, वहीं दूसरी ओर अन्य विचार मनरेगा के नए डिजाइन व उचित क्रियान्वयन का समर्थन करते हैं।

❐ भारत में बेरोजगारी दूर करने के उपाय (Suggestions to Eradicate Unemployment in India)

- **ढांचागत बाधा दूर हो**

श्रमशक्ति का 50 प्रतिशत कृषि से जुड़ा है, जो कुल राष्ट्रीय आय का केवल 14.5 प्रतिशत प्राप्त करते है। वहीं राष्ट्रीय आय का लगभग 57 प्रतिशत हिस्सा ले जाने वाले सेवा क्षेत्र में केवल 22 प्रतिशत श्रम शक्ति लगी है। कृषि की प्रच्छन्न श्रम शक्ति को उद्योगों व सेवाओं में खपाया जाए। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री आर्थर लुईस इसी का समर्थन करते हैं एवं कहते हैं कि उद्योगों को शरणार्थ गृह (Rescue Home) बनाओं, जो कृषि की अतिरिक्त श्रम शक्ति को सोखले।

- **श्रम नीति में सुधार हो**

अत्यधिक निरीक्षण (Inspection) एवं नियाजकों (Employers) पर थोपे गए अत्यधिक नियम, कम्पनियों को मनमाना श्रम हासिल करने से रोकते है। इस क्षेत्र में सुधार की आवश्यकता है। 'श्रमेव जयते' इस ओर सराहनीय कदम है।

- **कौशल विकास का उन्नयन हो**

नौकरी.कॉम अपने एक अध्ययन में यह कहता है कि भारत में 68 प्रतिशत स्नातक उनके लिए उपलब्ध रोजगार के लिए लाय क नहीं थे। दोषपूर्ण शिक्षा पद्धति दूर हो। अब मैकले के क्लर्क न तैयार होकर शुम्पीटर के नवप्रवर्तक (Innovator) तैयार हो।

- **ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन कम हो एवं उन्हें वहीं रोजगार मिले**

इस हेतु डॉ. अब्दुल कलाम का PURA मॉडल एक उल्लेखनीय मार्गदर्शक साबित हो सकता है। कृषि उन्नति पर ध्यान दिया जाए एवं अधूरे रह चुके भूमि सुधार को पूरा किया जा सकता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

क्षेत्रीय असंतुलन
Regional Imbalances

क्षेत्रीय या प्रादेशिक असंतुलन से हमारा अभिप्राय किसी देश के विभिन्न भौगोलिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों के असमान विकास से लिया जाता है, अर्थात् – विकास प्रक्रिया का संचालन जब इस प्रकार किया जाए कि विभिन्न क्षेत्रों के विकास को गतिशील रखने के साथ पिछड़े हुए क्षेत्रों की विकास की गति को मन्द रखा जाए, जिससे अविकसित क्षेत्रों की तुलना में विकसित क्षेत्रों का विकास तीव्र गति से होता है, तब क्षेत्रीय असन्तुलन की स्थिति पैदा हो जाती है।

वर्तमान युग में अर्द्धविकसित राष्ट्र असंतुलित क्षेत्रीय विकास के दोष से पीड़ित है। इन देशों की विकास प्रक्रिया का संचालन इस प्रकार किया गया है कि क्षेत्रीय असंतुलन में कमी होने के स्थान पर वृद्धि होती जा रही है। जब एक देश का विभिन्न क्षेत्रों में असमान विकास होता है, तब इसे क्षेत्रीय असंतुलन ही कहेंगे। असमान विकास का आशय यह नहीं है कि सभी क्षेत्रों का समान रूप से विकास होना चाहिए था और वह नहीं हो पाया। असमान विकास का आशय विभिन्न क्षेत्रों के संसाधनों के समतापूर्ण उपयोग न होने से है। दूसरे शब्दों में एक क्षेत्र के संसाधनों के अधिकतम क्षमतापूर्ण उपयोग से वह क्षेत्र अत्यधिक विकसित हो जाता है तथा दूसरे क्षेत्रों में संसाधनों के सम्भावित अधिकतम क्षमतापूर्ण उपयोग न होने के कारण वह क्षेत्र अविकसित रह जाता है। इसे ही क्षेत्रीय असंतुलन कहते हैं। उदाहरणार्थ – भारत में पंजाब, गुजरात आदि विकसित हैं, जबकि मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बिहार का आर्थिक विकास कम हुआ है।

जब एक ही क्षेत्र के विभिन्न खण्डों में असंतुलन पाया जाता है, तो उसे खंडीय असंतुलन कहते हैं। अर्थव्यवस्था में विभिन्न खण्ड होते हैं, जैसे – कृषि उद्योग, शिक्षा, परिवहन आदि। इन खण्डों के विकास में असंतुलन पाया जाता है, जैसे – कहीं कृषि उन्नत अवस्था में होती है, तो कहीं दयनीय अवस्था में। कहीं परिवर्तन सुविधाएं अधिक होती हैं, तो कहीं कम। यह खण्डीय असंतुलन कहलाता है।

❐ क्षेत्रीय असंतुलन के कारण

1) **प्राकृतिक संसाधन एवं इसका प्रयोग** – देश के विभिन्न भागों में प्राकृतिक संसाधनों का वितरण विविधितापूर्ण होता है। जिन क्षेत्रों में प्राकृतिक संसाधन ज्यादा होते हैं, वह इनका दोहन कर तेजी से विकास कर जाते हैं। इसके विपरीत प्राकृतिक संसाधनों में कमी वाले क्षेत्रों को अन्य क्षेत्रों पर निर्भर रहना पड़ता है। यहां उल्लेखनीय है कि केवल प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धता ही पर्याप्त नहीं है, दोहन के लिए तकनीक विशेष का होना भी आवश्यक है। इस प्रकार प्राकृतिक संसाधानों का वितरण व दोहन क्षेत्रीय विषमता का कारण बनता है। यह सरकार की जिम्मेदारी होती है कि वह प्राकृतिक संसाधनों की बहुलता वाले क्षेत्रों से अल्पता वाले क्षेत्रों में संसाधनों को गतिमान बनाए।

2) **जनसंख्या सम्बन्धी कारक** – किसी क्षेत्र विशेष की जनसंख्या यदि अनुकूलतम स्तर को पार कर जाती है, तो वह उस क्षेत्र के विकास को हतोत्साहित करती है। किसी क्षेत्र विशेष की जनसंख्या का अल्पकौशल स्तर, कार्यशक्ति में निम्न भागीदारी, अत्यधिक निर्भरता आदि क्षेत्र के लिए बोझ बन जाती है। वहीं इसके विपरीत अनुकूलतम जनसंख्या वाले कुछ क्षेत्र अपनी कौशलपूर्ण, आत्मनिर्भर एवं कार्यशील जनसंख्या के कारण विकास कर जाते हैं।

3) **निर्धनता** – कुछ राज्य जो गरीबी के दुष्यचक्र में फंसे हुए रहते हैं। गरीबी के कारण बचत, निवेश आदि तत्व स्थान ही नहीं बना पाते हैं। गरीबी के कारण मांग केवल कुछ उपभोक्ता वस्तुओं तक ही सीमित रहती है, अन्य वस्तुओं का उत्पादन स्थान ही नहीं ले पाता है। इस प्रकार दुश्चक्र में उलझे क्षेत्र अल्पविकसित रह जाते हैं।

4) **औद्योगीकीकरण** – तमाम अनुभवजन्य प्रमाण (Emperical Evidence) यह सिद्ध कर चुके हैं कि जिन क्षेत्रों का उत्पादन ढांचा प्राथमिक क्षेत्र (कृषि) में क्रियाशील है, वह विकास की अपेक्षाकृत पिछड़ी अवस्था में है। जिन क्षेत्रों में औद्योगीकीकरण की प्रक्रिया (Process of Industrlization) ने स्थान बना लिया है, उन क्षेत्रों में विकास ज्यादा हुआ है। यह विकास की प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। औद्योगीकीकरण के कारण पूंजी निर्माण होता है। पूंजी निर्माण, विकास को त्वरित (Accelrate) करता है। कृषि आधारित उत्पादन ढांचे वाले क्षेत्र इन सभी प्रक्रियाओं से वंचित रह जाते हैं। अत: उत्पादन ढांचे में विविधता क्षेत्रीय असंतुलन का प्रमुख कारण है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

5) **सामाजिक ढांचा** - कुछ क्षेत्रों की जनसंख्या भाग्यवादी, अन्धविश्वासी एवं रूढ़ीवादी होती है। यह नवप्रवर्तन (Innovation) को आसानी से स्वीकार नहीं करती। इन क्षेत्रों में विकास की प्रक्रिया धीमी होती है।

❐ क्षेत्रीय असंतुलन के प्रभाव

क्षेत्रीय असंतुलन के अर्थव्यवस्था पर कुछ लाभदायक एवं कुछ हानिप्रद प्रभाव पड़ते हैं, जो निम्नलिखित हैं -

- **लाभदायक प्रभाव**

1) **आर्थिक विकास** - किसी भी देश के पास आर्थिक साधन, जैसे - पूंजी, उन्नत तकनीक आदि सीमित मात्रा में होते हैं। परिणामस्वरूप कोई भी देश अपने सभी क्षेत्रों का विकास एक साथ नहीं कर सकता। उपलब्ध सीमित साधनों का प्रयोग सर्वप्रथम कुछ चुने क्षेत्रों में करना पड़ता है, जिससे इन क्षेत्रों का विकास हो जाता है। इसके बाद में अन्य क्षेत्रों का विकास करना भी सम्भव हो जाता है। इस प्रकार क्षेत्रीय एवं खण्डीय असंतुलन देश के आर्थिक विकास के लिए लाभदायी होता है।

2) **पूंजी निर्माण** - समाज में धन का जितना अधिक असमान वितरण होगा, बचतें एवं पूंजी निर्माण उतना ही अधिक होगा, क्योंकि अमीरों की आय में वृद्धि होने पर उनकी बचत क्षमता बढ़ जाती है। इस प्रकार क्षेत्रीय एवं खण्डीय असंतुलन पूंजी निर्माण में सहायक होता है। इसके विपरीत गरीबों की उपभोग प्रवृत्ति अधिक होती है, अर्थात् वह अपनी सम्पूर्ण आय उपभोग पर व्यय कर देते हैं। अत: वे बचत में योगदान नहीं दे पाते हैं।

3) **नए उत्पादनों को प्रोत्साहन** - नई वस्तुओं की प्रारंभ में लागत अधिक होती है। असंतुलन के कारण विकसित क्षेत्रों में अधिक धन होने से ऐसी महंगी वस्तुओं को उन क्षेत्रों में खपाकर नई वस्तुओं के उत्पादन को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

- **हानिकारक प्रभाव**

1) **साधनों का अनुचित उपयोग** - क्षेत्रीय एवं खण्डीय असंतुलन के कारण केवल उन्हीं क्षेत्रों के साधनों का उपयोग हो पाता है, जिसका विकास होता है। शेष क्षेत्रों के साधन बेकार पड़े रहते हैं। इस प्रकार कुछ क्षेत्रों में साधनों का अतिदोहन (Overexploitation) एवं कुछ क्षेत्रों में अल्पदोहन (Underexploitation) होता है।

2) **क्षेत्रीय संघर्ष** - असंतुलित विकास क्षेत्रीय संघर्ष को बढ़ावा देता है। भारत में नक्सलवाद की समस्या इस क्षेत्रीय अंसतुलन का परिणाम है।

3) **राजनीतिक अस्थिरता** - आर्थिक असंतुलन के कारण अविकसित क्षेत्रों के निवासी कभी-कभी सरकार के विरुद्ध अवाजें उठाने लगते हैं। वे अपने अधिकारों की मांग करने लगते हैं। इससे पारस्परिक तनाव एवं राजनीतिक अस्थिरिता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। भारत में पूर्वोत्तर क्षेत्र की समस्या इसी का अंग है।

4) **सामाजिक कल्याण में कमी** - असंतुलन के कारण कुछ चुने हुए क्षेत्रों के निवासियों की आय में निरन्तर वृद्धि होती है। जब धनी लोगों की आय में वृद्धि होती है, तो इससे समाज को उपयोगिता के रूप मे लाभ प्राप्त होता है। निर्धन व्यक्ति, जो बढ़ी हुई आय से अधिक उपयोगिता प्राप्त कर सकते हैं, परन्तु वे इससे वंचित रहते हैं। परिणामस्वरूप समाज के कुल कल्याण में कमी हो जाती है। इस प्रकार **अधिकतम सामाजिक हित का सिद्धान्त** (Principle of Maximum Social Benefit) ध्वस्त हो जाता है।

5) **प्रवसन को बढ़ावा** - क्षेत्रीय असंतुलन के कारण अल्पविकसित क्षेत्रों से विकसित क्षेत्रों की ओर पलायन होने लगता है। इससे विकसित क्षेत्रों के संसाधनों पर दबाव बढ़ जाता है। अल्पविकसित क्षेत्रों में भी संसाधन श्रम शक्ति की कमी के कारण यथावत रह जाते हैं। भारत में महाराष्ट्र एवं दिल्ली जैसे राज्य, यूपी एवं बिहार से होने वाले पलायन का सामना करते हैं। कई बार यह समस्या, विवाद का रूप धारण कर लेती है।

8) **नैतिक पतन** - असंतुलन के कारण उन्नत क्षेत्रों के निवासियों की आय में अत्यधिक वृद्धि होने के कारण वे विलासिता की वस्तुओं का उपभोग करने लगते हैं तथा उनमें चरित्रहीनता बढ़ने लगती है। इसी प्रकार अविकसित क्षेत्रों के निवासी आय की कमी के कारण चोरी, डकैती तथा वेश्यावृत्ति जैसे दुष्कर्मों में संलग्न होने लगते हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

प्रवजन
Migration

❒ अर्थ (Meaning)

साधारणतया प्रवजन का तात्पर्य आवागमन है। मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान को आता-जाता रहता है, जिसके फलस्वरूप उसके निवास में परिवर्तन होते रहते हैं। मनुष्य के निवास स्थान के परिवर्तन की घटना को प्रवजन कहते हैं। निवास स्थान में होने वाले परिवर्तन को स्थलीय गतिशीलता (Spatial Mobility) भी कहते हैं। प्रवसरन की कुछ प्रमुख परिभाषाएं निम्नलिखित हैं -

1) **डेविड एम. हीर** - "प्रवजन का अर्थ है अपने स्वाभाविक निवास को परिवर्तित करना।"

2) **संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO)** - "प्रवजन निवास स्थान को परिवर्तित करते हुए एक भौगोलिक इकाई से दूसरी भौगोलिक इकाई में विचरण का एक प्रकार है।"

संक्षेप में प्रवजन में निम्नलिखित तत्वों का आभास होता है -

1) इसमें **निवास** में परिवर्तन होना आवश्यक है।

2) यह परिवर्तन **स्थायी** होता है।

3) इसके अन्तर्गत किसी **भौगोलिक** इकाई को पार करना आवश्यक है।

❒ प्रवजन के प्रकार (Kinds of Migration)

प्रवजन को मुख्यत: 2 भागों में बांटा जा सकता है - आन्तरिक प्रवजन एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रवजन।

◆ आन्तरिक प्रवजन (Internal Migration)

किसी राष्ट्र विशेष के अन्दर होने वाले गतिशीलता को आन्तरिक प्रवजन कहते हैं। यदि मध्य प्रदेश की जनसंख्या का कुछ भाग महाराष्ट्र, गुजरात एवं बंगाल प्रदेशों में जाकर रहने लगे, तो यह आंतरिक प्रवजन कहा जाएगा। आन्तरिक प्रवजन के विभिन्न प्रारूपों की व्याख्या भी आवश्यक है। आन्तरिक प्रवजन का मुख्यत: निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत अध्ययन किया जा सकता है -

1) **अन्तर्प्रांतीय प्रवजन (Inter Provincial Migration)** - इस प्रकार के प्रवजन से आशय किसी राष्ट्र की सीमा के अन्तर्गत एक प्रांत से दूसरे प्रांत को होने वाले प्रवजन से है। इस प्रकार के प्रवजन का निर्धारण प्रांतीय सीमाओं के अन्तर्गत होता है।

2) **वैवाहित प्रवजन (Marital Migration)** - इस प्रकार के प्रवजन से तात्पर्य वर अथवा वधू के उस प्रवजन से है, जो विवाह के कारण घटित होता है। इस प्रकार का प्रवजन गांव से शहर, शहर से शहर, शहर से गांव अथवा गांव से गांव को हो सकता है। यद्यपि यह प्रवजन अन्तर्राष्ट्रीय भी हो सकता है, परन्तु इनकी संख्या अतिनगण्य होती है।

3) **गांव-शहर प्रवजन (Rural-Urban Migration)** - गांव-शहर प्रवजन 4 प्रकार से हो सकते हैं - गांवों से शहरों की ओर, गांवों से गांवों की ओर, शहरों से गांवों की ओर एवं शहरों से शहरों की ओर।

4) **संबद्धताजन्य प्रवजन (Association Migration)** - इस प्रकार के प्रवजन से आशय विदेश में किसी अर्जनशील व्यक्ति के साथ उसके आश्रितों के प्रवजन से है। कमाने वाले सदस्यों का स्थानान्तरण प्राय: एकाकी प्रवजन के रूप में होता है। वे शहरों में रहकर आय कमाते हैं और गांव में रहने वाले आश्रितों को धनराशि भेजते रहते हैं, लेकिन एकाकी परिवारों की वृद्धि के साथ संबद्धताजन्य प्रवजन की प्रवृत्ति में वृद्धि होती जा रही है।

◆ अन्तर्राष्ट्रीय प्रवजन (International Magration)

इसका तात्पर्य विभिन्न राष्ट्रों के मध्य होने वाले गमनागमन से है, जैसे - भारतवर्ष में अमेरिका, इंग्लैण्ड, कनाडा, जापान आदि राष्ट्रों से लोग आते हैं और कुछ भारतवासी भी इन राष्ट्रों में जाते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय प्रवजन प्राय: 2 प्रकार का होता है। किसी देश में बाहर से आने वालों को आव्रजक (Immigrants) एवं बाहर जाने वाले प्रव्रजक (Emigrants) तथा इस प्रकार के प्रवास को क्रमश: आव्रजन एवं प्रवजन कहा जाता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

वस्तुत: आंतरिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रवजन में कोई मौलिक अंतर नहीं है। 2 राष्ट्रों के बीच की सीमाएं मानवकृत हैं। अत: जो प्रभाव आंतरिक प्रवजन से पड़ते हैं, जिन कारणों से आंतरिक प्रवजन होता है, प्राय: वे ही प्रभाव व कारण अन्तर्राष्ट्रीय प्रवजन से प्रभावित होते हैं। अत: आधुनिक समय में प्रवजन को केवल प्रवजन के रूप में दिया जाता है।

❐ प्रवजन के कारण (Causes of Migration)

प्रवजन के कारणों को निर्धारित करना एक कठिन कार्य है। यदि प्रवजन के पीछे की मानव की प्रवृत्ति का पता लगाया जाए, तो यह भी एक सरल कार्य नहीं है। प्रत्येक प्रवजन के पीछे कोई स्पष्ट कारण अवश्य होता है, लेकिन उस कारण को प्रत्येक प्रवजन का कारण नहीं माना जा सकता है। प्रत्येक प्रवजन के पीछे **1)** आकर्षण तत्व एवं **2)** विकर्षण तत्व क्रियाशील रहते हैं।

- **आकर्षण तत्व (Pull Factors)** - आकर्षण तत्व वे हैं, जो किसी व्यक्ति को किसी एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान में बसने के लिए लालायित करते हैं। दूसरे शब्दों में ये वे कारक हैं, जो मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। आकर्षक तत्वों के अन्तर्गत मुख्यरूप से निम्नलिखित तथ्यों का समावेश किया जाता है -
  1) रोजगार के अच्छे अवसरों की उपलब्धता।
  2) आमदनी के अधिक अवसर।
  3) आवास, शिक्षा तथा प्रशिक्षण की अधिक व अच्छी सुविधाएं।
  4) दूसरे देश की आर्थिक सम्पन्नता, अच्छी आबों-हवा एवं उन्नत जीवनस्तर।
  5) शिक्षा तथा प्रशिक्षण के अनुकूल पद प्राप्त करने के अवसर।
- **विकर्षक तत्व (Push Factors)** - प्रवास को प्रोत्साहित करने वाले विकर्षक तत्वों के अन्तर्गत निम्नलिखित कारकों का समावेश होता है -
  1) देश के अन्दर जीवनयापन के साधनों की कमी, अपर्याप्त मजदूरी।
  2) राजनीतिक तथा धार्मिक आधार के भेदभाव।
  3) बेरोजगारी, निम्न जीवनस्तर, मशीनीकरण के फलस्वरूप रोजगार के अवसरों की समाप्ति।
  4) उन्नति के अवसरों का अभाव।
  5) समुदाय विशेष के व्यवहार, विश्वास तथा मान्यताओं से विरक्ति आदि।

वस्तुत: सभी क्षेत्रों के कुछ सामान्य कारण हैं, जो वर्तमान में रहते हैं, इसके अन्तर्गत आते हैं। यह स्पष्ट कर पाना संभव नहीं है कि उक्त में से कौन-सा कारक प्रवजन को प्रोत्साहित करता है या इसे रोकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रवजन की प्रक्रिया अत्यन्त जटिल है और कई कारणों द्वारा प्रभावित होती है। अध्ययन की सुविधा के लिए प्रवजन के कारणों को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है -

Shaping Your Dreams

प्रवजन के कारण

प्राकृतिक कारण | **आर्थिक कारण** | **सामाजिक कारण** | **सांस्कृतिक कारण** | **धार्मिक कारण** | **जनांकिकी कारण**

1) प्राकृतिक कारण (Natural Factors) - प्रवजन को प्रभावित करने वाला यह महत्वपूर्ण कारण है। लोग खराब जलवायु तथा दुर्गम भौगोलिक दशाओं वाले क्षेत्र से स्वास्थ्यवर्धक वाले स्थानों में स्थानान्तरण कर लेते हैं। अकाल, बाढ़, सूखा, भूकम्प, ज्वालामुखी आदि ऐसे प्राकृतिक कारण है, जो प्रवजन को आवश्यक बना देते हैं।

2) आर्थिक कारण (Economic Factors) - जनसंख्या के प्रवजन के निर्धारण में आर्थिक कारणों की प्रमुख भूमिका रहती है। वे प्रवजन की मात्रा और दिशा निर्धारित करने वाले प्रमुख घटक होते हैं। इनमें कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता, औद्योगिक व खनिज संसाधनों का विकास, यातायात के साधन, रोजगार व मनोरंजन की सुविधाएं आदि कारण हैं, जो प्रवजन को प्रेरित करते हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) **सामाजिक कारण (Social Factors)** - प्रवजन के लिए सामाजिक रीति-रिवाज व परम्पराएं भी उत्तरदायी होती हैं। इनमें सबसे प्रमुख कारण विवाह है। विवाह के पश्चात् पति जहां-जहां किसी भी कारण से प्रवासित होता है, लड़की को भी साथ देना पड़ता है। इस प्रकार लड़कियां शादी के पश्चात् हमेशा के लिए प्रवासी हो जाती है। इसके अलावा शिक्षा, स्वास्थ्य, मानव विकास एवं बच्चों के उज्ज्वल भविष्य की इच्छा भी प्रवजन को प्रेरित करती है।

4) **सांस्कृतिक कारण (Cultural Factors)** - सांस्कृतिक सम्पर्क जैसे-जैसे बढ़ते जाता है, प्रवजन की संभावना भी वैसे-वैसे बढ़ती जाती है। सांस्कृतिक सम्पर्कों को बढ़ाने में शिक्षा, यातायात की सुविधाएं और संचार व्यवस्था का विशेष हाथ होता है। भाषा व सांस्कृतिक परम्पराएं भी प्रवास की मात्रा व दिशा को प्रभावित करते हैं। उदाहरणार्थ - हिन्दी भाषी प्रदेश के लोग सधारणत: उन प्रदेशों में प्रवास करते हैं, जो या तो हिन्दी प्रदेश होते हैं अथवा जहां विचार विनिमय की सुविधा होती है। लोग अत्यधिक सांस्कृतिक भिन्नता वाले देशों में प्रवजन करने में हिचकते हैं।

5) **धार्मिक कारण (Religious Factors)** - धार्मिक आकर्षणों एवं संकटों के कारण भी प्रवजन होता है। ईसाई, ईस्लाम, बौद्ध आदि धर्म परिवर्तनों एवं प्रसार के आन्दोलनों से प्रभावित प्रवजन के बहुत से उदाहरण इतिहास में मिलते हैं। जीवन के अंतिम दिनों में तीर्थ स्थानों में बस जाने के लिए होने वाले प्रवजन भी धार्मिक भावना से प्रेरित होते हैं।

6) **जनांकिकी कारण (Demography Factors)** - उन स्थानों में जहां जनसंख्या का दबाव अधिक है, प्राय: कम दबाव की ओर जनसंख्या का प्रवाह होता है। जन्म दर एवं मृत्यु दर इस तरह के प्रवास को प्रभावित करते हैं। यदि पुरूष विशिष्ट दर कम है, तो संतुलन बनाए रखने के लिए बाहर से पुरूषों का आगमन बढ़ेगा। इसके विपरीत यदि स्त्री विशिष्ट जन्म दर कम है, तो स्त्रियों का आगमन बढ़ेगा।

❐ प्रवजन के मार्ग में बाधाएं (Hurdles in Migration)

गतिशीलता की दृष्टि से मनुष्य सबसे कम गतिशील है। वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर सरलता से प्रवास नहीं करता है। स्थान विशेष के साथ लगाव, संस्कृति, स्थान विशेष की जानकारी, सामाजिक समन्वय आदि अनेक कारण है, जो प्रवास में बाधा डालते हैं। एक देश को छोड़कर दूसरे देश में बसने से व्यक्ति के सामने अनेक प्रकार की कठिनाइयां आती हैं। उसे अपने को नए सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरण में ढालना पड़ता है। संक्षेप में प्रवजन के बाधक तत्व निम्नलिखित हैं -

1) **दूरी (Distance)** - किसी एक विशेष स्थान से दूसरे विशेष स्थान की दूरी जितनी अधिक होती है, प्रवजन की संभावना उतनी कम होती जाती है।

2) **आवास स्थान व व्यवसाय से लगाव (Attachment to Place & Work)** - अनेक व्यक्तियों अपने निवास स्थान व व्यवसाय से इतना अधिक लगाव होता है कि वे दूसरे स्थान व देश में अधिक आय के बावजूद प्रवास को पसंद नहीं करते हैं।

3) **भाषा, संस्कृति व रीति-रिवाज (Language, Culture & Traditions)** - स्थान परिवर्तन पर यदि भाषा में परिवर्तन हो जाता है, संस्कृति एवं रीति-रिवाज बदल जाते हैं, तो व्यक्ति ऐसे स्थान पर नहीं जाना चाहते हैं। मानव का स्वभाव होता है कि वह अपनी बोली, भाषा, खान-पान, संस्कृति में ही उठना-बैठना पसंद करता है। अत: इन सब से वंचित हो जाने का भय उसे प्रवास होने से रोक देता है।

4) **प्रवास क्षमता (Migration Capacity)** - एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाकर बसने के लिए एक विशेष प्रकार की क्षमता, निर्भिकता और प्रगतिशीलता की आवश्यकता होती है। ग्रामीण व्यक्तियों में इसकी कमी होती है, वे शहर के वातावरण में सामन्जस्य स्थापित नहीं कर पाते हैं। फलत: प्रवासित होने में संकोच करते हैं।

5) **अनिश्चितता (Uncertaintity)** - नए स्थान में बसने के लिए खर्च एवं आने-जाने की कठिनाइयां और रोजगार मिलने की अनिश्चितता भी प्रवास की मात्रा को सीमित करते हैं।

6) **प्रवास के अधिनियम (Migration Laws)** - एक देश से दूसरे देश जाने के मार्ग में सबसे बड़ी समस्या यह है कि विश्व के अधिकांश देशों में ऐसे अधिनियम बनाए गए हैं, जो अपने देश के निवासी को दूसरे देशों में बसने की आज्ञा नहीं देते।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

नगरीकरण एवं नगरीय क्षेत्र के मुद्दे
Urbanisation & Urban Issues

❐ नगरीकरण का अर्थ एवं आशय (Meaning of Urbanisation)

नगरीकरण का अर्थ है – शहरों में जनसंख्या का केन्द्रीकरण। किसी राज्य की कुल जनसंख्या का जितना ही अधिक भाग नगरों में केन्द्रित होगा या कुल जनसंख्या का जितना ही अधिक अनुपात शहरी जनसंख्या का होगा, वह राज्य उतना ही अधिक नगरीकृत कहलाएगा। पी. एम. हॉसर के अनुसार नगरीकरण वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत जनसंख्या विस्फोट के कारण शहर की जनसंख्या में वृद्धि होती है, लोग ग्रामीण क्षेत्र से शहरी क्षेत्र की ओर प्रवजन (Migrate) करते हैं। इस प्रकार शहरों का विस्तार होता है। डी. एप. मोकार यह मानते हैं कि नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत ग्रामीण लोग शहर की ओर प्रवास करते हैं। इस प्रकार नगरीकरण में 2 प्रकार की प्रक्रियाएं मिलती हैं – शहरों की संख्या में गुणनात्मक (Multiplication) वृद्धि तथा शहर विशेष के आकार (Size) में वृद्धि। कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या के अनुपात की वृद्धि को सामान्यत: नगरीकरण का सूचक माना जाता है।

❐ नगर की परिभाषा (Defination of Urban)

विभिन्न देशों में समयानुसार नगरीकरण की विभिन्न परिभाषाओं को अपनाया गया है। भारत में 1971 की जनगणना के अनुसार नगरीय क्षेत्र की परिभाषा प्रचलित है। इस परिभाषा के अनुसार कोई क्षेत्र नगर कहा जाएगा, यदि –

1) सभी स्थान जहां नगरपालिका, नगर निगम, कैन्टूनमेन्ट बोर्ड या नोटीफाइड एरिया हो।
2) अन्य सभी स्थान जो निम्नांकित शर्तें पूरी करें – कम से कम 5000 जनसंख्या, कम से कम 75 प्रतिशत जनसंख्या गैर-कृषि कार्य में लगी हो तथा जनसंख्या घनत्व कम से कम 400 हो।

❐ नगरीकरण के कारण (Causes of Urbanisation)

नगरीकरण को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारकों का अध्ययन हम निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत कर सकते हैं –

नगरीकरण के कारण

आर्थिक कारण | **भौगोलिक कारण** | **सामाजिक व सांस्कृतिक** | **मनोवैज्ञानिक** | **राजनीतिक**

➢ **आर्थिक कारण (Economic Causes)** – निम्नलिखित आर्थिक कारण नगरीकरण के लिए उत्तरदायी हैं –

1) **कृषि में क्रांति (Agricultural Revolution)** – कृषि में क्रांति के कारण ग्रामों के थोड़े से निवासी समस्त जनसंख्या के लिए खाद्यान्न पैदा कर लेते हैं। इसके परिणाम स्वरूप लोग कृषि उद्योग को छोड़कर अन्य उच्च आवश्यकताओं की पूर्ति में नगरों की ओर पलायन करतेहैं।

2) **औद्योगिकीकरण (Industrialisation)** – औद्योगिकीकरण व नगरीकरण के मध्य घनिष्ट संबंध है। क्योंकि जिन स्थानों पर उद्योगों का विकास हुआ वहीं नगरों का भी विकास हुआ। या नवीन नगरों की उत्पत्ति हुई। इसका कारण यह है कि एक उद्योग की स्थापना अनेक आवश्यकताओं को जन्म देती है, जैसे – पर्याप्त मात्रा में कच्चा माल, श्रमिक शक्ति की सुविधा, यातायात, बैंकिंग, संचार आदि। इन सब आवश्यकताओं की पूर्ति अनेक संस्थान मिलकर करते हैं और एक नगर के निर्माण में योगदान देते हैं।

3) **पूंजी व तकनीकी सुविधा (Facilities of Capital & Technology)** – नगरों के विकास में पूंजी व तकनीकी सुविधाओं का भी प्रभाव पड़ता है। कारण यह है कि नगरों में उद्योगों, कारखानों, यातायात के साधनों, जलपूर्ति की सुविधा आदि के लिए पूंजी की आवश्यकता पड़ती है। वस्तुत: पूंजी के कारण ही सम्पन्न व धनी राष्ट्रों में नगरों की अधिकता है। इसी प्रकार तकनीकी सुविधा का भी नगरीकरण पर प्रभाव पड़ता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

4) **शक्ति के साधन (Sources of Energy)** - कोयला, खनिज तेल, जल विद्युत आदि प्रमुख शक्ति के साधन हैं। इनकी जहां कहीं भी उपलब्धता होती है, वहीं उद्योग स्थापित हो जाते हैं और नगरों का जन्म होता है।

- **भौगोलिक कारण (Geographical Causes)** - अनुकूल भौगोलिक पर्यावरण के कारण भी नगरों का विकास संभव हो जाता है, क्योंकि जिन क्षेत्रों में भौगोलिक पर्यावरण अनुकूल होता है, वहां प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सरलता से हो जाती है। संभवत: यही कारण है कि संसार के पहले नगर दजला-फरात, नील, गंगा, सिंधु इत्यादी की घाटियों में बसे। भारत में भी गंगा-यमुना के मैदान में 1 लाख से अधिक जनसंख्या वाले 40 से अधिक नगर पाए जाते हैं।
- **सामाजिक व सांस्कृतिक कारण (Social & Cultural Causes)** - सामाजिक व सांस्कृतिक कारण भी नगरीकरण में सहायक होते हैं, जैसे - शिक्षा केन्द्र (इलाहबाद, कोटा, इंदौर आदि), स्वास्थ्य व मनोरंजन केन्द्र (नैनीताल, दार्जलिंग, पचमढ़ी आदि), धार्मिक व ऐतिहासिक केन्द्र (काशी, हरिद्वार, उज्जैन आदि) आदि।
- **मनोवैज्ञानिक कारण (Psychological Causes)** - मनोवैज्ञानिक कारण भी नगरों के विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह देखा गया है कि सब सुविधाएं उपलब्ध रहते हुए भी बहुत से लोग ग्रामों में नहीं रहना चाहते हैं। नगर का चटक-मटक व तीव्र गति से चलने वाला जीवन उन्हें आकर्षित करता है। नगरीय जीवन के प्रति इस रुझान के कारण ही शिक्षित युवक ग्रामों में नहीं जाना चाहते हैं।
- **राजनीतिक कारण (Polotical Causes)** - नगरों के विकास व नगरीकरण को प्रभावित करने में कुछ राजनीतिक कारण भी महत्वपूर्ण है, जैसे - सुरक्षा, प्रशासनिक केन्द्र (दिल्ली, लखनऊ, भोपाल आदि), सैनिक केन्द्र आदि। इसके अलावा सरकारी नीति व सरकारी सहायता से भी नगरों का विकास हो रहा है। चंढ़ीगढ़, भुवनेश्वर नगरों का विकास सरकार की सहायता से ही किया गया है।

❐ नगरीकरण के प्रभाव (Effects of Urbanisation)

नगरीकरण के प्रभाव का अध्ययन हम निम्नलिखित 2 शीर्षकों के अन्तर्गत कर सकते हैं -

- **नगरीकरण के अच्छे प्रभाव या महत्व (Importance or Good Effects of Urbanisation)** - नगरीकरण के अच्छे प्रभाव, जो अर्थव्यवस्था पर पड़ता है, उसका अध्ययन हम निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत कर सकते हैं -

1) **आर्थिक विकास का सूचक (Indicator of Economic Growth)** - नगरीकरण आर्थिक विकास का सूचक है। सामान्यतया यह पाया गया है कि जैसे-जैसे देश का आर्थिक विकास होता जाता है, वैसे-वैसे नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या का अनुपात बढ़ता जाता है, अर्थात् - किसी भी देश के आर्थिक विकास का पता उसके साथ-साथ होना नगरीय जनसंख्या की वृद्धि से लगता है। उदाहरणार्थ - हमारी जनसंख्या का बहुत थोड़ा भाग नगरों में रहता है, जिससे यह स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि अभी हम व्यापार, उद्योग-धंधों तथा संचार साधनों के विकास में बहुत पीछे हैं। अधिक स्पष्ट शब्दों में, ग्रामीण जनसंख्या की अत्यधिक प्रधानता हमारे देश के औद्योगिक पिछड़ेपन का द्योतक है, जिससे यह संकेत मिलता है कि हमारे देश में कृषि पर जनसंख्या का अत्यधिक तथा अनावश्यक भार लदा हुआ है।

2) **राष्ट्रीय आचरण पर प्रभाव (Effect of National Behaviour)** - ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में जनसंख्या का विभाजन एक दूसरे दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है। कहा जाता है कि ग्रामों और नगरों के बीच जनसंख्या के वितरण का प्रभाव जनता के राष्ट्रीय आचरण पर पड़ता है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि ग्रामों के लोग आलसी, अशिक्षित, परम्परावादी, अंधविश्वासी और प्रगतिशील विचारों को ग्रहण करने में असमर्थ होते हैं। ग्रामों में सभ्यता पीछे लौटती है, परन्तु शहरों की सभ्यता आगे दौड़ती है। नगरों के लोग अधिक प्रगतिशील, शिक्षित, दूरदर्शी और जागरूक होते हैं। सम्पूर्ण प्रगतिशील विचारों का सूत्रपात तथा प्रसार नगरों से होता है। अत: किसी भी देश के आर्थिक विकास के लिए शहरों का विकास और शहरों के प्रति आबादी का आकर्षण आवश्यक है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) **रोजागार का विस्तार (Expansion of Employment)** - औद्योगीकरण में मजदूरों की आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है। मजदूरों की आवश्यकता नगरीकरण प्रक्रिया के द्वारा पूरी होती है। यदि लोग ग्रामीण अंचल से आकर नगरों में न बसे तो नगरीय जनसंख्या के माध्यम से औद्योगीकरण की गति तेज नहीं की जा सकती है।

4) **जनांकिकी दृष्टिकोण से लाभ (Benefits from Demographic Point of View)** - नगरीकरण जनांकिकी दृष्टिकोण से भी लाभकारी होती है। इससे जन्म एवं मृत्यु दर में कमी आती है तथा स्वास्थ्य सुविधाओं आदि की सुचारू रूप से उपलब्धता के कारण जीवनस्तर ऊँचा उठता है।

5) **अन्य अच्छे प्रभाव (Other Good Effects)** -

a) कृषि का यंत्रीकरण प्रारंभ हो जाता है। कृषि के साथ-साथ अन्य व्यवसायों का जन्म होता है तथा कृषि का स्वरूप व्यावसायिक हो जाता है।

b) आवागमन एवं संचार के साधनों का विकास होने लगता है।

c) जाति प्रथा का प्रभाव घटने लगता है तथा नए-नए वर्गों का जन्म होता है।

d) शासकीय संस्थाओं का विकास होता है, जैसे - पुलिस, जेल, शिक्षा संस्थाएं, चिकित्सालय आदि।

e) व्यापारिक मनोरंजन की संख्या में वृद्धि होने लगती है और इन्हें जीवन की आवश्यकता के रूप में स्वीकार किया जाता है।

f) राजनीतिक जागरूकता विकसित होती है। प्रजातंत्र के महत्व में वृद्धि होती है।

g) अधिक उत्पादन होता है और उत्पादन एवं उभोग में प्रतिस्पर्धा का विकास होता है।

➢ **नगरीकरण के बुरे प्रभाव या समस्याएं (Problems of Bad Effect of Urbanisation)**

1) **घरेलू उद्योगों के विकास में बाधा (Obstacle in Growth of Domestic Industries)** - नगरीकरण के कारण कृषि एवं घरेलू उद्योगों का विकास नहीं हो पाता है, क्योंकि पूंजी का अधिकांश भाग बड़े-बड़े उद्योगों में लग जाता है।

2) **शहरी क्षेत्रों का ग्रामीणीकरण (Ruralisation of Urban Areas)** - ग्रामीण अंचल से जो लोग नगरों में बसते जा रहे हैं, वे लोग अपनी ग्रामीण आदतें नहीं छोड़ पाते हैं, जिसके कारण नगरीय क्षेत्रों का भी ग्रामीणीकरण होता जा रहा है।

3) **बेरोजगारी में वृद्धि (Increase in Unemployment)** - नगरीकरण के कारण नगरों में बेरोजगारी के अनुपात में वृद्धि होती जा रही है, क्योंकि काम खोजने वालों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है, जबकि काम की संभावनाओं में उतनी वृद्धि नहीं हो पाती है।

4) **बढ़ती हुई गंदी बस्तियां (Increase in Slums)** - नगरों में गंदी बस्तियों की बढ़ती हुई संख्या का प्रमुख कारण नगरीकरण है। ग्रामीण अंचल से आने वालों को जब रहने का स्थान नहीं मिलता तो लोग नगरों में जहां भी स्थान मिलता है, झोपड़ी बनाकर रहने लगते हैं।

5) **अपराधों में वृद्धि (Increase in Crimes)** - जो नगर जितना अधिक बड़ा है, वहां अपराधों की संख्या उतनी अधिक है। नगरीकरण के साथ-साथ बढ़ते हुए अपराध के कारण एक सामाजिक समस्या उत्पन्न हो गई है।

6) **बढ़ता हुआ जनसंख्या घनत्व (Incresing Population Density)** - नगरीकरण के कारण नगरों में जनसंख्या का घनत्व बढ़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप रहने के स्थान की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

7) **अन्य बूरे प्रभाव (Other Bad Effect)**

a) नगरों की सड़कों पर बढ़ती हुई भीड़ आजकल दुर्घटनाओं का प्रमुख कारण है। नगरीकरण एवं दुर्घटनाओं में सीधा संबंध है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

b) नगरों की अधिकांश जनता की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं होती कि वह शहर की सुविधाओं का उपभोग कर सके तथा सरकार नगरों में इस बढ़ी हुई जनसंख्या को निःशुल्क सेवाएं उपलब्ध नहीं करा पाती। नगरों में बड़ी संख्या में लोग सड़कों के किनारे, खेल में मैदानों एवं पार्कों में मल-मूत्र त्याग करते हैं, जिससे दूषित वातावरण पैदा हो जाता है।

c) नगरों में परमार्थवादी भावना का विनाश होने लगता है तथा स्वार्थवादी भावना का विकास प्रारंभ हो जाता है।

d) नगरीकरण के कारण विषम आर्थिक व्यवस्था उत्पन्न होती जाती है। गरीब व्यक्ति और गरीब होते जाते हैं और धनी व्यक्ति और धनी होते जाते हैं। परिणामस्वरूप दोनों वर्गों के मध्य दूरी बढ़ती है और वर्ग संघर्ष का जन्म होता है।

e) जनसंख्या की गतिशीलता में वृद्धि होती है। इसका यह परिणाम निकलता है कि पड़ोसी का कोई महत्व नहीं होता है।

f) भौतिकवादी विचारधारा विकसित होती है।

❐ नगरीय क्षेत्र के मुद्दे

नगरीय क्षेत्रों से संबंधित कुछ सामाजिक एवं आर्थिक मुद्दों का वर्गीकरण इस प्रकार है –

◆ मलिन बस्तियां एवं शहरी गरीबी

चूंकि भारत में नगरीकरण अनियोजित ढंग से हुआ है तथा नगरीकरण का मुख्य कारण ग्रामीण क्षेत्रों से पलायन रहा है। अतः नगरीय क्षेत्रों में पर्याप्त आवास सुविधा के अभाव में अवैध बस्तियों का विकास होता है। ये बस्तियां कई समस्याओं, जैसे – गंदगी, दूषित पेयजल, बिजली की कमी आदि का सामना करती हैं। यहां पर असंगठित क्षेत्रों में रोजगार पाने वाले, रेहड़ी-पटरी वाले आदि निवास करते हैं। व्यापक गरीबी यहां की एक अन्य समस्या है। गरीबी एवं दूषित सामाजिक वातावरण के चलते यहां पर आपराधिक प्रवृत्तियां जन्म लेती हैं। चोरी, नशाखोरी सहित अन्य अपराध यहां पर स्थान बना लेते हैं। चूंकि शहर बढ़ते प्रवास के अनुसार अधोसंरचना विकसित नहीं कर पाते हैं। अतः प्रवास का एक बड़ा वर्ग बिना सुविधाओं के जीवन व्यतीत करता है। कम अवसर व्यापक गरीबी को जन्म देते हैं। वर्तमान में NSSO के 68वें राउण्ड के अनुसार शहरी गरीबी का प्रतिशत ..... है।

◆ रोजगारजनन एवं बेरोजगारी

अत्यधिक औद्योगिक संकेन्द्रण के कारण शहरी क्षेत्रों में श्रम शक्ति आकर्षित होती है, किन्तु श्रम की पूर्ति के अनुसार रोजगार जनन नहीं हो पाता है। अतः एक बड़ा वर्ग बेरोजगार रह जाता है। आज भारत के समक्ष शहरी बेरोजगारी एक गंभीर समस्या है। शहरी बेरोजगारी को 2 वर्गों में विभक्त किया जा सकता है – शिक्षित बेरोजगारी एवं औद्योगिक बेरोजगारी।

जहां अन्य विकासशील देशों में कुशल श्रम का अभाव है, वहीं भारत में इंजीनियरिंग डिग्री व डिप्लोमा वाले लोग भी बेरोजगार रह जाते हैं। यह एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि भारत में मेट्रिक पास युवकों के लिए कोई व्यवसायिक प्रशिक्षण नहीं होता है, इसलिए वे कोई भी कुशल कार्य करने में सक्षम नहीं होते हैं। वे सभी क्लर्कों व अन्य कम वेतन वाले अकुश रोजगार अवसरों के पीछे दौड़ते हैं। किसी समय विशेष पर औद्योगिक क्षेत्र में पाई जाने वाली बेरोजगारी औद्योगिक बेरोजगारी कहलाती है। भारत में औद्योगिक क्षेत्र का जितना विस्तार हुआ है, उतना औद्योगिक रोजगार नहीं बढ़ पाया है। इस प्रकार शहरी क्षेत्र बेरोजगारी का केन्द्र बन चुके हैं, जिनके साथ अन्य विसंगतियां जुड़ जाती हैं।

◆ यातायात की समस्या

शहरों में बढ़ती आबादी दिन-प्रतिदिन वाहनों की संख्या भी बढ़ाती जा रही है। प्रत्येक नागरिक के लिए यातायात की सुगम व्यवस्था करना एक बड़ी चुनौती है। जहां सरकार के लिए नागरिकों को सार्वजनिक परिवहन उपलब्ध कराने की चुनौती है, वहीं दूसरी ओर असंख्य निजी वाहनों के लिए सड़कें, फ्लाई ओवर, पार्किंग आदि उपलब्ध करने की भी दुविधा है। सस्ते वाहनों और फाइनेंस की सुविधा ने सड़कों पर निजी वाहनों की बाढ़ ला दी है। वर्ष 2010 में दिल्ली हाईकोर्ट ने नैनो कार निर्माताओं से यह पूछा कि आपके सस्ते वाहनों

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

के लिए यातायात प्रबंधन किस प्रकार किया जाए? बढ़ता शोर, अत्यधिक जाम, समय का ह्रांस आदि शहरी यातायात की समस्याएं हैं। एक बड़ी आबादी को सरकार सार्वजनिक परिवहन पर विवर्तित (Shift) करने का प्रयास कर रही है। बी. आर. टी. एस. प्रणाली, मेट्रो ट्रेन आदि इस संबंध में किए गए महत्वपूर्ण प्रयास हैं।

- **नगरीय प्रदूषण**

नगरीय क्षेत्र में विकास के चरणों में प्राकृतिक वनस्पति, पेड़-पौधों आदि कम होते जाते हैं। कांक्रीट के जंगल बन चुके यह क्षेत्र व्यापक भू-तापन (Global Warming) दर्शाते हैं। जलवायु परिवर्तन के इस दौर में यह एक गंभीर समस्या है। अनेक अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की रिपोर्टों से यह स्पष्ट है कि जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक नुकसान उन शहरों को होगा, जो समुद्र किनारे बसे हैं। अनुमान है कि वर्ष 2050 तक समुद्र किनारे बसे कई शहर जलमग्न हो जाएंगे। भारत के संदर्भ में यह विशेष रूप से सतर्कता का विषय है। भारत के कई सामरिक एवं औद्योगिक दृष्टि से महत्वपूर्ण शहर समुद्र किनारे ही बसे हैं।

असंख्य वाहनों, कारखानों की चिमनियों आदि से निकलने वाला धुंआ वायु प्रदूषण का कारण बनता है। घरेलू उपभोग से निकला जल, कारखानों का मलिन जल नदियों को प्रदूषित करता है। समस्त प्रमुख औद्योगिक नगर, जैसे - कानपुर, दिल्ली, आगरा, लखनऊ, अहमदाबाद आदि नदियों को प्रदूषित कर रहे हैं। यह प्रदूषण पर्यावरण के साथ-साथ मनुष्य के लिए भी घातक सिद्ध हो रहा है। प्रदूषण के इन नकारात्मक प्रभावों से मनुष्य को बचाना एक गंभीर चुनौती है।

- **अन्य समस्याएं**

विश्व विकास रिपोर्ट 2003 में विशेष रूप से निम्नलिखित शहरी समस्याओं एवं चुनौतियों की चर्चा की गई है -

1) **जल आपूर्ति सेवा (Water Supply Service)** - शहरों में जल आपूर्ति सेवा अपर्याप्त है, जीवाणु-दुषण (Bacteria Contamination) अत्यधिक है तथा अस्वच्छ जल आपूर्ति के चलते खाद्य-दूषण (Food Contamination) एवं संक्रामक बीमारियों का खतरा लगातार बना रहता है। शहरों में गरीब निवासियों तथा आसपास की अवैध बस्तियों को जल आपूर्ति सेवा का बहुत कम अंश मिल पाता है।

2) **सफाई-प्रबंध (Sanitation)** - शहरों में सार्वजनिक शौचालयों की कमी के कारण लोगों को बस्ती के आसपास के इलाकों में खुले में मलत्याग करना पड़ता है। इससे अतिसार (Diarrhoea) जैसी बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है। जिन शहरों में शौचालयों की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक है, वहां इनका रख-रखाव ठीक ढंग से नहीं किया जाता तथा मल निकास की उपयुक्त व्यवस्था नही है।

3) **जल निकासी (Drainage)** - शहरों में बरसाती नाले अत्यन्त अपर्याप्त हैं और जितने हैं, उनकी भी देख-रेख ठीक ढंग से नहीं की जाती। इसके परिणामस्वरूप वर्षा के दिनों में बाढ़ जैसी स्थिति हो जाती है तथा मच्छरों इत्यादि के पनपने से कई बीमारियां फैलती हैं।

4) **जल संसाधन (Water Resources)** - शहरों में बरसाती नालों में गंदगी के मिलने पर तथा इन गंदगी के सड़कों पर फैल जाने से जीवाणु-प्रदूषण (Bacterial Pollution) का खतरा बढ़ जाता है। इसके अलावा नालियों में रेत, मिट्टी आदि जमने से जल-मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। शहरों में शौचालयों के खराब रख-रखाव तथा अनुपचारित मलजल (Untreated Sewage) के कारण जल प्रदूषण बढ़ता है।

5) **ठोस अपशिष्ट प्रबंधन (Solid Waste Management)** - शहरों में ठोस अपशिष्ट को इकट्ठा करने की कोई सुनियोजित व्यवस्था नहीं होती और अक्सर गन्दगी को खुले में फेंक दिया जाता है या फिर उसे एकत्रित करके जलाया जाता है। इससे बीमारी के कई रोगवाहकों (मक्खियां, मच्छर, चूहे आदि) को पनपने का मौका मिलता है। इन शहरों में कूड़ा इकट्ठा करने की थोड़ी-बहुत व्यवस्था अवश्य है, परन्तु इस कूड़े में खतरनाक अपशिष्ट पदार्थों को अलग करने का कोई इंतजाम नहीं होता।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

6) **वायु प्रदूषण (Air Pollution)** - शहरों में घरों में निम्न कोटि के ईंधन के प्रयोग से तथा रोशनी के पुराने स्रोतों पर निर्भरता से घरों के अन्दर की वायु प्रदूषित होती है।

- **शहरी आवास के मुद्दे**

ग्रामीण क्षेत्रों से बड़े पैमाने पर लोगों के आने के कारण तथा शहरी क्षेत्रों की अपनी आबादी में तेज वृद्धि के कारण, भूमि प्रबंधन पूरा अस्त-व्यस्त है। यह समस्या मुख्यत: निम्न आय एवं निम्न-मध्यम आय वाले शहरों में है। शहरों में खुले स्थानों पर झुग्गी-झोंपडियों का अनियंत्रित प्रसार जारी है। निम्न-मध्यम आय वाले शहरों में भूमि-प्रयोग संबंधी नियंत्रण ढीले-ढाले व अप्रभावी है। इसके परिणामस्वरूप शहरों के आस-पास लोगों का जमावड़ा बढ़ रहा है, जिससे आधारित संरचना पर दबाव बढ़ रहा है।

भारत में शहरी विकास को परम्परागत रूप से ग्रामीण विकास की तुलना में सरकार द्वारा कम संसाधन मिलते रहे हैं। शहरी विकास मंत्रालय तेजी से बढ़ते शहरीकरण की चुनौती से निपटने के लिए कई केन्द्रीय और केन्द्र द्वारा प्रयोजित योजनाओं का कार्यान्वयन करके राज्यों को सहायता दे रहा है। ऐसी योजनाओं का संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित हैं -

1) **राजीव आवास योजना** - स्लम मुक्त भारत के विजन को ध्यान में रखते हुए जून, 2011 को राजीव आवास योजना 2 चरणों में आरंभ की गई। प्रारंभिक चरण 2 वर्षों के लिए था, जो जून, 2013 में समाप्त हो गया और दूसरा चरण है - कार्यान्वयन। यह योजना शहर के सभी स्लम इलाकों में लागू होगी, चाहे वह अधिसूचित हों या गैर-अधिसूचित (चिह्नित और स्वीकृति सहित)। यह योजना शहर के नियोजन क्षेत्र के दायरे वाले शहरीकृत गावों, शहरी बेघर और फुटपाथ पर रहने वालों के मामले में भी लागू होगी।

स्लम से निपटने के लिए दोहरी रणनीति होगी - प्रथम, मौजूदा सभी स्लम्स के पुनर्विकास के लिए सुधारात्मक रणनीति और द्वितीय, स्लम्स के बढ़ने पर नियंत्रण रखने संबंधी निवारक रणनीति। योजना के तहत् सस्ते मकान खरीदने के लिए ईडब्ल्यूएस/एलआईजी परिवारों को 5 लाख रुपए तक का ऋण प्रदान करने हेतु केन्द्र सरकार ने कैबिनेट की मंजूरी से 1,000 करोड़ रुपए प्रारंभिक राशि के साथ ऋण जोखिम गारंटी कोष बनाया है।

भागीदारी योजना के तहत् सस्ते मकान बनाना, जिसका मकसद सस्ते मकान बनाने के कार्य में सार्वजनिक निजी भागीदारियों को बढ़ावा देना है, को राजीव आवास योजना के साथ जोड़ा गया है। योजना के तहत् प्रत्येक सस्ती रिहायशी इकाई में 75,000 रुपए की दर पर केन्द्रीय सहायता उपलब्ध कराई जाएगी।

2) **राजीव ऋण योजना** - राजीव ऋण योजना शहरी इलकों में आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग/न्यूनतम आय वर्ग की आवास संबंधी जरूरतों को ऋण का प्रवाह बढ़ाने के जरिए पूरा करने का माध्यम है। 11वीं योजना अवधि की प्रायोगिक योजना- शहरी गरीब के आवास के लिए ब्याज सब्सिडी योजना (आईएसएचयूपी) को कार्य क्षेत्र और कवरेज बढ़ाने हेतु संशोधित करके आरआरवाई का निरूपण किया गया है। आरआरआई देश के सभी शहरी इलाकों में लागू की जाने वाली 100 प्रतिशत केन्द्रीय क्षेत्र की योजना है। यह योजना आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग और न्यूनतम आय वर्ग श्रेणी के लोगों को अपना मकान बनवाने या मौजूदा मकान में विस्तार करने के लिए दिए जाने वाले ऋणों पर ब्याज में 5 प्रतिशत सब्सिडी देने का प्रावधान करती है। इस ऋण की अधिकतम सीमा आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए 5 लाख रुपए तथा न्यूनतम आय वर्ग के लिए 8 लाख रुपए हैं।

3) **राष्ट्रीय शहरी आवास एवं पर्यावास नीति 2007** - भोजन और कपड़े के बाद आवास मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है। 11वीं पंचवर्षीय योजना के अंत में 18.78 मिलियन आवासों की अनुमानित कमी थी, हालांकि हमारे देश के शहरी इलाके भी पीने योग्य पानी, उचित जल निकासी प्रणाली, सीवर नेटवर्क, साफ-सफाई की सुविधाओं, सड़कों तथा उचित ठोस कचरा प्रबंधन जैसी बुनियादी सुविधाओं की घोर कमी के शिकार हैं। यह नीति देश में समाज के सभी वर्गों के लिए किफायती दामों पर भूमि, आश्रय की उचित आपूर्ति तथा सेवाएं सुनिश्चित कराने वाली बसावटों के निरंतर विकास को प्रोत्साहन देती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

ग्रामीण विकास
Rural Development

भारतीय अर्थव्यवस्था में विगत वर्षों में कई परिवर्तन देखने को मिलते हैं। उद्योग व सेवा का सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में भाग बढ़ा है व कृषि का हिस्सा निरन्तर कम होता जा रहा है। क्रय शक्ति समता पर विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन चुका भारत, लगातार कई दशकों से वृद्धि कर रहा है, किन्तु करोड़ों गरीब, कुपोषण से झुझते लोग, व्यापक बेरोजगारी, आत्महत्या करते किसान भारत के विकास (Developed) पर प्रश्न चिह्न लगाते हैं। इन समस्याओं का सामाधन करना है, तो हमें विकास का अभिकेन्द्र (Epiccentre) ग्रामीण भारत को रखना होगा। इस विचार के मूल में यह तथ्य निहीत है कि भारत की लगभग 68 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है एवं 55 प्रतिशत श्रम शक्ति कृषि एवं सहायक गतिविधियों में लगी हुई है। अत: ग्रामीण विकास के बिना भारत के आर्थिक विकास का दावा खोखला है।

❒ ग्रामीण विकास की अवधारणा (Concept of Rural Development)

ग्रामीण विकास एक व्यापक शब्द है। यह मूलत: ग्रामीण अर्थव्यवस्था के उन घटकों के विकास पर ध्यान केन्द्रित करने पर बल देता है, जो ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सर्वांगीण विकास मे पिछड़ गए हैं। दूसरे शब्दों में ग्रामीण विकास का अभिप्राय जहां एक ओर लोगों का बेहतर आर्थिक विकास करना है, वहीं दूसरी ओर व्यापक सामाजिक बदलाव लाना भी है। ग्रामीण लोगों को आर्थिक विकास की बेहतर सम्भावनाएं मुहैया कराने के उद्देश्य से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में लोगों की अधिक भागीदारी, योजना का विकेन्द्रीकरण, भूमि सुधारों के बेहतर कार्यान्वयन और आसानी से ऋण प्राप्त करने की परिकल्पना की गई है।

❒ ग्रामीण क्षेत्र के मुद्दे (Rural Issues)

ग्रामीण विकास कार्य-योजना के मुख्य **मुद्दे** निम्नलिखित हैं –

- **आधारिक अवसंरचना (Basic Infrastructure)** – यह एक वृहद मुद्दा है, जिसमें निम्नलिखित बिन्दु शामिल हैं –
  1) परिवहन का विकास, मुख्यत: सड़कें एवं रेल्वे की ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुंच।
  2) ग्रामीण बाजारों का विकास एवं उनका शहरी बाजारों से जुड़ाव।
  3) कृषि एवं गैर-कृषि आवश्यकताओं के लिए ऊर्जा की उपलब्धता एवं ग्रामीण विद्युतीकरण।
  4) सिंचाई के स्थिर साधनों का विकास करना।
  5) ग्रामीणों हेतु आवास की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
  6) ग्रामीण जलापूर्ति, शौचालय एवं स्वच्छता आदि क्षेत्रों का विकास करना।
  7) कृषि शोध एवं अनुसंधान की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
  8) प्रभावी संचार की उपलब्धता, जैसे – गांवों तक इंटरनेट की पहुंच, टेलिडेन्सिटी को बढ़ाना आदि।
- **मानव संसाधन विकास (Human Resource Development)** – ग्रामीण भारत के विकास एक अन्य महत्वपूर्ण मुद्दा मानव संसाधन के विकास का है, जिसमें कौशल विकास सम्मिलित है। इसके अन्तर्गत साक्षरता (विशेषकर स्त्री साक्षरता), स्वास्थ्य (स्वच्छता एवं जनस्वास्थ्य), प्रशिक्षण आदि बिन्दु शामिल हैं।
- **उत्पादक स्रोतों (Productive Sources) का विकास** – इसके अन्तर्गत ग्रामीण स्तर पर उत्पादक स्रोतों की पहचानकर रोजगार व आय के अतिरिक्त साधनों का विकास करना है, ताकि कृषि पर जनसंख्या के दबाव को कम किया जा सके।
- **गरीबी उन्मूलन (Poverty Alleviation)** – भारत व ग्रामीण विकास के समक्ष गरीबी सबसे बड़ा मुद्दा है। सरकार गरीबी उन्मूलन और समाज के कमजोर वर्गों की जीवन दशाओं में महत्वपूर्ण सुधार के लिए विभिन्न योजनाएं चला रही हैं।
- **भूमि सुधार एवं विकास (Land Reforms & Development)** – 70 के दशक में पीछे छूट चुके भूमि सुधारों का सहकारी खेती (Co-oprative Farming), संयुक्त खेती आदि के रूप में आज भी स्थान है। इसमें चकबंदी, उर्वरकता को बनाए रखना, जोतो के विखण्डन, मृदा अपरदन व जलाक्रांत (Water Logging) को रोकना आदि शामिल हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❒ ग्रामीण विकास के मुख्य उद्देश्य (Objective of Rural Development)

1) आर्थिक वृद्धि का लाभ गांवों तक पहुंचाते हुए उन्हें विकास प्रक्रिया में भागीदार बनाना।

2) शहरी व ग्रामीण आर्थिक विषमता को दूर करना।

3) ग्रामीण क्षेत्रों में आधारिक संरचना का विकास कर कृषि को लाभ का व्यापार बनाकर कृषकों की आय में वृद्धि करना।

4) कृषि के अलावा अन्य क्षेत्रों में ग्रामीण रोजगार की उपलब्धता सुनिश्चित करना। Rural BPO इस ओर सराहनीय कदम है।

5) शिक्षा व स्वास्थ्य सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करना।

6) ग्रामीण परिवारों के जीवनस्तर में वृद्धि करना।

❒ ग्रामीण विकास की चुनौती (Challenges of Rural Development)

ग्रामीण विकास के समक्ष निम्नलिखित मुद्दे चुनौतियों के तौर पर देखे जा सकते हैं -

◆ ग्रामीण साख (Rural Credit)

इसका आशय कृषक परिवारों को साख उपलब्ध कराने से है। यह उनके लिए जीवनरेखा की तरह कार्य करती हैं, क्योंकि -

1) भारत के अधिकांश कृषक परिवार छोटे एवं सीमांत है। कृषि उनके जीवन निर्वाह का एकमात्र साधन है।

2) कृषि बुआई एवं फसल कटाई के मध्य एक लम्बा अन्तराल होता है। फसल बुआई के समय बीज, उर्वरक आदि की खरीदारी के लिए साख आवश्यक है। भारतीय कृषक की साख जरूरतों को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है -

a) **अल्पकालीन साख आवश्यकता** - इस तरह के ऋण सामान्यत: 6 से 12 माह के लिए होते हैं। इसकी मांग किसान अल्पकालीन आवश्यकताओं, जैसे - बीज, खाद, उर्वरक, कीटनाशक आदि के लिए करते हैं।

b) **मध्यकालीन साख आवश्यकता** - इस तरह के ऋण का काल सामान्यत: 1 से 5 वर्ष का होता है। इसकी मांग किसान मध्यकालीन आवश्यकताओं, जैसे - मशीनरी, फेंसिंग लगाना, कुआं खुदवाना आदि के लिए करते हैं।

c) **दीर्घकालीन साख आवश्यकता** - इस तरह के ऋणों सामान्यत: 5 से 20 वर्ष तक का होता है। इसमें किसान अन्य जमीन खरीदने या वर्तमान भूमि में स्थायी सुधार करने की चेष्टा करता है।

Shaping Your Dreams

➢ गैर-संस्थागत स्रोत (Non-institutional Source)

परम्परागत रूप से भारतीय किसान साहुकारों, महाजनों, चेट्टियों, भूमिपतियों व ग्रामीण व्यापारियों के चुंगल में ऋण लेकर उलझे हुए हैं। यही सभी गैर-संस्थागत स्रोत में आते हैं। जो ऊँची ब्याज की दर पर ऋण उपलब्ध कराकर शोषण करते हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना तक गैर-सस्थागत स्रोतों का कुल ऋण में भाग 93 प्रतिशत था, किन्तु 1981 के बाद इसमें लगातार गिरावट आना प्रारंभ हुई।

➢ संस्थागत स्रोत (Institutional Source)

इसके अन्तर्गत सरकारें, सहकारी समितियां, वाणिज्यिक बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक सम्मिलित हैं। वर्तमान समय में ग्रामीण साख के सबसे बड़े प्रदाता वाणिज्यिक बैंक ही है। 1982 में शिवरमन कमेटी की संस्तुति के बाद NABARD की स्थापना से ग्रामीण साख में क्रांतिकारी परिवर्तन आए। संस्थागत स्रोतों का वर्णन इस प्रकार है -

1) **सहकारी साख संस्थाएं (Co-operative Credit Societies)** - सहकारी साख संस्थाएं ग्रामीण साख का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिसने कृषि उत्पादकता बढ़ाने में महत्पूर्ण भूमिका अदा की है। वर्तमान में सहकारी संस्थाएं, कुल ग्रामीण साख

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

का लगभग 30 प्रतिशत उपलब्ध कराती है। सहकारी संस्थाओं के मूलभूत उद्देश्य हैं –

a) कृषकों को समय पर साख उलब्धता सुनिश्चित करना।

b) ग्रामीण परिदृश्य से साहूकारों आदि के शोषण को बाहर करना।

c) देश के सभी क्षेत्रों में ऋण की उपलब्धता समान रूप से सुनिश्चित करना, अर्थात् – क्षेत्रीय विषमताओं को दूर करना।

2) **भारतीय स्टेट बैंक एवं अन्य वाणिज्यिक बैंक (Commercial Banks)** – 1955 में स्थापित भारतीय स्टेट बैंक ने ग्रामीण साख में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 1969 तक आते–आते सरकार ने प्रथम बार यह स्वीकार किया कि सहकारी समितियां अकेले ग्रामीण साख को पूरा कर पाने में असमर्थ है। अत: 19 जुलाई, 1969 को तत्कालीन सरकार ने 14 बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया एवं कृषि हित में निर्देशित साख नीति अपनाया। आज ये राष्ट्रीयकृत बैंक ग्रामीण साख का महत्वपूर्ण हिस्सा ही है। ग्रामीण साख का 42 प्रतिशत हिस्सा व्यापारिक बैंकों द्वारा उपलब्ध कराया जा रहा है।

3) **क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (Regional Rural Banks - RRB'S)** – 2 अक्टूबर, 1975 को 5 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के साथ इनकी स्थापना विशेषकर सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के उन लोगों को बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध करने के उद्देश्य से की गई थीं, जहां तक इनकी पहुंच नहीं थी। इन बैंकों का मूल उद्देश्य समाज के कमजोर वर्गों के लोगों को रियायती दर पर संस्थागत ऋण उपलब्ध कराना है। बैंकों का उद्देश्य ग्रामीण बचत को जुटाकर उत्पादक गतिविधियों में लगाना है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का स्वामित्व भारत सरकार, राज्य सरकार तथा इनके प्रवर्तक (Sponsored) बैंकों के पास है।

4) **कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए राष्ट्रीय बैंक (National Band for Agricultural and Rural Development - NABARD)** – इसकी स्थापना 12 जुलाई, 1982 को **शिवरमन कमेटी** की सिफारिश पर की गई। इसका मुख्यालय मुम्बई में है। कृषि वित्त एवं साख संबंधित सभी नीतियों, योजनाओं आदि के संदर्भ में नाबार्ड शीर्ष (Apex) संस्था है। इसने ग्रामीण साख के संबंध में कई महत्वपूर्ण कदम उठाए। इसमें किसान क्रेडिट कार्ड का आरंभ करना तथा स्वयं सहायता समूहों को बैंकों से जोड़ना प्रमुख है। इसके मुख्य कार्य हैं –

a) ग्रामीण क्षेत्रों में विकासात्मक कार्यों में निवेश के लिए पुनर्वित्त प्रदान करना।

b) ग्रामीण साख की निरीक्षण करना एवं संस्थागत साख को बढ़ावा देना।

c) अन्य ग्रामीण साख संस्थाओं एवं योजनाओं के साथ समन्वय स्थापित करना।

d) ग्रामीण साख व विकास में केन्द्र सरकारों, राज्य सरकारों एवं रिजर्व बैंक को सहायता करना।

5) **भूमि विकास बैंक (Land Development Bank)** – यह बैंक ग्रामीण साख की दीर्घकालीन आवश्यकता की पूर्ति करते हैं, अर्थात् – किसानों की दीर्घकालीक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर वित्त प्रदान करता है।

- **ग्रामीण बैंकिंग का आलोचनात्मक मूल्यांकन (Critical Evaluation of Rural Banking)**

विगत वर्षों में भारत में ग्रामीण बैंकिंग का पर्याप्त विकास हुआ है। 1969 के बैंकों के राष्ट्रीयकरण एवं नाबार्ड की स्थापना ने साहूकारों, महाजनों के शोषण से किसानों को मुक्त कराने का प्रयास किया है। इस बात को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि कृषि के व्यापारीकरण में एवं कृषि को लाभ का व्यापार बनाने में ग्रामीण बैंकिंग का अहम योगदान रहा है। इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि ग्रामीण बैंकिंग ने किसानों को ऋण जाल से बाहर निकालने में मदद की है।

इन सभी उपलब्धियों के बावजूद सिक्के का दूसरा पहलू भी है, जो ग्रामीण बैंकिंग की **असफलता** की कहानी कहते हैं। इसके पक्ष में तथ्य (Evidence) इस प्रकार है –

1) NSSO ने अपने 70वें दौर में पाया कि भारत में 55 प्रतिशत कृषक ऋणग्रस्तता के शिकार हैं।

2) NSSO ने अपने अध्ययन में यह स्वीकार किया है कि ग्रामीण बैंकिंग के मुख्य लाभ प्राप्तकर्ता बड़े किसान हैं। छोटे एवं सीमांत किसानों को ज्यादा लाभ नहीं मिल पाया है।

3) NSSO ने अपने अध्ययन में पाया कि ग्रामीण बैंकिंग, ग्रामीण जमाओं को आकर्षित कर पाने में असफल रही है। यह गांवों

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

में जमा करने की प्रवृत्ति को जन्म नहीं दे पाई।

4) पुन: NSSO ने अपने अध्ययन में पाया है कि पिछले 17 वर्षों में 3 लाख किसानों ने ऋणग्रस्तता के कारण आत्महत्या की है। यह ग्रामीण बैंकिंग की सबसे काली तस्वीर है।

5) जनगणना 2011 के अनुसार 2500 किसान रोज कृषि छोड़ रहे हैं। अगर साख ढांचा सफल होता, तो परिणाम कुछ और ही होते।

- **ग्रामीण विपणन (Rural Marketing)**

भारत में कृषि विपणन की वर्तमान व्यवस्था निम्नलिखित हैं -

1) **गांव के महाजन तथा व्यापारी को फलस बिक्री** - भारतीय किसान अपने उत्पादन का बड़ा भाग गांव में ही महाजन को बेच देता है। महाजन किसान की ऋणग्रस्तता का पूरा लाभ उठाता है और उसे सस्ती कीमत पर उपज बेचने के लिए बाध्य करता है।

2) **गांव के हाट में बिक्री** - गांवों में अब भी सप्ताह में एक या दो बार बाजार लगता है, जिसे हाट कहते हैं। इन बाजारों में खेतीहर मजदूर तथा कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसाय करने वाले भी अपने आवश्यकता की वस्तुएं खरीदते हैं। किसान अपने उत्पादन का छोटा-सा भाग इस प्रकार के बाजारों में भी बेच देते हैं।

3) **मंडियों में बिक्री** - अनेक गांवों के मध्य किसी कस्बे अथवा शहर में एक मंडी होती है। इन मंडियों में थोक व्यापारी होते हैं, जिन्हें आढ़तियां कहते हैं। किसान दलालों की सहायता से अपना माल आढ़तियां को बेचते हैं। प्राय: दलाल आढ़तियों से मिले होते हैं और किसान को उपज का उचित मूल्य नहीं मिलता है।

4) **सहकारी विपणन** - कृषि उत्पादन की विपणन प्रणाली की कार्य-कुशलता का स्तर ऊँचा उठाने के लिए और किसानों को मध्यस्थों के कपटपूर्ण व्यवहार से बचाने के लिए सहकारी विपणन पर जोर दिया गया है। सहकारी विपणन समितियां सदस्यों के थोड़े-थोड़े विपणन आधिक्य को एकत्रित कर मंडियों में थोक व्यापारियों के पास प्रतियोगिता करते हुए बेचती है। इस प्रकार किसानों को अपनी उपज का उचित मूल्य मिल जाता है।

➢ **कृषि विपणन व्यवस्था के दोष**

1) दोषपूर्ण संग्रहण व्यवस्था।
2) श्रेणी विभाजन का अभाव एवं दड़ा प्रणाली।
3) अल्पविकसित परिवहन व्यवस्था।
4) मध्यस्थों की बड़ी संख्या।
5) अनियमित मंडियों में कपटपूर्ण रीतियां।
6) मूल्य संबंधी सूचना का अभाव।
7) विपणन हेतु वित्त का अभाव।

➢ **कृषि विपणन व्यवस्था में सुधार की दृष्टि से सरकार द्वारा उपाय**

1) **नियंत्रित मंडियों की स्थापना** - नियंत्रित मंडी का संगठन संबंधित विधान के अनुसार होता है। इस प्रकार की मंडियों में व्यवस्था के लिए एक समिति का गठन होता है। ये समितियां राज्य सरकार के प्रतिनिधि, स्थानीय संस्थाओं के प्रतिनिधि, आढ़तिए, दलाल और किसानों से मिलकर बनी होती है, जो निम्नलिखित कार्य करती हैं -

a) विपणन व्यवस्था सुधारने की दृष्टि से खुली नीलामी पद्धति को लागू करती है।
b) कपड़े के नीचे गुप्तभाव निर्धारण पर रोक लगाती है।
c) प्रमाणिक बाटों के प्रयोग को अनिवार्य करती है।
d) किसान ओर व्यापारियों के मध्य मतभेदों को दूर करने का प्रयास करती है।

नियंत्रित मंडियों के लाभों को देखते हुए सरकार ने इनकी स्थापना को प्रोत्साहित किया है। अधिकत्तर राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों ने कृषि उत्पाद बाजारों के नियमन के लिए **कृषि उपज विपणन कमेटी अधिनियम** (APMC act.) पारित किए। इस समय देश में लगभग 7246 नियमित मंडियां हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

2) **श्रेणी विभाजन एवं मानकीकरण** – श्रेणी विभाजन के महत्व को स्वीकार करते हुए सरकार ने 1937 में कृषि उत्पादन (श्रेणी विभाजन एवं अंकन) कानून पास किया। इसके द्वारा विपणन तथा निरीक्षण निर्देशालय को यह अधिकार दिया कि वह स्वीकृत मानकों के अनुसार श्रेणी विभाजन तथा अंकन करने की अनुमति किसी भी संस्था को दे सकता है। निर्यात के लिए कृषि वस्तुओं का श्रेणी विभाजन होना अनिवार्य है। इन वस्तुओं के जहाज पर लादे जाने से पहले इनका निरीक्षण किया जाता है और इन पर एगमार्क (AGMARK) होना चाहिए। इस व्यवस्था से कृषि उपज की श्रेणी को ऊँचा उठा सकना संभव है।

3) **मानक बाट व नापतौल की अनिवार्यता** – सरकार ने 1939 में मानक बाट–तौल अधिनियम पास कर उसका प्रचार किया है तथा 1958 में नापतौल की मीट्रिक प्रणाली को अपनाया गया है। इस प्रकार किसानों के साथ कपट व्यवहार को कम करने का प्रयास किया जाता है।

4) **पर्याप्त सूचना की व्यवस्था** – कृषि वस्तुओं के बाजार में प्रतियोगिता का अभाव रहा है। इनके अनेक कारणों में एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि किसानों को विभिन्न बाजारों में प्रचलित मूल्यों तथा मांग एवं पूर्ति की दशाओं के विषय में प्राय: सूचना नहीं मिलती है। ऐसी स्थिति में आड़तिए उन्हें जो भी मूल्य देते हैं, उसे वे स्वीकार करने के लिए मजबूर होते हैं। सरकार ने रेडियो, टेलिविजन, आकाशवाणी, समाचार पत्रों के माध्यम से सूचना देने का प्रयास किया है। वर्तमान में देश की 1900 मंडियों में 300 कृषि वस्तुओं तथा लगभग 2000 किस्मों की थोक कीमतों संबंधी जानकारी कृषि बाजार सूचना नेटवर्क (Agricultural Marketing Information Network - AGMARKNET) के पोर्टल द्वारा दी जा रही है।

5) **संग्रह के लिए गोदाम का निर्माण** – अखिल भारतीय साख सर्वेक्षण समिति (1954) ने 3 स्तरों – राष्ट्रीय, राज्य एवं ग्रामीण स्तरों पर गोदामों के निर्माण की सिफारिश की है। सरकार ने इस आधार पर केन्द्रीय गोदाम निगम एवं राज्य गोदाम निगम की स्थापना की है। इसके अलावा भारतीय खाद्य निगम (FCI) की स्थापना भी की। इस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र में इस समय 3 प्रमुख ऐजेंसियां – भारतीय खाद्य निगम, केन्द्रीय गोदाम निगम तथा राज्य गोदाम निगम हैं, जो भण्डारण क्षमता को बढ़ाने में प्रयत्नशील है।

6) **सरकारी खरीद तथा समर्थन कीमतों का निर्धारण** – किसानों को अपनी उपज की सही कीमत मिले, इसके लिए सरकार न्यूनतम समर्थन कीमतों एवं वसूली कीमतों की घोषणा करती है। इन कीमतों का निर्धारण कृषि लागत एवं कीमत कमीशन (CACP) की सिफारिशों पर किया जाता है। भारतीय खाद्य निगम सरकार द्वारा घोषित कीमतों पर किसानों से फसल खरीदता है, फिर इन्हें PDS के माध्यम से उपभोक्ता को बेचा जाता है। इस समय 23 फसलों पर न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा की जाती है।

- **सहकारी विपणन (Co-Operative Marketing)**

निश्चय ही उपरोक्त प्रयत्नों से विपणन व्यवस्था में सुधार हुआ है, किन्तु सुधारों का ज्यादा लाभ बड़े किसानों को ही मिला है। साधानहीन छोटे किसानों को अपनी नकदी आवश्यकता पूरी करने के लिए उपज बेचकर भी उचित मूल्य नहीं मिलता। अखिल भारतीय साख सर्वेक्षण समिति की सिफारिश पर इस वर्ग के किसानों के हितों के लिए सहकारी विपणन समितियों की स्थापना की गई है।

➢ **सहकारी विपणन के लाभ**

1) छोटे किसानों की सौदाशक्ति में वृद्धि होती है। इससे उचित मूल्य मिलने की संभावना रहती है।

2) सहकारी समितियों की संग्रह सुविधा के कारण किसानों को अपनी उपज को फसल कटने के बाद जल्दी बेचना नहीं पड़ता।

3) किसानों को अपनी नकदी आवश्यकता के लिए विपणन समितियां थोड़ा–सा अग्रिम भी दे देती हैं।

4) छोटे किसानों को समिति की ओर से यातायात की व्यवस्था भी उपलब्ध हो जाती है।

5) सहकारी समिति उत्तम श्रेणी की वस्तुओं के उत्पादन को प्रोत्साहन दे सकती है।

6) दलालों, आढ़तियों, फूटकर व्यापारियों के कार्य सहकारी समिति स्वयं कर उपज को सीधा उपभोक्ता को बेच सकती है, जिससे किसानों को उचित मूल्य मिल सके।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

7) सहकारी समिति उपज बिक्री के साथ-साथ किसानों को उर्वरक, बीज तथा कृषि औजारों को उपलब्ध कराने का प्रयास करती है।

- **उत्पादक गतिविधियों का विविधिकरण (Diversification of Productive Activities)**

ग्रामीण विकास का यह एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, जिसमें क्षेत्र में रोजगार व आय का सृजन करना शामिल है। इसमें कृषि पर निर्भरता कम कर आजीविका सुनिश्चित की जाती है। इसके अन्तर्गत पशुपालन, मत्स्य पालन, बागवानी आदि शामिल हैं। ऑपरेशन फ्लड इस तरह के विविधिकरण का प्रमुख उदाहरण है। जहां आज भी कृषि केवल मानसून पर निर्भर है, वहां फसल पर अत्यधिक निर्भरता उचित नहीं है। ऐसी स्थिति में आय व रोजगार के लिए इस तरह के विविधिकरण ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक है। कृषि पर राष्ट्रीय कृषक आयोग के अध्यक्ष एम. एस. स्वामीनाथन भी इससे सहमति रखते हैं।

- **धारणीय विकास एवं जैविक कृषि (Sustainable Development & Organic Farming)**

जैविक कृषि खेती करने की वह पद्धति है, जो पर्यावरणीय संतुलन को पुन: स्थापित करके उसका संरक्षण और संवर्धन करती है। भारतीय परम्परागत् कृषि पूरी तरह से रासायनिक उर्वरकों और विषजन्य कीटनाशकों पर आधारित है। ये विषाक्त तत्व हमारी खाद्य पूर्ति व जलस्रोतों में मिल जाते हैं, जो पशुधन को हानि पहुंचाते हैं। साथ ही इनके कारण मृदा की उर्वरता क्षीण हो जाती है और हमारे प्राकृतिक पर्यावरण का विनाश होता है। अत: विकास की धारणीयता के लिए पर्यावरण मित्र प्रौद्योगिकीय (Eco-friendly Technologies) के प्रयास अनिवार्य हो गए हैं। जैविक कृषि की लोकप्रियता के लिए नई विधियों का प्रयोग करने में किसानों की इच्छाशक्ति और जागरूकता आवश्यक है। यह देखा गया है कि प्रारंभिक वर्षों में जैविक कृषि की उत्पादकता रासायनिक कृषि से कम रहती है। अत: बहुत बड़े स्तर पर छोटे व सीमांत किसानों के लिए इसे अपनाना कठिन होगा, फिर भी जैविक कृषि अपनाने के निम्नलिखित लाभ हैं -

1) जैविक कृषि महंगे आगतों (बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक) के स्थान पर स्थानीय रूप से बने जैविक आगतों पर निर्भर होती है। यह आगत सस्ते होते हैं, और इसी कारण इन पर निवेश में प्रतिफल अधिक मिलता है।

2) विश्व बाजारों में जैविक कृषि उत्पादों की मांग बढ़ती जा रही है। अत: इसके निर्यात से विदेशी मुद्रा अर्जित हो सकती है।

3) अनेक देशों में हुए अध्ययन से यह सिद्ध हुआ है कि रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों से उत्पादित फसलों एवं सब्जियों की तुलना में जैविक विधि से उत्पादित भोज्य पदार्थों में पोषक तत्व अधिक होते हैं। अत: जैविक कृषि हमें अधिक स्वास्थ्यकर भोजन उपलब्ध कराती है।

4) जैविक कृषि में पर्यावरण हितैषी तकनीक को अपनाना जाता है, जो मिट्टी व भूमि के लिए भी लाभदायक हैं।

5) जैविक कृषि मृदा की उर्वरता को बनाए रखती है। ज्ञातव्य है कि हरित क्रांति के प्रथम दौर के लाभान्वित क्षेत्र पंजाब एवं हरियाणा आज अति रासायनिक उर्वरकों के चलते गिरती उत्पादकता का सामना कर रहे हैं।

❐ निष्कर्ष (Conclusion)

इस प्रकार स्पष्ट है कि ग्रामीण कृषि एवं साख व्यवस्था कई समस्याओं से ग्रसित है। जब तक कोई चमत्कारिक परिवर्तन नहीं होगा, ग्रामीण क्षेत्र में पिछड़ापन बना रहेगा। आज ग्रामीण क्षेत्रों को अनेक प्रकार के उत्पादक कार्यों की ओर उन्मुख कर वहां एक नए उत्साह व स्फूर्ति का संचार करना आवश्यक हो गया है। ये कार्य हो सकते हैं : डेरी उद्योग, मुर्गी पालन, मत्स्य पालन, फल-सब्जी उत्पादन और ग्रामीण उत्पादन केन्द्रों और शहरी बाजारों के मध्य संपर्क सूत्रों की रचना में। इस प्रकार कृषि उत्पादन में लगे निवेश पर अधिक लाभ अर्जित करना संभव हो पाएगा। साथ ही आधारिक संरचना जैसे - साख एवं विपणन, कृषक-हित-नीतियां तथा कृषक समुदायों तथा राज्य कृषि विभागों के मध्य निरंतर संवाद और समीक्षा इस क्षेत्र की पूर्ण क्षमता को प्राप्त करने में सहायक है।

आज हम पर्यावरण और ग्रामीण विकास को पृथक-पृथक विषय मानकर व्यवहार नहीं कर सकते हैं। नई पर्यावरण-मित्र प्रोद्यौगिकी विकल्पों के आविष्कार या प्राप्ति की भी आवश्यकता है, ताकि विभिन्न परिस्थितियों का सामना होने पर भी हम धारणीय विकास की ओर अग्रसर हो पाए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ ग्रामीण विकास के प्रमुख कार्यक्रम

ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में निम्नलिखित प्रमुख कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है –

1) महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा)।

2) राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM)।

3) इंदिरा आवास योजना (IAI)।

4) प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (PMGSY)।

5) राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (NSAP)।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

कृषि
Agriculture

किसी देश के आर्थिक विकास में कृषि महत्वपूर्ण स्थान रखती है। भारत की अर्थव्यवस्था परम्परागत रूप से कृषि क्षेत्र में क्रियाशील रही है। कृषि खाद्यान्न तथा कच्चा माल प्रदान करने, रोजगार उपलब्ध कराने, निर्यात बढ़ाने आदि के रूप में महत्वपूर्ण होती है। भारतीय कृषि परम्परागत रूप से मानसून पर निर्भर है। फसल विविधता का एक बढ़ा हिस्सा भारत में पाया जाता है। सम्पूर्ण वर्ष में विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं। भारत में फसलों का उत्पादन एवं वितरण समान नहीं है। एक विशाल भौगोलिक भारत में विभिन्न फसल प्रतिरूप देखने को मिलते हैं। हम कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत विभिन्न मुद्दे, स्थिति, समस्याएं, चुनौतियां एवं सुझाव आदि पर विचार करेंगे।

❒ भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की महत्ता

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की महत्ता को निम्नलिखित शीर्षकों में समझ सकते हैं –

◆ राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा

स्वतंत्रता के बाद से ही कृषि राष्ट्रीय आय का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रही है। CSO द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों के अनुसार 1950-51 में कृषि का हिस्सा 55.4 प्रतिशत था, जो उदारीकरण की पूर्व संध्या पर 38 प्रतिशत हो गया। वर्ष 2013-14 में कृषि का GDP में योगदान 15 प्रतिशत है। हम विभिन्न वर्षों में कृषि के हिस्से में प्रवृत्तियों को इस प्रकार समझ सकते हैं –

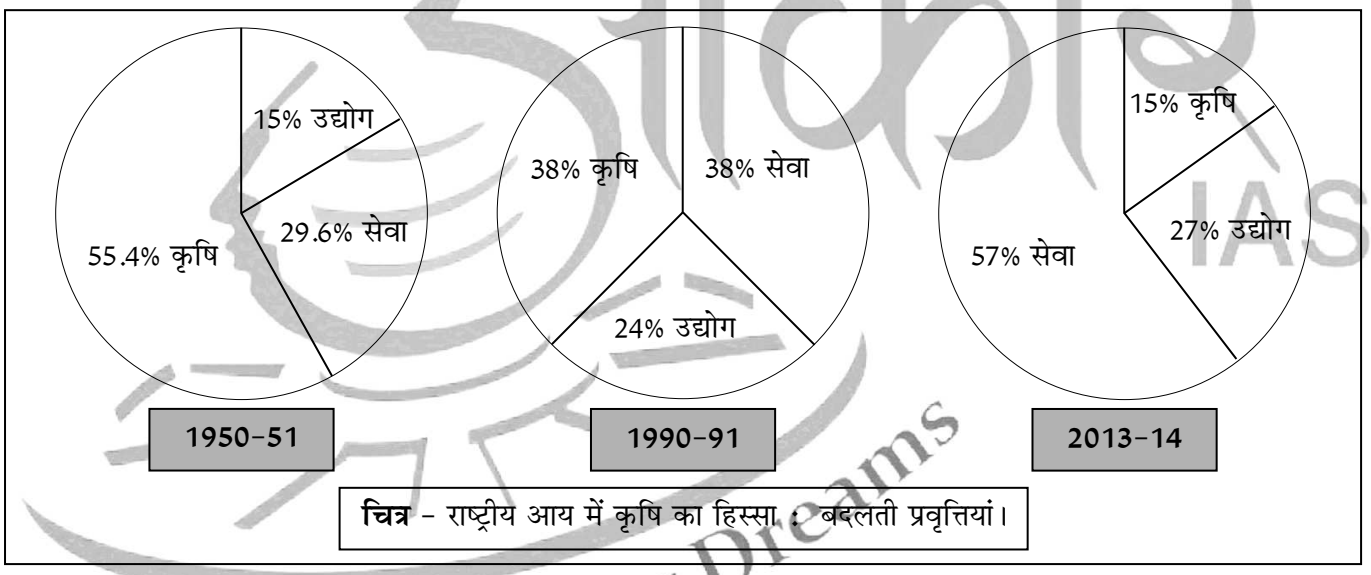

चित्र – राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा : बदलती प्रवृत्तियां।

◆ भारतीय कृषि रोजगार आपूर्तिकर्ता क्षेत्र के रूप में

जनगणना द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों से पता चलता है कि 1951 में कुल मुख्य श्रमिकों (Main Workers) का 70 प्रतिशत कृषि तथा सम्बद्ध क्रियाओं में कार्यरत था। 2001 में यह गिरकर 59 प्रतिशत हो गया। एक नकारात्मक पक्ष यह रहा कि 1950-51 से 2001 के दौरान कृषि श्रमिकों की संख्या 20 प्रतिशत से बढ़कर 27 प्रतिशत हो गई, किन्तु कृषकों की संख्या 50 प्रतिशत से कम होकर 32 प्रतिशत रह गई।

स्पष्ट है कि कृषि क्षेत्र में संलग्न आबादी और GDP में उसके योगदान पर गौर किया जाए, तो कहा जा सकता है कि अब तक कृषि क्षेत्र की संभावनाओं का दोहन नहीं हो सका है।

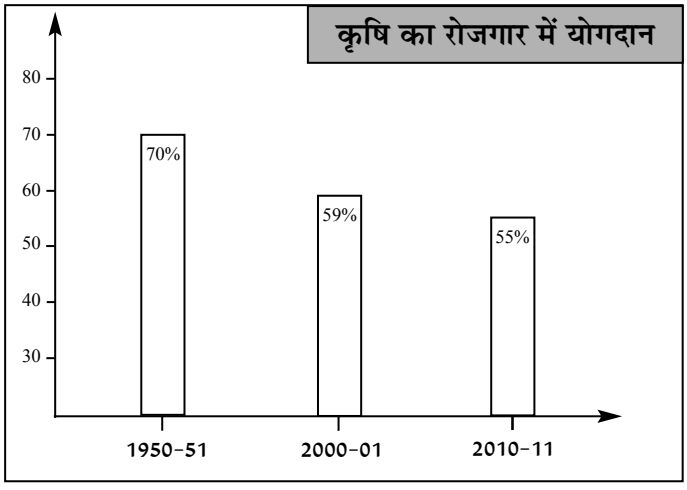

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- **कृषि क्षेत्र खाद्य आपूर्तिकर्ता के रूप में**

कृषि क्षेत्र समस्त राष्ट्र को खाद्यान्न की उपलब्धता सुनिश्चित करता है। हरित क्रांति के बाद के वर्षों में भारत खाद्यान्न में आत्म-निर्भर हो गया। इस प्रकार कृषि क्षेत्र ने भारत की विदेशों पर निर्भरता को कम किया एवं बहुमूल्य विदेशी मुद्रा को बचाया। 1950-51 से 2011-12 तक जनसंख्या वृद्धि 36 करोड़ से 121 करोड़ हो गई, जो 3 गुना थी। समान अवधि में खाद्यान्न उत्पादन 50 मिलियन टन से 256 मिलियन टन हो गया, जो 5 गुना था। दूध 17 मिलियन टन से 127 मिलियन टन हो गया, जो 7 गुना है। इस प्रकार कृषि ने खाद्यान्न की मांग को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

- **कृषि क्षेत्र उद्योगों को कच्चे माल के प्रदाता के रूप में**

कच्चे माल पर आधारित उद्योग, जिनका औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (IIP) में भाग 21.2 प्रतिशत है, कृषि द्वारा उपलब्ध कराया जाता है। रंगराजन के अनुसार कृषि में 1 प्रतिशत परिवर्तन आने पर औद्योगिक उत्पादन 0.5 प्रतिशत परिवर्तन आता है। कृषिगत पदार्थों का फूड प्रोसेसिंग उपयोग में भी महत्वपूर्ण योगदान है। अनुमान है कि भारतीय फूड प्रोसेसिंग उद्योग का आकार भविष्य में 20,000 करोड़ रुपए का होगा। सूती तथा पटसन उद्योग, चीनी, वनस्पति तथा बागान उद्योग ये सभी कृषि पर सीधे निर्भर हे, कुछ अन्य उद्योग, जैसे - हाथकरघा, बुनाई, तेल निकालना, चावल कुटना आदि सूक्ष्म एवं मझौले (MSME) उद्योग कृषि से अपना कच्चा माल प्राप्त करते हैं। यह बात महत्वपूर्ण है, क्योंकि पूरे विनिर्माण उद्योग उत्पादन का 50 प्रतिशत MSME द्वारा प्रदान किया जाता है।

- **कृषि, गरीबी उन्मूलन तथा समावेशी विकास**

चूंकि भारत की लगभग 68 प्रतिशत आबादी गांवों में निवास करती है एवं 55 प्रतिशत श्रम शक्ति कृषि पर निर्भर करती है, अत: कृषि के विकास के बिना गरीबी हटाओं एवं समावेशी विकास के नारे अधूरे हैं। यहां कृषि अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाती है। पंजाब व हरियाणा के अध्ययन बताते हैं कि वहां राज्य GDP में कृषि का योगदान 45 प्रतिशत से ज्यादा है और गरीबी एवं असमानता दोनों कम है। Trickle Down Theory तभी सफल होगी, जब कृषि वृद्धि करेगी। चीन का दृष्टान्त यहां पर उल्लेखनीय है कि उसने 1978-84 में अपने सुधारों के प्रथम काल में पहले कृषि को बढ़ाया। समान अवधि में चीन में गरीबी 37 प्रतिशत से 17 प्रतिशत तक पहुंच गई।

- **कृषि क्षेत्र का निर्यात में योगदान**

कृषिगत वस्तुएं एक महत्वपूर्ण निर्यातित मद है, जिसके द्वारा हम बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का अर्जन करते हैं। आर्थिक समीक्षा 2013-14 के अनुसार कृषिगत वस्तुएं इंजीनियरिंग, रसायन के बाद तीसरी सबसे बड़ी निर्यातित मद है। विगत वर्षों में कृषि के निर्यात योगदान को हम इस चित्र से समझ सकते हैं।

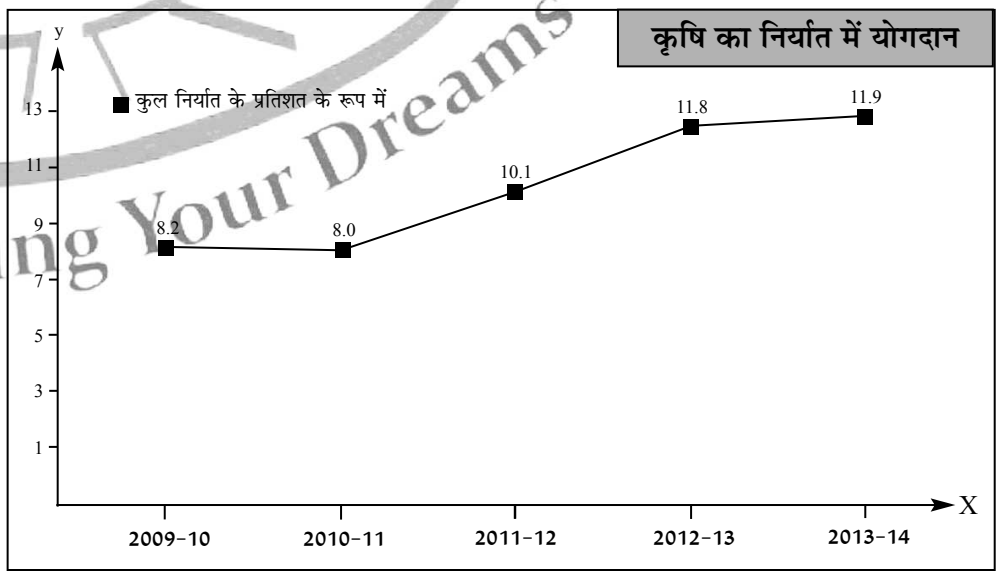

- **कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ है**

भारत गांवों का देश है, जहां जीवन निर्वाह का मुख्य साधन कृषि है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में होने वाली समस्त आर्थिक क्रियाएं प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर ही निर्भर करती है। कृषि के द्वारा जनित आय ग्रामीण अर्थव्यवस्था में मांग पैदा करती है, जिससे अन्य वस्तुओं एवं सेवाओं के व्यापार में वृद्धि होती है। चूंकि कृषिगत उत्पादों को गांवों से बाहर लाने के लिए विशाल परिवहन नेटवर्क की आवश्यकता होती है, अत: अप्रत्यक्ष रूप से कृषि परिवहन व्यवस्था को बढ़ाती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ योजनाकाल के दौरान भारतीय कृषि नीति एवं प्रवृत्ति : एक समीक्षा

हम सम्पूर्ण योजनाकाल को निम्नलिखित 5 चरणों में बांट सकते हैं –

1) 1951–1965 हरित क्रांति के पूर्व का काल।

2) 1966–1980 हरित क्रांति का आगमन एवं प्रथम चरण।

3) 1981–1990 हरित क्रांति का प्रसार एवं द्वितीय चरण।

4) 1991–2004 उदारीकरण की संध्या से उसका प्रसार।

5) 2004 के पश्चात् लोककल्याणकारी योजनाएं एवं कृषि

प्रथम चरण : 1951–1965 की समयावधि में भारी एवं मूलभूत उद्योगों की स्थापना पर जोर दिया गया। साथ ही यह समय संरक्षणवादी नीतियों का दौर था। PL-480 के तहत आयात उस वक्त भारत की खाद्य निर्भरता को दर्शाते हैं। हालांकि कृषि ढांचे, काश्तकारी सुधार, जमींदारी उन्मूलन, सिंचाई, विद्युत प्रदाय आदि के प्रयास किए गए, किन्तु कृषि क्षेत्र की वृद्धि का स्रोत उत्पादकता न होकर कृषि क्षेत्र में विस्तार रहा।

द्वितीय चरण : 1966–1980 की समयावधि में PL-480 के तहत् आपूर्ति व्यवधान देखने को मिला। इस आपूर्ति व्यवधान ने भारत को आत्मनिर्भरता के लिए सोचने पर विवश कर दिया। परिणामस्वरूप जीव–रसायन तकनीक (Bio-chemical Technology) का आगमन हुआ, जिसे संक्षिप्त में हरित क्रांति कहा गया। कई बड़े संस्थान भारतीय खाद्य निगम (FCI), कृषि मूल्य एवं लागत आयोग (CACP) आदि इसी काल की परिणति है। सिंचाई, बिजली, उर्वरक, ऋण आदि में सब्सिडी दी गई एवं न्यूनतम समर्थन मूल्य का प्रादुर्भाव हुआ। हरित क्रांति के इस प्रथम चरण में नीति उच्च उत्पादकता वाले क्षेत्रों में ध्यान देने की थी, ताकि तीव्र उत्पादन प्राप्त किया जा सके। यह उच्च उत्पादकता वाले क्षेत्र पंजाब, हरियाणा एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश थे। शुरुआती चरण में गेहूं के उत्पादन में शानदार वृद्धि दर्ज की गई, किन्तु अभी चावल का उत्पादन मर्यादित (Moderate) ही था। इस प्रकार भारत ने खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता को प्राप्त कर लिया। तमाम वाद–विवादों और आलोचना के बावजूद हरित क्रांति की सफलता यह थी कि इसने प्राकृतिक एवं मानव निर्मित उत्पन्न होने वाले अकालों और सूखे से देश को निजात दिला दी।

तृतीय चरण : 1981–1991 का समय हरित क्रांति के विस्तार का काल था। वास्तव में हरित क्रांति के प्रथम चरण की यह कहकर आलोचना की गई थी कि इसने राज्यवार असमानता को बढ़ावा दिया है एवं इसने दलहन, तिलहन से उनका स्थान छिन लिया है एवं यह केवल खाद्यान्नों (मुख्यरूप से गेहूं व चावल) तक सीमित रही है। अब समय था कि हरित क्रांति को विस्तार दिया जाए। अतः इसे उत्तर–पश्चिम भारत के अलावा भी सम्पूर्ण भारत में फैलाया गया। साथ ही दलहन व तिलहन के लिए वर्ष 1986 में एक प्रौद्योगिकी मिशन की शुरुआत की गई। परिणामस्वरूप तिलहन के उत्पादन में इस काल में बढ़ोत्तरी दर्ज की गई।

चतुर्थ चरण : 1991–2004 का समय उदारीकरण का दौर था, जिसमें 1994 के खाद्य तेल आयात की नीति महत्वपूर्ण है। 1992–1997 के दौरान कृषि विरोधी पक्ष–पात में कमी आई। अब उद्योगों को संरक्षण समाप्त कर देने से कृषि की ट्रम्स ऑफ ट्रेड भी उद्योगों के समान हो गई। उदारीकरण के कारण बढ़ी हुई आय ने कुछ कृषि वस्तुओं, जैसे – मांस, मछली, अण्डा एवं दुग्ध उत्पादन के उपभोग को बढ़ावा दिया। इन सबके सम्मिलित प्रभाव से कृषि में भी निवेश संभव हो सका एवं कृषि को लाभ का व्यापार बनाने में मदद मिली। 1997–2004 के काल में कृषि में पूंजी निवेश में कमी आई। दुर्भाग्य से यह वह अवधि थी, जिसमें कृषि वृद्धि दर, हरित क्रांति के पूर्व काल में पहुंच गई। इस काल में कृषि वृद्धि दर केवल 2.2 प्रतिशत थी, जहां इसी अवधि में गैर–कृषि GDP की वृद्धि दर 7 प्रतिशत के आसपास थी।

पंचम चरण : 2005–2013 की समयावधि में पूर्व चरण में कृषि क्षेत्र में आ रही कमी को रोकने, खेती को लाभदायक बनाने, किसानों की आय में वृद्धि करने, अनाज का उत्पादन बढ़ाने एवं आबादी के व्यापक वर्गों तक भोजन की पहुंच कायम करने के लिए अनेक लाभकारी योजनाओं की शुरुआत की गई। कृषि हेतु द्वितीय राष्ट्रीय कृषक आयोग (स्वामीनाथन आयोग) का गठन किया गया। एक नई राष्ट्रीय कृषि विकास योजना लागू की गई। इस योजना के 2 उद्देश्य निर्धारित किए गए – प्रथम, खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

करते हुए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना। द्वितीय, राज्यों को खेती में निवेश के लिए प्रोत्साहित करना। द्वितीय उद्देश्य की पूर्ति के लिए जिला कृषि योजनाएं चलाई गई। ज्ञातव्य हो कि दूसरा उद्देश्य कभी पूरा नहीं हो पाया। स्वामीनाथन आयोग की सिफारिश पर वर्ष 2007 में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (NFSM) शुरू किया गया। इस मिशन को भी प्रारंभ में, हरित क्रांति की तरह कुछ सीमित जिलों में शुरू किया गया। चावल, गेहूं एवं दालों के उत्पादन का क्रमशः 1 करोड़ टन, 80 लाख टन एवं 20 लाख टन बढ़ाने का लक्ष्य रखा गया। अब तक हुए समस्त अध्ययनों के परिणाम बताते हैं कि यह मिशन प्रत्येक फसल लक्ष्य के लिए सफल रहा है। उल्लेखनीय है कि इसी चरण में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम (NFSA) का आगमन हुआ, जिसमें चावल/गेहूं/बाजरा को क्रमशः 3/2/1 रुपए में उपलब्ध कराने का प्रावधान है। इस अधिनियम में 75 प्रतिशत ग्रामीण एवं 50 प्रतिशत शहरी आबादी को कवर करने का लक्ष्य रखा गया है।

❐ भारत में कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता के निम्न स्तर के कारण

भारत में कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता के निम्न स्तर के निम्नलिखित कारण हैं –

- **सामान्य कारण**

1) **कृषि में लोगों की बहुत बड़ी संख्या का कार्यरत होना** – 1901 से कृषि पर निर्भर रहने वालों का अनुपात ज्यों का त्यों हैं। इस प्रकार कृषि पर निर्भर अत्यधिक जनसंख्या के परिणामस्वरूप खेत विकसित होकर छोटे-छोटे टुकड़ों में बंट गए, प्रति व्यक्ति भूमि की मात्रा कम हो गई और कृषि में प्रछन्न बेरोजगारी प्रकट हुई। भूमि पर जनसंख्या के निरन्तर दबाव के कारण प्रति किसान कृषि भूमि की मात्रा (Cultivated Area per Cultivatior) 1901 से 2001 तक कुल क्षेत्रफल में वृद्धि के बावजूद 0.43 हेक्टेयर से कम होकर 0.20 हेक्टेयर हो गई। स्पष्ट है कि जब तक भूमि पर जनसंख्या का यह दबाव कायम रहेगा, कृषि के विकास में अधिकतम सफलता प्राप्त होने की संभावना कम ही रहेगी।

2) **अपर्याप्त कृषि-भिन्न सेवाएं** – भारतीय कृषि को वित्त और विपणन (Finance & Marketing) की व्यवस्था आदि की अपर्याप्तता के कारण परेशानी उठानी पड़ी है। या तो ये सुविधाएं सर्वथा विद्यमान ही नहीं है या बहुत महंगी है। उदाहरणार्थ – कुछ समय पहले तक कृषकों को रुपया उधार लेने के लिए गांव के साहूकारों पर निर्भर रहना पड़ता था, जो अत्यधिक ब्याज पर उधार देते थे। इस प्रकार भारत में कृषि के पिछड़ेपन का महत्वपूर्ण कारण कृषि-भिन्न सेवाओं की अपर्याप्तता है। परिवहन का अभाव, मध्यस्थों को उपस्थिति, कृषि उपज का उचित मूल्य न मिल पाना, भण्डारण का अभाव आदि ने कृषि विपणन को भी असफल बनाए रखा है।

- **संस्थात्मक कारण**

1) **जोत का आकार** – भारत में जोत का औसत आकार बहुत छोटा है, अर्थात् 5 एकड़ से भी कम। ये जोतें न केवल छोटी हैं, बल्कि छोटे-छोटे टुकड़ों में बंटी हुई हैं। खेतों के छोटा होने के कारण वैज्ञानिक विधि से खेती करना संभव नहीं है। परिणामतः समय, श्रम और पशु शक्ति का भारी अपव्यय होता है व सिंचाई सुविधाओं के उचित उपयोग में कठिनाई होती है। किसानों में झगड़े और मुकदमेबाजी की दुष्प्रवृत्तियां पैदा होती हैं तथा बाड़ लगाने की कठिनाई के कारण फसल को क्षति पहुंचती है।

2) **भू-पट्टेदारी का ढांचा** – कृषि की कम उत्पादकता का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण उचित प्रोत्साहन का अभाव रहा है। भारत में प्रचलित भू-पट्टेदारी के कारण जहां एक ओर पट्टेदार स्वयं की भूमि नहीं होने के कारण भूमि से लगाव नहीं रखता है, अतः वह कृषि विकास के लिए प्रोत्साहित नहीं होता है। वहीं दूसरी ओर भूमि का वास्तविक मालिक प्राप्त लगान का उपयोग उपभोग में करता है एवं वह भी कृषि में निवेश के लिए प्रोत्साहित नहीं होता है।

- **तकनालाजीय कारण**

1) **उत्पादन की पिछड़ी तकनीक** – भारतीय कृषक उत्पादन की पुरानी और अदक्ष विधियों तथा तकनीकों का प्रयोग करता चला आ रहा है। भारत में खेती के काम में आने-आने उपकरणों में इन उन्नत उपकरणों (Improved Implements) की मात्रा अभी बहुत कम है। उत्पादन में वृद्धि केवल तभी हो सकती है, जब उन्नत तकनीक और पर्याप्त खाद प्रयोग में लाई

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

जाए। तात्पर्य यह है कि भारत में कृषि की निम्न उत्पादकता का एक महत्वपूर्ण कारण उत्पादन की घटिया तकनीक का प्रयोग करना है। जब तक किसानों को उन्नत उपकरणों के उपयोग की, उन्नत बीज बोने की, उपयुक्त और पर्याप्त खाद तथा उर्वरक के प्रयोग की ओर विनाशकारी कीड़ों तथा रोगों को प्रभावशाली ढंग से मिटाने को प्रेरणा नहीं दी जाती, तब तक उत्पादकता बढ़ाने की आशा नहीं की जा सकती है।

2) **अपर्याप्त सिंचाई सुविधाएं** - योजनाकाल में बड़ी और छोटी सिंचाई योजनाओं के प्रबल विकास के बावजूद कुल खेती योग्य भूमि के केवल 33 प्रतिशत में ही सिंचाई होती है। इससे स्पष्ट है कि देश में सिंचाई की सुविधाओं को व्यापक क्षेत्र में पहुंचाने की आवश्यकता है, ताकि मानसून से निर्भरता कम की जा सके।

❐ कृषि उत्पादकता बढ़ाने के उपाय

इस विवेचन में निम्न उत्पादकता के जिन कारणों का ऊपर उल्लेख किया गया है, उन्हें दूर करने के उपायों का संकेत भी मिलता है। कृषि उत्पादकता बढ़ाने का प्रयास करते हुए उक्त कारणों को दृष्टि में रखना उचित होगा। एक ओर इस बात का प्रयास किया जा रहा है कि ग्रामीण जनसंख्या के लिए वैकल्पिक रोजगार उपलब्ध कराए जाएं और व्यवसायिक ढांचे में इस प्रकार परिवर्तन किया जाए कि कृषि से निर्भरता कम हो। जहां तक तकनीकी कारणों का प्रश्न है, किसानों को उन्नत उपकरणों, बीजों, रासायनिक खादों आदि के लाभों से परिचित कराने तथा उनका उपयोग करने की दिशा में उत्साहवर्द्धक कार्य किया जा रहा है। सिंचाई सुविधाएं तेजी से उपलब्ध कराई जा रही है। दोहरी फसल, अधिक श्रेष्ठ फसल चक्र, पौधों को लगने वाले कीड़ों और बीमारियों को मिटाने आदि की ओर भी ध्यान दिया जा रहा है। अत: आशा है कि समय आने पर कृषि की भू-उत्पादकता और श्रम-उत्पादकता में वृद्धि हो जाएगी। जितनी जल्दी ऐसा हो सकेगा, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का उतना ही अधिक हित हो सकेगा।

इसके अतिरिक्त सार्वजनिक व्यय पर्याप्त तो है, किन्तु व्यय की संरचना अनुपादक है, क्योंकि व्यय का 80 प्रतिशत हिस्सा तो सब्सिडी में चला जाता है। उदाहरणार्थ - उर्वरक, सिंचाई की सतही लागत कम वसूलना, ऋण सब्सिडी व कर्ज माफी आदि। कई ऐसे क्षेत्र हैं, जहां सब्सिडी की तुलना में निवेश पर सीमांत लाभ अधिक होता है। अत: सब्सिडी की बजाय इस पक्ष को मजबूत किया जाए, जैसे - R&D, तकनीकी विकास, तकनीक हस्तान्तरण, महाविद्यालयों और शोध संस्थाओं की स्थापना व विकास पर निवेश, गैर-उर्वरक भूमि को उपजाऊ बनाने में निवेश, किसानों को कौशल प्रोत्साहन एवं तकनीकी शिक्षा का हस्तान्तरण में निवेश, फसलों का कच्चा माल के रूप में प्रयोग किए जाने वाले बाजारों के निर्माण में निवेश, पर्यावरण क्षति को रोकने के लिए एक बड़े भाग पर जैविक खेती के विकास पर निवेश करना चाहिए।

❐ कृषि आगत एवं हरित क्रांति

वियतनाम युद्ध के नाम पर निक्सन द्वारा PL-480 कार्यक्रम में कटौती, 2 लगातार युद्धों एवं ऊँची महंगाई दर आदि कुछ कारणों ने भारत को कृषि एवं खाद्य सुधार के मोर्चे पर सोचने के लिए मजबूर कर दिया। परिणामस्वरूप एक नई कृषि नीति बीज-खाद-उर्वरक-तकनीकी ने जन्म लिया, जिसे हरित क्रांति कहा गया। हरित क्रांति मुख्यरूप से 2 नवप्रवर्तनों पर आधारित थी - जैविक नवप्रवर्तन एवं भौतिक नवप्रवर्तन।

जैविक नवप्रवर्तन में जहां नए किस्म के बीज, उर्वरक, कीटनाशक, अन्य दवाइयों में पुराने खाद व बीजों का स्थान लिया, वहीं भौतिक नवप्रवर्तन ने पंजे, प्लाऊ, कल्टिवेटर, नए यंत्रों आदि के साथ आदिकालीन हल एवं अन्य यंत्रों का स्थान लिया। 60 के दशक के शुरुआती पहर में 7 उच्च उत्पादकता वाले जिलों में शुरू की गई। इस पायलट प्रोजेक्ट को धीरे-धीरे देश के दूसरे हिस्सों में भी विस्तार दिया गया। सिंचाई की कई परियोजनाओं ने भी जोर पकड़ा व काश्त के एक बड़े क्षेत्रफल को सिंचाई अधीन लाया गया। यह क्रांति उर्वरकों, कीटनाशकों एवं नए किस्म के अधिक उत्पादक बीजों के सघन उपयोग पर केन्द्रित थी, जिसका उद्देश्य कृषि उत्पादन में ज्यादा प्रतिफल (Increasing Return) हासिल करना था।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **हरित क्रांति के पक्ष में तर्क**

1) इतने बड़े लोकतंत्र को आयात के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता, बहुमूल्य विदेशी मुद्रा भण्डार के अपव्यय को रोकने के लिए इस तरह की क्रांति आवश्यक है।

2) खाद्य सुरक्षा में आत्मनिर्भरता, उर्वरकों, कीटनाशकों, आदि के सघन प्रयोग से ही प्राप्त की जा सकती है।

- **हरित क्रांति की उपलब्धता**

1) **खाद्यान्नों का बढ़ा हुआ उत्पादन** - गेहूं का स्तर 1950-51 के 208 लाख टन से बढ़कर 2005-2006 तक 808 लाख टन पहुंच गया, वहीं चावल का उत्पादन 330 लाख टन से बढ़कर 890 लाख टन पहुंच गया। इस प्रकार मोटे अनाजों को छोड़कर खाद्यान्नों का उत्पादन समान अवधि में 538 लाख टन से बढ़कर 1698 लाख टन पहुंच गया। साथ ही उत्पादकता एवं कृषि अधीन क्षेत्रफल में भी उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई।

2) **सिंचाई अधीन क्षेत्रफल में वृद्धि** - 1950-51 में कुल 226 लाख हेक्टेयर भूमि सिंचाई अधीन थी, जो 2006-2007 तक बढ़कर 850 लाख हेक्टेयर हो गई। इस प्रकार 2.35 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि हुई।

3) फसलीकरण एवं फसल विविधिकरण के कारण रोजगार बढ़ा एवं श्रम का विस्थापन सम्भव हुआ।

4) हरित क्रांति के पूर्व काल तक कृषि एवं उद्योगों का केवल अग्रगामी संबंध (Forword Linkage) था, जिसमें कृषि द्वारा प्राप्त कच्चे माल का उद्योगों में प्रयोग होता था। किन्तु हरित क्रांति ने मशीनीकरण एवं यंत्रों के सघन उपयोग से उद्योगों को भी इनके निर्माण का अवसर प्रदान किया व पश्चगामी संबंध (Backward Linkage) स्थापित हो पाया। इससे कई नए रोजगार सृजित हुए।

5) **बफर स्टाक की धारणा ने जन्म लिया व निर्यात के लिए कृषि उत्पाद उपलब्ध हुए** - यह हरित क्रांति का ही परिणाम था कि खाद्यान्न उत्पादन में न केवल हमने आत्मसुरक्षा प्राप्त की, बल्कि अतिरिक्त उत्पादन ने भी अपना स्थान ग्रहण किया व बफर स्टाक बनाने में भी सहायता मिली, साथ ही निर्यात बढ़ा। आज कुल निर्यातों में कृषि उत्पादन का योगदान 10 प्रतिशत है।

- **हरित क्रांति और कुछ पीछे छूट गए क्षेत्र**

1) **दालों का उत्पादन** - हरित क्रांति की सफलता केवल कुछ खाद्यान्नों तक ही सीमित रह गई। 1950-51 में दालों का उत्पादन 110 लाख टन था, 50 वर्षों की लम्बी अवधि में यह बढ़कर केवल 140 लाख टन के स्तर पर ही पहुंच सका। कुल 217 लाख हेक्टेयर दाल अधीन क्षेत्रफल में से केवल 27 लाख हेक्टेयर को ही सिंचाई अधीन लाया गया।

2) **तिलहन आज भी आयात पर निर्भर** - हरित क्रांति के ऊपर करोड़ों रुपए खर्च करने के बाद भी तिहलन के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि नहीं हो पाई। तिलहन आज भी आयात पर निर्भर है, जिसके लिए हमें बहुमूल्य विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती है।

3) **हरित क्रांति एवं पोषनीयता** - अत्यधिक कीटनाशकों व उर्वरकों ने न केवल भूमि की उत्पादन क्षमता को घटाया, बल्कि लाखों किसान परिवारों के स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाला। पंजाब, हरियाणा आदि जगह पर आज भूमि की उर्वरा शक्ति पर प्रश्न-चिह्न लगने लगा है।

4) **हरित क्रांति व सामाजिक लाभ** - चूंकि हरित क्रांति में कृषि सुधार के केवल एक पक्ष तकनीकी परिवर्तन को समर्थन दिया, सभी संस्थागत सुधारों की अवहेलना की गई। संक्षेप में हरित क्रांति बिना भूमि सुधार के आई। हरित क्रांति के तकनीकी तत्वों यंत्रीकरण, मशीनीकरण, उर्वरकों आदि में बड़े निवेश की आवश्यकता थी, जिसे सिर्फ बड़े किसान ही पूरा कर पाए। छोटे एवं सीमांत किसान इससे पिछड़ गए और जिन्होंने ऋण लेकर इस निवेश सांचे में ढ़लने का प्रयास किया। वे ऋणग्रस्तता के शिकार हो गए। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण ने 59वें दौर में 55 प्रतिशत कृषकों को ऋणग्रस्तता से ग्रस्त पाया। अतः हरित क्रांति का लाभ बड़े किसानों को मिला एवं सीमांत किसानों की स्थिति यथावत बनी रही, जिससे विषमता में वृद्धि हुई।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **भारतीय कृषि के समक्ष चुनौतियां एवं रास्ते**

हरित क्रांति के बाद खाद्यान्न उत्पादन में हुई वृद्धि उल्लेखनीय है, किन्तु कुल कारक उत्पादकता में गिरावट, प्राकृतिक ह्रास घास, रूकी हुई कृषि आय आदि कुछ चिंता का विषय है। कृषि पर व्यापक उदारीकरण का प्रभाव एवं विश्व स्तर पर जलवायु परिवर्तन चुनौतियां है।

- **कुछ अन्य चुनौतियां**

1) निवेश वितरण व स्थानीय कृषि प्रबंधन प्रणाली की दुर्बलता।
2) वैश्वीकरण के प्रभाव सहित कीमतें और व्यापार नीतियां।
3) जलवायु परिवर्तन व वैश्विक तापन का कृषि क्षेत्र में बढ़ता खतरा।
4) छोटी जोत में बढ़ोत्तरी तथा आर्थिक जोत में गिरावट।
5) गैर-कृषि क्षेत्र में सीमित रोजगार के अवसर।
6) गरीबी उन्मूलन, समग्र प्राकृतिक संसाधन व पर्यावरण सुरक्षा सुनिश्चित करना।
7) लवणता के माध्यम से जमीन में गिरावट, जल जमाव के दुष्यपरिणाम, ईंधन की कीमतें, खाद्य कीमतें, वित्तीय संकट, तत्काल नीतिगत हस्तक्षेप की मांग करते हैं।

- **कृषि विकास के लिए आगे का रास्ता**

1) हरित क्रांति के छूटे हुए क्षेत्रों तथा वर्षा आधारित क्षेत्रों में ध्यान दिया जाए।
2) किसानों को बाजार से जोड़ना, कृषि उत्पादन और विपणन प्रणाली, मूल्य श्रृंखला और विपणन क्षमता के प्रभावी क्रार्यक्रम चलाए जाए।
3) भूमि या गैर-हरित क्रांति क्षेत्रों विशेष रूप से पूर्वी और पूर्वोत्तर क्षेत्र, जहां कृषि विकास की अत्यधिक क्षमता है, उन क्षेत्रों में सार्वजनिक व निजी संस्थाओं द्वारा पूंजी निवेश किया जाए।
4) आगत आपूर्ति, ऋण, फसल व पशुधन बीमा आदि के लिए ज्ञान प्रणाली और संस्थागत तंत्र का विकास किया जाए।
5) सिंचाई का दक्षता के साथ प्रयोग किया जाए।
6) कृषि का विविधीकरण कर रोजगार के अन्य अवसर तलाशे जाए।

- **क्या आवश्यकता है दूसरी हरित क्रांति की?**

निवेश की किल्लत, जलवायु परिवर्तन की मार, उपज की अनिश्चितता और बिजली की आंख मिचौली से जुझता किसान कृषि को छोड़कर दूसरा विकल्प ढूंढने को मजबूर है। 2600 लाख टन मिट्टी का अपरदन के कारण क्षय, बढ़ता मरूस्थलीकरण, तमाम प्रयासों के बावजूद केवल 40 प्रतिशत भूमि का ही सिंचित होना, मृदा क्षरण के कारण प्रतिवर्ष 25 लाख टन, 33 लाख टन, 25 लाख टन क्रमश: Nitrogen, Phaspnet एवं Potash की क्षति व बढ़ती अनुर्वरकता कुछ नए सुधारों की मांग की तरफ इशारा कर रही है।

2020-21 तक 28.1 करोड़ टन अनाज की जरूरतों का अनुमान, अभी से कुछ सुधार करने की मांग कर रहा है। प्रथम हरित क्रांति की सीमित खाद्यान्नों तक सीमित सफलता व दालों के बढ़ते आयात ने द्वितीय हरित क्रांति की आवश्यकता पर बल दिया है। विशेषकर दलहन व तिहलन के क्षेत्रों में।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों (MNC) पर लाबिंग का आरोप लगाया जा रहा है कि अपने बीजों व उर्वरकों के लिए वह हरित क्रांति के नाम पर बाजार तैयार कर रही है। अगर ऐसा है तो बौद्धिक सम्पदा अधिकार नीति (IPR Policy) लाकर बीजों के जैनरिक विवादों व स्वामित्व आदि में सुधार कर किसानों के हितों की रक्षा की जा सकती है, किन्तु और इंतजार नहीं किया जा सकता है। नेहरूजी के शब्दों में 'सब इंतजार कर सकते हैं, किन्तु कृषि नहीं।'

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **कृषि मूल्य नीति व खाद्य प्रबंधन**

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषकों को अपनी उपज का उचित मूल्य न मिल पाना बहुत बड़ी समस्या है। इस समस्या के समाधान हेतु 1965 में कृषि मूल्य आयोग की स्थापना की गई, जिसे 1985 में कृषि मूल्य एवं लागत आयोग (CACP) में परिवर्तित कर दिया गया। इसके अन्तर्गत न्यूनतम समर्थन मूल्य नीति को अपनाया गया। कृषि वस्तुओं के संबंध में न्यूनतम समर्थन मूल्य नीति के दोहरे उद्देश्य हैं – प्रथम, किसानों को उनके उत्पादनों का उचित एवं उत्साहवर्धक मूल्य मिल सके, जिससे कृषि क्षेत्र में निवेश तथा उत्पादन प्रोत्साहित हो। द्वितीय, उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर कृषि वस्तुओं की पूर्ति कर सके। कृषि वस्तुओं का न्यूनतम आश्वस्त मूल्य किसान के लिए अनिश्चितताओं से भरी कृषि प्रक्रिया में उत्पादन करने के लिए प्रेरक सिद्ध होता है। वर्तमान में आयोग 24 महत्वपूर्ण फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा करता है।

- **न्यूनतम समर्थन मूल्य (Minimum Support)** – यह वह मूल्य है, जिस पर सरकार किसानों द्वारा बेची जाने वाली अनाज की पूरी मात्रा क्रय करने के लिए तैयार हो। जब बाजार में अनाजों का मूल्य गिर रहा हो, तो सरकार किसानों से समर्थन मूल्य पर खरीदकर उनके हित की रक्षा कर सकती है। न्यूनतम मूल्य की घोषणा सरकार फसल बोने से पहले करती है। यह एक प्रकार का बीमा है, जिससे सरकार किसानों को उस स्थिति में संरक्षित करने के लिए देती है, जब अच्छी फसल व अधिक पूर्ति के बाद मूल्य में गिरावट हो।
- **वसूली मूल्य (Procurement Price)** – यह वह मूल्य है, जिसकी घोषणा सरकार फसल कटाई के पश्चात् करती है तथा इसी मूल्य पर अनाज की खरीद करती है। इस मूल्य को निर्धारित करते समय यह ध्यान दिया जाता है कि एक ओर कृषकों को अगले वर्ष वस्तु के उत्पादन की प्रेरणा मिले, दूसरी ओर कमजोर वर्ग को भी उचित मूल्य पर कृषि वस्तुएं प्राप्त हो सके। वसूली मूल्य न्यूनतम समर्थन मूल्य के बराबर या उससे अधिक हो सकता है, किन्तु कम नहीं।
- **निकासी मूल्य (Issue Price)** – यह वह मूल्य है, जिस पर सरकार केन्द्रीय भण्डारों से सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत उचित मूल्य की दुकानों को अनाज निर्गमित करती है। इस प्रकार यह वह मूल्य है, जो भारतीय खाद्य निगम या राज्य अधिकृत एजेंसियों को अपने भण्डारों से अनाज निकास करने के पश्चात् प्राप्त होता है।

उल्लेखनीय है कि भारतीय खाद्य निगम ने खरीदी वसूली मूल्य पर करता है एवं विक्रय निकासी मूल्य पर। सरकारी दबाव के चलते लोककल्याणकारी कार्यक्रमों के लिए निकासी मूल्य सामान्यत: वसूली मूल्य से कम होता है। इस प्रकार वसूली मूल्य पर हुए नुकसान की क्षतिपूर्ति सरकार भारतीय खाद्य निगम को करती है। उल्लेखनीय है कि बाजार स्थिरीकरण योजना (MSS) के अन्तर्गत सरकार भारतीय खाद्य निगम को नकद न देते हुए बांड जारी करने लगी है।

ध्यातव्य है कि सरकार मूल्य नीति के माध्यम से खाद्य प्रबंधन की अवधारणा को भी साकारित करती है। यहां उसके 3 उद्देश्य हैं –

1) किसानों को उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो।
2) समाज के कमजोर वर्गों को वहनीय कीमत पर खाद्यान्न वितरण व खाद्य सुरक्षा।
3) मूल्य को स्थिर बनाए रखने, आयात से निर्भरता घटाने एवं आपदाओं, जैसे – बाढ़, सूखा, अकाल आदि से रक्षा के लिए बफर स्टॉक को बनाए रखना।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

कृषि एवं अन्य सामाजिक क्षेत्र के लिए प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सब्सिडी के मुद्दे
Issues of Direct and Indirect Subsidy for Farm Sector and Other Social Sectors

भारत में केन्द्र सरकार द्वारा खाद्य, उर्वरक, पेट्रोलियम आदि पर प्रतिवर्ष काफी सब्सिडी दी जाती है। ठीक इसी प्रकार राज्य सरकारें भी सिंचाई, विद्युत, शिक्षा आदि पर सब्सिडी देती है। वर्तमान में सब्सिडी का भार अर्थव्यवस्था पर बढ़ता जा रहा है। इसका उचित समाधान न होने से यह उत्तरोत्तर अधिक गंभीर होती जा रही है और प्रमुखत: राजनीतिक कारणों से इसका हल भी नहीं हो पा रहा है।

❐ सब्सिडी का अर्थ व औचित्य (Meaning & Rationals of Subsidy)

जब किसी वस्तु या सेवा की कीमत उसके उत्पादन लागत से कम ली जाती है, तो उस अन्तर की क्षतिपूर्ति को सब्सिडी कहते हैं। दूसरे शब्दों में जब सरकार कुछ विशेष वर्गों, जिनमें साधारणत: वंचित, गरीब एवं अन्य प्राथमिकता वाले क्षेत्र आते हैं, को आर्थिक लागत से कम कीमत पर वस्तु एवं सेवाओं की आपूर्ति करती है। तब उस आर्थिक लागत की क्षतिपूर्ति के लिए किया गया सरकारी व्यय सब्सिडी कहलाता है। अत:

सब्सिडी = आर्थिक लागत – निकासी मूल्य

सब्सिडी देने के पीछे सबसे प्रमुख कारण यह है कि वस्तुओं की उत्पादन लागत ऊँची होने से प्राय: आम उपभोक्ता ऊँची कीमत देने की स्थिति में नहीं होता है। अत: ऐसी स्थिति में किसी भी कल्याणकारी राज्य में सरकार को सब्सिडी देकर वस्तुएं व सेवाएं सर्वसाधारण को उपलब्ध करवानी पड़ती है। इसके अलावा विकसित देशों में काफी मात्रा में कृषिगत सब्सिडी दी जाती है। अमेरिका व यूरोपीय संघ अपने कृषकों को भारी मात्रा में सब्सिडी देते हैं, जिससे उनका कृषिगत उत्पादों का निर्यात बढ़ जाता है। ऐसी स्थिति में भारत जैसे विकासशील देशों को अपने कृषकों के हितों की रक्षा के लिए सब्सिडी देने की व्यवस्था करनी पड़ती है।

❐ भारत में सब्सिडी के रूप (Types of Susbidies in India)

• खाद्यान्न सब्सिडी (Food Subsidy)

भारत में खाद्यान्न सब्सिडी सार्वजनिक वितरण प्रणाली के द्वारा पहुंचाई जाती है। इसमें उचित मूल्य की दुकानों से वंचित वर्ग, सरकार द्वारा तय कीमतों पर (जो अर्थिक लागत से कम होती है) खरीदते हैं। आर्थिक लागत की क्षतिपूर्ति सरकार द्वारा भारतीय खाद्य निगम (FCI) को की जाती है। इस प्रकार सब्सिडी FCI के पास जाती है, सीधे उपभोक्ता के पास नहीं। ज्ञातव्य हो कि सरकार द्वारा FCI के माध्यम से खाद्यान्न खरीद की जाती है, जिसके दोहरे उद्देश्य है –

- ➢ गरीबों के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना।
- ➢ न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा के साथ किसानों की सुरक्षा सुनिश्चित करना। यह एक प्रकार से फसल का बीमा होता है, कि यदि किसान को बाजार में उचित मूल्य नहीं मिलेगा, तो इसे न्यूनतम उचित मूल्य सरकार प्रदान करेगी।

• कृषि क्षेत्र में सब्सिडी (Agricultural Subsidy)

कृषि क्षेत्र में कृषि आगतों पर मुख्यत: बीज, उर्वरक आदि पर सब्सिडी दी जाती है। भारत सरकार की बड़ी सब्सिसिडियों में से एक उर्वरक सब्सिडी है। कृषक कम भाव पर बाजार से उर्वरक खरीदते हैं। यहां आर्थिक लागत का भुगतान उर्वरक कंपनियों को किया जाता है, सीधे किसानों को नहीं। इस प्रकार इसमें यह दोष उभरकर सामने आता है कि सब्सिडी का अधिकांश लाभ तो बड़े किसान उठा ले जाते हैं। इसके अतिरिक्त कृषि क्षेत्र में सस्ते ऋण व फसल बीमा सरकार द्वारा प्रदान किया जाता है, जिसमें बीमा की किश्तों व ऋण पर ब्याज छूटों आदि का भुगतान सरकार द्वारा बैंकों को किया जाता है।

• पेट्रोलियम पदार्थों पर सब्सिडी (Petroleum Subsidy)

भारत पेट्रोल, डीजल, केरोसिन, रसोई गैस आदि पर सब्सिडी देती है। यह सब्सिडी भी ऊपर वर्णित सभी सब्सिडियों की तरह अप्रत्यक्ष है। पेट्रोलियम पदार्थों पर आर्थिक लागत की क्षतिपूर्ति सरकार द्वारा पेट्रोलियम कंपनियों Indian Oil, HP, ONGC आदि को दी जाती है। रसोई गैस पर सब्सिडी '**पहल**' (PAHAL) योजना के अन्तर्गत प्रत्यक्ष अंतरण में लाई जा रही है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **अन्य सब्सिडियां (Other Subsidy)**

शैक्षणिक लोन पर सहायता, छात्रवृत्ति अनुदान, अन्य पेंशन भुगतान, मनरेगा की मजदूरी आदि विगत वर्षों से सीधे उपभोक्ता के पास पहुंचाई जा रही है। इस प्रकार भारत में अधिकांश प्रचलित सब्सिडियां अप्रत्यक्ष ही हैं। अप्रत्यक्ष सब्सिडी वितरण में अनेकों-अनेक बिचौलियों के कारण भ्रष्टाचार का कारण बनती है।

❐ सब्सिडी के प्रतिकूल आर्थिक प्रभाव (Adverse Economic Impact of Subsidy)

1) सब्सिडी के जारी रहने व बढ़ने से सरकार की राजस्व घाटे में वृद्धि होती है, जिसकी पूर्ति के लिए सरकार को उधार लेना पड़ता है। इससे ब्याज की देनदारी बढ़ती है और आगे चलकर राजकोषीय घाटा बढ़ता है।

2) बढ़ते सब्सिडी व्यय का अन्ततः भार करदाताओं पर ही पड़ता है। अपने बड़े हुए व्यय को पूरा करने के लिए सरकार कर-राजस्व में वृद्धि करती है।

3) बढ़ते सब्सिडी व्यय के कारण बाजार में मुद्रा की तरलता (Liquidity) में वृद्धि होती है, जो कि स्फीतिकारी दबाव (Inflationary Pressure) उत्पन्न करती है। बढ़ा हुआ सार्वजनिक व्यय रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति के क्रियान्वयन में भी बाधा उत्पन्न करता है।

4) सब्सिडी में निरंतर वृद्धि के कारण बढ़ता हुआ सार्वजनिक व्यय 'क्राउडिंग आउट' (Crowding Out) के रूप में निजी निवेश को हतोत्साहित करता है। ज्ञातव्य हो कि क्राउंडिंग आउट से आशय सरकार द्वारा घाटापूर्ति के लिए बाजार से अत्यधिक ऋण लेने से है। सरकार द्वारा ऋण की मांग बढ़ जाने से ब्याज की दर बढ़ जाती है एवं इन बढ़ी हुई ब्याज की दरों पर निजी निवेशक ऋण नहीं ले पाते हैं। अतः निजी निवेशक हतोत्साहित हो जाते हैं।

5) सब्सिडी का एक दुष्परिणाम यह भी होता है कि इससे अनावश्यक एवं व्यर्थ के उपभोग को बढ़ावा मिलता है। जैसे -सब्सिडी के कारण पेट्रोलियम पदार्थों कम कीमत पर सहज रूप से उपलब्ध होते हैं, जिसके कारण जनता इसका किफायती प्रयोग नहीं करती है।

6) सब्सिडी पर भारी राशि लग जाने से सरकार के पास इन्फ्रास्ट्रक्चर (सिंचाई, बिजली, सड़क, संचार, शिक्षा, चिकित्सा आदि) के विकास के लिए साधन कम हो जाते हैं। भारत में अधिकांश अर्थशास्त्रियों का यह मत है कि सब्सिडी पर व्यय को सीमित करके इन्फ्रास्ट्रक्चर पर अधिक ध्यान देने से ग्रामीण विकास को अधिक सुदृढ़ किया जा सकता है और इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को अधिक लाभ पहुंचाया जा सकता है।

❐ सब्सिडी को नियंत्रित करने के उपाय (Ways to Control Subsidy)

सब्सिडी की समस्या काफी जटिल मानी गई है, जिसे नियंत्रित करने के लिए सर्वप्रथम एक स्पष्ट रणनीति तैयार करनी होगी, जिसके मुख्य तत्व निम्नलिखित हैं -

1) गैर-मेरिट सब्सिडी को कम करने पर सर्वाधिक बल देना चाहिए। समाज के हित में मेरिट सब्सिडी जारी रखी जा सकती है।

2) भारत के खाद्य निगम के घाटों को कम किया जाना चाहिए, इसके लिए खरीद, संग्रहण, वितरण, स्टॉक आदि में कार्य-कुशलता बढ़ाई जानी चाहिए।

3) खाद्य कूपन (Food Stamp) जारी किए जा सकते हैं, जिसका उपयोग करके बीपीएल परिवार राशन की दुकान पर एपीएल परिवारों के समान खरीदारी कर सकते हैं। इससे भ्रष्टाचार व वितरण के रिसाव में कमी आएगी। लेकिन यहां भी बीपीएल परिवारों की सही सूची तैयार करने की समस्या तो बनी रहेगी।

4) एक महत्वपूर्ण उपाय यह है कि अप्रत्यक्ष सब्सिडी के स्थान पर प्रत्यक्ष सब्सिडी को अपनाया जाए।

5) सब्सिडी का प्रयोग परिभाषित व आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किया जाना चाहिए।

7) सब्सिडी अंतिम वस्तुओं और सेवाओं पर ही दी जानी चाहिए, मध्यवर्ती वस्तुओं एवं सेवाओं पर नहीं।

8) सब्सिडी की समयसीमा तय कर देनी चाहिए। नई सब्सिडी काफी सोच-समझकर चालू करनी चाहिए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

9) इनकी समय-समय पर समीक्षा भी की जानी चाहिए और उसमें आवश्यक परिवर्तन करने के लिए प्रशासन को तैयार रहना चाहिए।

प्रत्यक्ष बनाम अप्रत्यक्ष सब्सिडी
Direct v/s Indirect Subsdies

- **अप्रत्यक्ष सब्सिडी (Indirect Subsdies)**

सरकार कई तरह की अप्रत्यक्ष सब्सिडी प्रदान करती है, जिनमें केरोसीन, पेट्रोल, डीजल, खाद्यान्न तथा उर्वरक प्रमुख हैं। अप्रत्यक्ष सब्सिडी की निम्नलिखित सीमाएं हैं -

➢ **अप्रत्यक्ष सब्सिडियां प्राय: प्रतिगामी हैं (Indirect Subsdies are Often Regressive)**

प्रतिगामी से हमारा अभिप्राय है कि इन सुविधाओं का लाभ गरीब व्यक्ति के मुकाबले अमीर व्यक्ति को अधिक मिलता है। जैसे-जैसे लोगों की आय का स्तर बढ़ता है, उसी अनुपात में सब्सिडी का लाभ भी बढ़ता है। कहने का तात्पर्य यह है कि इसका लाभ जरूरतमंद व्यक्ति तक नहीं पहुंच पाता है। उदाहरणार्थ - हम इसे बिजली में दी जाने वाली सब्सिडी के रूप में देख सकते हैं। पहला बिजली सब्सिडी का लाभ केवल 69.2 प्रतिशत परिवार को ही मिलता है, जिनके पास विद्युत कनेक्शन हैं। अत: शेष 30.8 प्रतिशत परिवार, जो कि गरीब व वंचित वर्ग है इस सब्सिडी का लाभ नहीं उठा पाते हैं। दूसरा विद्युतीकृत परिवारों में भी धनी व्यक्ति काफी अधिक बिजली का इस्तेमाल करते हैं। अत: सब्सिडी का लाभ उन्हें ही अधिक मिलता है।

आंकड़ों से स्पष्ट है कि निचले 10 प्रतिशत परिवार औसतन कुल सब्सिडी का केवल 10 प्रतिशत ही उपभोग कर पाते हैं, जबकि ऊपरी 10 प्रतिशत परिवार कुल बिजली सब्सिडी का 37 प्रतिशत उपभोग कर लेते हैं। इसी प्रकार ईंधन सब्सिडियां भी प्रतिगामी कही जा सकती हैं। निचले 10 प्रतिशत परिवार लगभग 20 रुपए प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह ईंधन सब्सिडी का प्रयोग करते हैं, जबकि ऊपरी 10 प्रतिशत 120 रुपए प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह ईंधन सब्सिडी का लाभ उठा ले जाते हैं। इसी तरह सबसे गरीब परिवारों में से 50 प्रतिशत परिवार LPG का केवल 25 प्रतिशत ही उपयोग करते हैं। सब्सिडीकृत पानी भी लगभग प्रतिगामी है। एक अनुमान के अनुसार जल सब्सिडी का 85 प्रतिशत प्राइवेट नलों पर खर्च किया जाता है, जबकि गरीब परिवारों के 60 प्रतिशत परिवार सरकारी नलों से अपना पानी लेते हैं।

➢ **अप्रत्यक्ष सब्सिडियों से गरीबों व पर्यावरण को नुकसान (Bad Impact of Subsidy on Poor & Environment)**

1) रामास्वामी, शेषाद्रि और सुब्रमण्यम (2014) यह बताते हैं कि ऊँचे न्यूनतम समर्थन मूल्यों की वजह से किसान चावल और गेहूं का अधिक उत्पादन करते हैं, जिसे भारतीय खाद्य निगम अधिक कीमत पर खरीद लेता है। ऊँचे न्यूनतम समर्थन मूल्य, बिना न्यूनतम समर्थन मूल्य वाली फसलों के उत्पादन को हतोत्साहित करते हैं। इससे आपूर्ति-मांग में अन्तर आए बिना न्यूनतम समर्थन मूल्य वाले खाद्य उत्पादों की कीमतें ऊँची हो जाती हैं। इससे खाद्य वस्तुओं की महंगाई बढ़ती है, परिणामस्वरूप गरीब परिवार सबसे अधिक प्रभावित होते हैं।

2) ऊँचे न्यूनतम समर्थन मूल्य और पानी के लिए मूल्य सब्सिडी, दोनों के कारण ऐसी फसलें उगाई जाने लगी हैं, जिनके लिए अधिक पानी की आवश्यकता होती है। इसकी वजह से जलाक्रांत (Water Logging) की समस्या उत्पन्न हो जाती है एवं गैर सिंचित क्षेत्रों में गिरता भू-जल स्तर अन्तत: गरीब किसानों के लिए दीर्घकालिक रूप से नुकसानदायक है।

3) पेट्रोलियम सब्सिडी की वजह से इन पदार्थों का किफायती प्रयोग नहीं होता है एवं अत्यधिक उपयोग के कारण अन्तत: ये वायु प्रदूषण का कारण बनते हैं।

4) उर्वरक सब्सिडी की वजह से कृषक अत्यधिक उर्वरक उपभोग के लिए प्रोत्साहित होते हैं, जो अन्तत: भूमि की उत्पादकता गिराता है एवं भूमि प्रदूषण का कारण बनता है। ज्ञातव्य हो कि हरित क्रांति के प्रथम चरण के लभान्वित क्षेत्र पंजाब एवं हरियाणा अत्यधिक उर्वरक उपभोग के चलते आज निम्न उत्पादकता का सामना कर रहे हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

इस तरह अप्रत्यक्ष सब्सिडी कई तरह की समस्याओं से ग्रसित है। विगत 65 वर्षों में यह आंशिक रूप में ही सफल हुई है। वर्तमान सरकार द्वारा भी इसे प्रत्यक्ष सब्सिडी के रूप में परिवर्तित किया जा रहा है।

- **प्रत्यक्ष सब्सिडी (Direct Subsdies)**

सरकार द्वारा जनता के विशेष वर्ग के सामाजिक-आर्थिक उत्थान के लिए वस्तुओं एवं सेवाओं के प्रावधान एवं वितरण के बजाय जब एक निश्चित नकद राशि का अन्तरण अथवा भुगतान लाभार्थी के बैंक खाते, पोस्ट ऑफिस के खाते या मोबाइल मनी हस्तांतरण मशीन द्वारा किया जाता है, तो इसे प्रत्यक्ष हस्तांतरण कहते हैं। वर्तमान समय में सरकार इस ओर प्रयत्नशील हैं एवं आधार लिंक बैंक खाते एवं बायोमेट्रिक पहचान के माध्यम से प्रत्यक्ष अन्तरण कर रही है। उदाहरणार्थ - समस्त छात्रवृत्ति अनुदान, पेंशन अनुदान, एल. पी. जी. एवं अन्य सामाजिक कार्यक्रमों में संलग्न सब्सिडी सीधे लाभार्थी के खाते में पहुंचाई जा रही हैं।

वर्तमान प्रचलित अप्रत्यक्ष सब्सिडी वितरण के नकारात्मक परिणाम, जैसे - रिसाव, अपव्यय, भ्रष्टाचार और पर्यावरणीय क्षति (उर्वरक द्वारा) ने सब्सिडी संरचना में व्यापक परिवर्तन करने की स्थिति उत्पन्न कर दी है। प्रत्यक्ष सब्सिडी इसकी सीमाओं को दूर करने का प्रयास करता है। प्रत्यक्ष सब्सिडी के माध्यम से अनावश्यक रिसाव से बचा जा सकता है एवं गैर-वंचित वर्गों को भी लाभों से बाहर किया जा सकता है। प्रत्यक्ष सब्सिडी का एक अन्य लाभ यह है कि सरकार वितरण की लागत से साफ बच सकती है। प्रत्यक्ष सब्सिडी लाभार्थी की क्रय शक्ति में सीधे वृद्धि कर देती है। साथ ही उसे वस्तु एवं सेवाओं के चुनाव के विकल्प उपलब्ध होते हैं। ज्ञातव्य हो कि अर्मत्य सेन विकल्पों के विस्तार को ही सशक्तिकरण मानते हैं।

- **प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण की आशंकाएं (Doubts in Direct Benefit Transfer)**

प्रत्यक्ष सब्सिडी के संदर्भ में अर्थशास्त्री कुछ आशंकाएं एवं आपत्तियां उठाते हैं। इनका मानना है कि प्रत्यक्ष सब्सिडी सैद्धान्तिक तौर पर तो उचित विचार है, किन्तु व्यवहार में इसका कार्यान्वयन अत्यधिक जटिल है। इसे हम निम्नलिखित तरीके से देख सकते हैं -

1) प्रत्यक्ष सब्सिडी की कोई भी योजना तभी सफल हो सकती है, जब वह लक्षित वर्ग तक पहुंचे। इस संदर्भ में भारत सरकार 'आधार' के माध्यम से बैंक खातों को जोड़ने का प्रयास कर रही है, किन्तु स्वयं यह योजना कई खामियों से गुजर रही है।
2) फर्जी आधार कार्ड एवं आधार कार्ड से जुड़े सुरक्षा सम्बन्धी मुद्दे भी नहीं सुलझाएं जा सके हैं।
3) यह स्पष्ट नहीं है कि क्या DBT भविष्य में PDS को समाप्त कर देगी। PDS की 5 लाख उचित मूल्य दुकानों का भविष्य अस्पष्ट है।

भारत में सब्सिडी वितरण की मुख्य समस्या अवंचित वर्गों का लाभ उठा ले जाना है और वंचित वर्गों की पर्याप्त पहचान न हो पाना है। प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण योजना गरीबों एवं वंचितों की पहचान नहीं करती। आधार कार्ड '**पहचान का पत्र**' है, वंचित या अवंचित होने का नहीं। सर्वप्रथम समस्या तो वंचित वर्ग की पहचान की है। चाहे वह खाद्यान्न के संबंध में BPL हो या कृषि के संबंध में लघु व सीमांत किसान हो।

इस प्रकार प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण की सफलता-असफलता आधार प्रणाली के क्रियान्वन पर जुड़ी है। वित्तीय समावेशन, अर्थात् - लाभार्थी का खाता धारक होना, पर्याप्त ATM सुविधा, स्मार्ट कार्ड की सुविधा भी प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण की सफलता के लिए आवश्यक है। सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथ्य वह वंचित वर्गों की पहचान से ही जुड़ा है।

प्रत्यक्ष सब्सिडी पेंशन, छात्रवृत्ति, काम के बदले अनाज, सस्ती या मुफ्त शिक्षा, स्वास्थ्य व कौशल सेवा, केन्द्र सरकार की जननी सुरक्षा योजना, स्वजलधारा योजना, मनरेगा, इंदिरा आवास योजना एवं अन्य ग्राम रोजगार योजना आदि के लिए सब्सिडी हस्तान्तरण में तो उपयोगी है, किन्तु जब बात खाद्यान्न सब्सिडी की आती है, तो निम्नलिखित 3 संभावनाएं, समस्याओं के साथ उभरकर आती है, जिसमें से किसी एक का चुनाव व सुलझाव आवश्यक है, जो निम्नलिखित हैं -

- **पहला तरीका** - खाद्यान्न के बदले नकद राशि देना और PDS को समाप्त करना। इससे जुड़ी समस्या यह है कि इस स्थिति में सरकार को अनाज खरीदी की व्यवस्था बंद करनी पड़ेगी। इस स्थिति में किसानों का क्या होगा? अगर उनका अनाज खुले बाजार में बिकने से रह गया, तो वे हतोत्साहित हो जाएगा। यह नीति व्यवहारिक नहीं दिखती।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **दूसरा तरीका** - आधार युक्त PDS व्यवस्था हो सकती है। इस प्रणाली में लाभार्थी अनाज का अपना राशन पहले की तरह उचित मूल्य की दुकानों से लेंगे। अन्तर सिर्फ इतना है कि उचित मूल्य के दुकानदार को उसे अपना बायोमीट्रिक ब्योरा देना होगा। यह विक्रय GSM नेटवर्क के जरिए एकीकृत प्रबंधन प्रणाली के जरिए होगा। इसमें यह सुनिश्चित होगा कि राशन कौन ले रहा है। राशन मिलते ही, इतना अनाज पोर्टेबुल (उठा हुआ) दिखाया जाएगा।
- **तीसरा तरीका** - PDS लाभ की अनुदान राशि सीधे हितग्राही को बैंक खाते में देना है, ताकि वह उचित मूल्य के दुकानदार को बाजार कीमत अदा कर सके। चूंकि उचित मूल्य दुकानदार सरकारी गोदाम से माल उठाते समय पूरा मूल्य अदा करेगा, कालाबाजारी की समस्या ही समाप्त हो जाएगी।

इन तीनों व्यवस्थाओं में द्वितीय तरीका अधिक व्यवहारिक लगता है। यह उन सभी आलोचकों का मुंह बंद कर देगा, जो मानते हैं कि PDS को बचाने का एकमात्र तरीका, उसे बंद कर देना है।

- **नकद अन्तरण से सुलभ होने वाली संभावनाएं (The Benefits Offered by Cash Transfers)**

1) हाल के अनेक अध्ययन हमें स्पष्ट करते हैं कि बिना शर्त के नकद अन्तरण का लक्ष्य सही होता है, तो यह घरेलू उपभोग और परिसम्पत्ति स्वामित्व को बढ़ावा दे सकता है और अत्यन्त गरीबों की खाद्य सुरक्षा की समस्याओं को कम कर सकता है।

2) नकद अन्तरण के माध्यम से मौजूदा गरीबी निवारण कार्यक्रमों की सफलता दर को बढ़ा सकता है।

3) नकद अन्तरण के माध्यम से वितरण प्रक्रिया से जुड़े सरकारी विभागों की संख्या को कम हो जाएगी, जिससे इनके लीकेज के अवसरों में कमी आ जाएगी। साथ ही सब्सिडी की लागत में भी कमी आएगी।

4) नकद अन्तरण के माध्यम से लाभार्थी को समय पर भुगतान प्राप्त हो जाएगा।

❐ निष्कर्ष (Conclusion)

सब्सिडी की समस्या का स्थायी हल निकालना तभी संभव हो सकती है, जब देश की विकास की दर तेज हो (10 प्रतिशत) और इसका लाभ सभी क्षेत्रों, सभी वर्गों व सभी समुदायों आदि को समान रूप से मिले, अर्थात् - सर्वसमावेशी विकास हो और अर्थव्यवस्था सही मायने में बाजार प्रणाली पर संचालित हो। फिर भी निर्धनों के लिए तो सब्सिडी तो देना ही होगी। इस संदर्भ में भारत सरकार ने 2011 नन्दन-निलेकणी की अध्यक्षता में एक कार्यदल गठित किया था, जिसने अपनी रिपोर्ट में केरोसीन, रसोई गैस व उर्वरकों के संबंध में अपने सुझाव प्रस्तुत किए हैं। इसी रिपोर्ट के आधार पर सब्सिडी की नकद हस्तान्तरण की प्रक्रिया प्रारंभ की गई है।

यहां उल्लेखनीय है कि 1990 के दशक से ही विश्व स्तर पर आर्थिक विकास तथा सामाजिक सुरक्षा के लिए निर्धनता निवारण कार्यक्रमों के बजाय प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण पर जोर दिया जा रहा है। ब्राजील का 'बोल्सा फैमेलिया' एवं 'जीरो हंगर प्रोग्राम' तथा कई अफ्रीकी देशों, जैसे - घाना, कांगो, माली, नाइजिरिया, जम्बिया, जिम्बाम्बे, सोमोलिया में इसी प्रणाली को अपनाया है। विश्व बैंक एवं संयुक्त राष्ट्र के अनेक अंतर्राष्ट्रीय संगठनों ने तथा OECD ने अपनी रिपोर्ट 2009 में सीधे तौर पर प्रत्यक्ष सब्सिडी का समर्थन किया है।

इस प्रकार सब्सिडी की राशि पर नियंत्रण, विशेषत: गैर-मेरिट सब्सिडी पर ऐसा करने से, आर्थिक साधनों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है। साथ ही सार्वजनिक वित्त की व्यवस्था को सुधारा जा सकता है और ग्रामीण विकास की प्रक्रिया को तेज किया जा सकता है। स्मरण रहे कि सब्सिडी एक बार जारी करने से आगे चलकर उसे बंद करना या कम करना कठिन होता है। इसलिए सब्सिडी की मद का चुनाव प्रारंभ में ही बहुत सावधानी से किया जाना चाहिए। उसे समयबद्ध ढंग से लागू करना चाहिए एवं समय-समय पर समीक्षा करते रहना चाहिए। विशेषज्ञों का मानना है कि अभी तक हमारे देश में सब्सिडी की व्यवस्था समानता व कार्यकुशलता जैसे दोनों लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर पाई है। इसलिए सब्सिडी की सम्पूर्ण प्रणाली को नए ढंग से व्यवस्थित करना होगा और इसके लिए एक राष्ट्रीय सब्सिडी नीति का निर्माण करना होगा।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

खाद्य सुरक्षा एवं सार्वजनिक वितरण प्रणाली
Food Security & Public Distribution System

❐ खाद्य सुरक्षा का आशय (Meaning of Food Security)

खाद्य सुरक्षा का अर्थ है सभी लोगों को सभी समयों पर पर्याप्त मात्रा में खाद्यान्न (भोजन) उपलब्ध करना, ताकि वे सक्रिय व स्वस्थ्य जीवन व्यतीत कर सकें। इस संबंध में पी. वी. श्रीनिवासन ने भी कहा है कि इसके लिए यह आवश्यक है कि न केवल समग्र स्तर (Aggregate Level) पर खाद्यान्नों की पर्याप्त मात्रा उपलब्ध हो, बल्कि व्यक्तियों/परिवारों के पास उपयुक्त क्रय शक्ति भी हो, ताकि वे आवश्यकतानुसार खाद्यान्न क्रय कर सकें। जहां तक पर्याप्त मात्रा का संबंध है, इसके 2 पहलू हैं -

1) **मात्रात्मक पहलू** - इसके अनुसार अर्थव्यवस्था में खाद्य-उपलब्धि इतनी हो कि मांग की पूर्ति कर सकें।

2) **गुणात्मक पहलू** - इसके अनुसार जनसंख्या की पोषण आवश्यकताएं (Nutritional Requirement) पूरी की जा सकें।

खाद्य सुरक्षा के मात्रात्मक एवं गुणात्मक पहलुओं के समाधान के लिए भारत सरकार ने **3 खाद्य-आधारित सुरक्षा जाल** (Food Based Nets) अपनाए हैं - सार्वजनिक वितरण प्रणाली, समेकित बाल विकास सेवाएं (Integrated Child Development Services - ICDS) एवं दोपहर भोजन कार्यक्रम (Mid-day Meals Programme)। जहां तक लोगों की क्रय शक्ति में वृद्धि का प्रश्न है, समय-समय पर रोजगार कार्यक्रम शुरू किए जाते रहे हैं।

◆ मात्रात्मक पहलू (The Quantitative Aspect)

स्वतंत्रता के बाद के वर्षों में खाद्यान्नों की अत्यधिक कमी के परिणामस्वरूप सरकार की खाद्य नीति का उद्देश्य खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्म-निर्भरता (Self Sufficiency) प्राप्त करना था। तीसरी पंचवर्षी योजना के बाद खाद्यान्नों के उत्पादन में लगातार वृद्धि हुई है। अर्थव्यवस्था अब खाद्यान्नों की समग्र कमी की समस्या का सामना कर पाने में सफल हो सकी है तथा सुखे जैसी विपत्तियों का सामना करने के लिए सरकार के पास खाद्यान्नों के पर्याप्त भंडार हैं। इस संबंध में आर. राधाकृष्ण ने कहा है कि भारत 1970 के दशक में ही खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्म-निर्भरता की स्थिति पा चुका था तथा इस स्थिति को लगातार बनाए रखने में सफल रहा है।

यद्यपि खाद्यान्नों के विपुल भंडारों के कारण स्थिति संतोषजनक दिखाई देती है, तथापि चिन्ता के कुछ कारण अवश्य है। विश्लेषकों के अनुसार जहां बढ़ती हुई जनसंख्या तथा बढ़ते हुए आय स्तरों के कारण गेहूं के उपभोग में आने वाले वर्षों में काफी वृद्धि अपेक्षित है। इसके विपरीत गेहूं के उत्पादन को बढ़ाने की संभावनाएं बहुत कम हैं, क्योंकि न तो गेहूं अधीन क्षेत्र में वृद्धि होना संभव लग रहा है और न ही गेहूं की उत्पादकता में।

◆ गुणात्मक पहलू (The Qualitative Aspect)

मात्रात्मक पहलू से भी अधिक गंभीर गुणात्मक पहलू है। यह बात निम्नलिखित तथ्यों से स्पष्ट होती हैं -

1) राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे (National Family Health Survey - NFHS-3) के अनुसार 3 वर्ष आयु से कम के 46 प्रतिशत एवं 6 वर्ष आयु से कम के 49 प्रतिशत बच्चे कुपोषित हैं।

2) पुन: NFHS-3 के अनुसार 56 प्रतिशत बच्चे टीकाकरण से बाहर हैं एवं 79 प्रतिशत बच्चे ऐसे हैं, जिन्होंने विगत 6 माह में विटामिन ए का कोई डोस नहीं लिया है।

3) पुन: NFHS-3 के अनुसार विवाहित महिलाओं का 33 प्रतिशत लौह अपर्याप्तता से व 58 प्रतिशत एनिमिया से ग्रसित है।

❐ बफर स्टाक की धारणा एवं खाद्य सुरक्षा (Concept of Buffer Stock & Food Security)

कुछ आकस्मिक परिस्थितियों जैसे सूखा, अकाल, फसल खराब होने की स्थिति आदि से संरक्षित करने तथा मूल्य की अचानक तथा तेज वृद्धि से सामान्य लोगों को संरक्षित करने के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत रखे जाने वाले गेहूं तथा चावल के स्टाक के अतिरिक्त एक स्टाक सरकार रखती है, जिसे बफर स्टाक कहते हैं। आकस्मिक परिस्थितियों से निपटने के लिए बफर स्टाक से गेहूं तथा चावल की आपूर्ति की जाती है, जिससे एक ओर इनकी पूर्ति की उपलब्धता प्रतिकूल रूप से प्रभावित न हो और दूसरी ओर पूर्ति की कमी के कारण इनके मूल्य में वृद्धि नहीं हो।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

1 जनवरी, 2012 को खाद्यान्नों का बफर स्टॉक 55.4 मिलियन टन था, जिसमें से चावल 29.7 मिलियन टन तथा गेहूं 25.7 मिलियन टन था। जबकि कुल आवश्यक न्यूनतम स्टॉक 25 मिलियन टन निर्धारित किया गया था, जिसमें गेहूं का न्यूनतम बफर स्टॉक 11.2 मिलियन टन तथा चावल का न्यूनतम बफर स्टॉक 13.8 मिलियन टन होना चाहिए था।

उल्लेखनीय है कि बफर स्टॉक कायम रखने तथा टी. पी. डी. एस. तथा अन्य कल्याणकारी स्कीमों की खाद्यान्नों की आवश्यकता की पूर्ति के अलावा एफ. सी. आई. सरकारी आदेश पर गेहूं तथा चावल को खुले बाजार में डालती है। 2009-10 में 16.28 लाख क्विंटल गेहूं तथा 4.94 क्विंटल चावल की आपूर्ति बाजार में की, जिससे इनके बाजार मूल्य को नियंत्रित किया जा सके।

❐ राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 (National Food Security Act, 2013)

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 खाद्य सुरक्षा के क्षेत्र में एक युगान्तरकारी कदम है। अधिनियम का उद्देश्य देश के सभी नागरिकों को हर समय पर्याप्त भोजन उपलब्ध कराने, खाद्यान्नों के सार्वजनिक वितरण या अन्य माध्यम से उपयुक्त व्यवस्था करना है। भूख, कुपोषण तथा इनसे जुड़ी समस्याओं से छुटकारा पाना हर व्यक्ति का मौलिक अधिकार (Fundamental Right) है। अत: यह अधिनियम प्रत्येक व्यक्ति को भोजन का अधिकार (Right to Food) देता है। यह पूर्व में चलाए गए अन्य कार्यक्रमों से इस आधार पर भिन्न है कि यह एक कानूनी अधिकार हो जाएगा। खाद्य सुरक्षा अधिनियम पर 12 सितम्बर, 2013 को हस्ताक्षर किए गए और यह कानून बन गया। इसकी मुख्य बातें निम्नलिखित हैं -

1) NFSA 75 प्रतिशत ग्रामीण तथा 50 प्रतिशत शहरी जनसंख्या को, अर्थात् - कुल 80 करोड़ जनसंख्या (कुल जनसंख्या का 67 प्रतिशत या दो तिहाई) को लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (TPDS) के माध्यम से सस्ती कीमतों पर खाद्यान्न प्राप्त करने का कानूनी अधिकार देता है।

2) लाभार्थी को एक माह में 5 किलो चावल, गेहूं एवं मोटे अनाज की आपूर्ति क्रमश: 3 रुपए, 2 रुपए एवं 1 रुपया प्रति किलो की दर पर की जाएगी।

3) अन्तोदय अन्न योजना के अधीन 2.43 करोड़ निर्धनतम् परिवारों के लिए खाद्यान्न की मात्रा 7 किलो रहेगी।

4) अधिनियम के अधीन पात्र परिवारों की पहचान राज्य सरकारें करेंगी और यह काम उसे 365 दिनों के भीतर करना होगा।

5) 6 माह से 6 वर्ष के बच्चों के लिए अधिनियम में आयु अनुसार समुचित भोजन की गारंटी दी गई है, जिसे स्थानीय आंगनवाड़ी के माध्यम से मुफ्त प्रदान किया जाएगा। 6-14 आयु वर्ग के बच्चों को प्रतिदिन स्कूल की छुट्टी के अलावा एक बार मुफ्त भोजन दिया जाएगा।

6) प्रत्येक गर्भवती महिला तथा स्तनपान कराने वाली महिलाओं को स्थानीय आंगनवाड़ी से मुफ्त भोजन दिया जाएगा तथा किश्तों में 6000 रुपए का मातृत्व लाभ दिया जाएगा।

7) अधिनियम के अधीन जिन लोगों को खाद्यान्न प्राप्त करने का हक दिया गया, उन्हें खाद्यान्न न मिलने की स्थिति में संबंधित राज्य सरकार से खाद्य सुरक्षा भत्ता (Food Security Allowance) प्राप्त करने का हक है।

◆ राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम का आलोचनात्मक मूल्यांकन (Criticial Evaluvation of NFSA)

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम के संबंध में कई सीमाएं हैं, जिसे लेकर अर्थशास्त्रियों द्वारा इसकी आलोचना की जाती है। कुछ मुख्य आलोचनाएं इस प्रकार हैं -

1) अधिनियम गरीबों का निर्धारण कैसे किया जाएगा? इस समस्या पर मौन है।

2) जब तेंदुलकर/रंगराजन आदि कमेटी की सिफारिश पर सरकार ने यह स्वीकारा है कि देश में 30 से 40 प्रतिशत गरीब पाए हैं। तो वह 80 करोड़ लोग अथवा 69 प्रतिशत आबादी को खाद्य क्यों उपलब्ध करवा रही है?

3) अशोक गुलाटी तर्क देते हुए कहते हैं कि अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार 250 लाख टन अनाज उत्पादन में वृद्धि करना आवश्यक हो जाएगी, जो देश के समक्ष स्वयं एक बहुत बड़ी चुनौती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

4) खाद्य सुरक्षा को लेकर सबसे बड़ी समस्या PDS की खामियां एवं रिसाव है। अधिनियम क्रियान्वयन के लिए पुन: PDS की ओर देखता है।

5) अधिनियम लागू करने पर सब्सिडी 1.30 लाख करोड़ रुपए तक पहुंच जाएगी, जो कि राजकोषीय दबाव बनाते हुए घाटे को जन्म देगी।

❐ भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली : उद्देश्य व प्रसार (Public Distribution System in India : Objectives & Expansion)

सार्वजनिक वितरण प्रणाली भारत में सबसे महत्वपूर्ण खाद्य-आधारित सुरक्षा जाल (Food Based Safety Net) रहा है। भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं को सस्ती कीमतों पर आवश्यक उपभोग वस्तुएं उपलब्ध कराना है, ताकि उन्हें इनकी बढ़ती हुई कीमतों के प्रभाव से बचाया जा सके तथा जनसंख्या की न्यूनतम आवश्यक अपभोग स्तर प्राप्त करने में सहायता दी जा सके। इस प्रणाली को चलाने के लिए सरकार व्यापारियों तथा उत्पादकों से वसूली कीमतों पर वस्तुएं खरीदती है। इस प्रकार जो खरीद की जाती है, उसका वितरण उचित दर दुकानों और राशन की दुकानों के माध्यम से किया जाता है। कुछ वसूली प्रतिरोधक भण्डारों के निर्माण के लिए रख ली जाती है। खाद्यान्नों के अलावा सार्वजनिक वितरण प्रणाली का प्रयोग खाद्य तेलों (Edible Oils), चीनी, कोयला, मिट्टी का तेल तथा कपड़े के वितरण के लिए भी किया जाता है। प्रारंभ में इस प्रणाली के अन्तर्गत सम्पूर्ण जनसंख्या को शामिल किया गया है, अर्थात् - इसे किसी वर्ग-विशेष तक सीमित नहीं रखा गया है।

खाद्य सहायता के बढ़ते हुए भार को कम करने के उद्देश्य से तथा उसे उन लाखों तक बेहतर तरीके से पहुंचाने के लिए जिन्हें उसकी अधिक आवश्यकता है, भारत सरकार ने 1 जून, 1997 से लक्षित सार्वजनिक वितरण योजना (Targeted Public Distribution Scheme) लागू की। इस योजना के अधीन राज्य सरकारों से गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का पता लगाने के लिए कहा गया। इस संदर्भ में सरकार ने 2 वर्गों बनाई है - पहला, गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले (Below Poverty Line या BPL)। दूसरा, गरीबी रेखा के ऊपर रहने वाले (Above Poverty Line या APL)। इसके अलावा दिसंबर, 2000 में एक और वर्ग निश्चित किया गया, जिसे पूर्व के 2 वर्गों से भी कम कीमत पर खाद्यान्न उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया है। इसी निर्धनतम वर्ग के लिए सरकार ने अन्त्योदय अन्न योजना को लागू की। इस योजना के तहत् निर्धनतम 2.34 करोड़ परिवारों को गेहूं 2 रुपए प्रति किलो और चावल 3 रुपए प्रति किलो की कीमत पर दिया जाता है।

❐ सार्वजनिक वितरण प्रणाली की समीक्षा (Review of Public Distribution System)

तत्कालीन प्रधानमंत्री ने वर्ष 2011 की रिपोर्ट '**हंगामा**' जारी करते हेतु कहते हैं कि भारत में 42 प्रतिशत बच्चे कुपोषित हैं। तेन्दुलकर/एस. आर. हाशिम/रंगराजन/लकड़वाला सभी ने थोड़ी-बहुत मत भिन्नता के साथ भारत की 30 से 40 प्रतिशत आबादी को गरीबी रेखा के नीचे बताया है, वहीं विश्व बैंक के अनुमान के अनुसार भारत की 80 प्रतिशत आबादी 1.25 डॉलर प्रतिदिन आय से कम पर जीवन व्यतीत करने को विवश है। इसकी निम्नलिखित आधरों पर आलोचना की गई है -

1) सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर खाद्य सब्सिडी का भार बढ़ गया है।

2) लक्ष्यित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के आगमन के बाद गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का पता लगाना महत्वपूर्ण समस्या बनकर उभरा, जो अब तक भी सही ढंग से नहीं हो पाया है।

3) गरीब परिवारों का निर्धारण सही नहीं हो पाने के कारण गैर-वंचित लोगों तक अधिक लाभ पहुंचा। प्रत्येक राज्य में गरीबी की परिभाषा में अन्तर होने के कारण राज्यवार विषमताओं में वृद्धि हुई।

4) उचित मूल्य की दुकानें भ्रष्टाचार का अड्डा बन गई हैं। ये दुकानें अनाज का रिसाव कर उसे खुले बाजारों में महंगी कीमतों पर बेच देती हैं।

5) 1990 के दशक के बाद निकासी मूल्य (Issue Price) एवं बाजार मूल्य (Market Price) में अन्तर कम होने के कारण सार्वजनिक वितरण प्रणाली से खाद्यान्नों के उठाव में भारी गिरावट हुई है। इस प्रकार यह स्व-लक्ष्यित होने से रह गई है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

सार्वजनिक वितरण प्रणाली विशेष रूप से लक्ष्यित सार्वजनिक वितरण प्रणाली कई आधार पर असफल रही है। साथ ही वास्तविक गरीबों तक पहुंचने में तथा उन्हें उचित कीमतों पर अनाज उपलब्ध कराने में भी असफल रही है। वह खाद्य सहायता का भार कम नहीं कर पाई है। इतना ही नहीं, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के कारण भ्रष्टाचार व गड़बड़ियों में वृद्धि हुई है।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली की आंशिक सफलता एवं वृहद असफलता के **कारणों** को निम्नलिखित तरीके देख सकते हैं –

1) अमीर एवं गैर-वंचित वर्गों का लाभ उठा ले जाना।

2) उचित मूल्यों की दुकानों द्वारा रिसाव।

3) सड़कों व परिवहन व्यवस्था की खस्ता हालत, जिससे सुदूर गांवों में अनाज उपलब्ध कराने की समस्या। उदाहरणार्थ – केरल व आन्ध्र प्रदेश, जो के सर्वाधिक सफल राज्य रहे, में भी सफलता केवल शहरों तक सीमित रही। परिवहन के अभाव में ग्रामीण क्षेत्र अछुते रह गए।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण ने अपनी रिपोर्ट में पाया कि 2004-2005 में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के लिए जारी की गई सब्सिडी 20,400 करोड़ थी, जिसमें से केवल 21,00 करोड़ रुपए **वास्तविक लोगों** तक पहुंचे।

सब्सिडी लाभ	**वर्ग तक पहुंच**
10 प्रतिशत	गरीबों तक पहुंचा
19 प्रतिशत	गैर-गरीबों तक पहुंचा
28 प्रतिशत	सब्सिडी का हिस्सा लागत बढ़ने पर खर्च हो गया
43 प्रतिशत	अवैध वितरण हुआ

4) कई राज्यों में FCI द्वारा निर्धारित निर्गत मूल्य (Issue Price) एवं बाजार मूल्य (Market Price) में निम्न अन्तर होना। NSSO ने अपने एक अध्ययन में पाया कि केरल व तमिलनाडु जैसे राज्यों में जहां निर्गत व बाजार मूल्य में अधिक अन्तर था, वहां सफल हुआ। इसके विपरीत मध्य प्रदेश व बिहार जैसे राज्यों में जहां निर्गत व बाजार मूल्य में कम अन्तर था, वहां सफलता नहीं पाई गई।

5) PDS का वस्तु ढांचा (Item Structure) गरीबों के पक्ष में नहीं है। चीनी, गेहूं, चावल, मिट्टी का तेल के कुल वितरण में भाग 86 प्रतिशत है, जबकि मोटे अनाज (ज्वार, बाजरा आदि) जो कि विशेष रूप से गरीब वर्गों द्वारा उपभोग किए जाने हैं, कुल वितरण में केवल 1 प्रतिशत स्थान रखते हैं। इसी प्रकार मुख्य पोषण स्रोत दालें कुल वितरण में केवल 0.2 प्रतिशत स्थान रखती हैं।

6) PDS द्वारा वितरीत अनाजों की गुणवत्ता सदैव विवादों के घेरे में रही। FCI द्वारा प्रारंभ में तो अनाजों को खुले में सड़ने दिया जाता है, किन्तु बाद में उचित मूल्यों की दुकानों पर भेजा जाता है। इसी संदर्भ में सुप्रीम कोर्ट द्वारा FCI को 2011 में लगाई गई फटकार उल्लेखनीय है, जिसमें सुप्रीम कोर्ट ने सरकार को खुले में पड़ा अनाज बाजार में निर्गत करने के निर्देश दिए।

नि:संदेह सार्वजनिक वितरण प्रणाली अपने उद्देश्यों में पूर्णत: सफल नहीं हो पाई है, किन्तु इसकी एक यह विशेषता भी है कि यह प्रणाली लम्बे समय से गरीबों का सहारा बनी हुई है। प्रोफेसर राजकृष्णा भी इस मत को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि PDS से गरीबी कम हुई है।

❐ PDS की सफलता हेतु सुझाव (Suggestions for the Success of PDS)

PDS की सफलता निम्नलिखित 3 समस्याओं एवं उनके सुलझाव के साथ जुड़ी हुई हैं। इन 3 समस्याओं को हल करके PDS को सफलतारपूर्वक संचालित किया जा सकता है –

1) उचित लाभार्थी की पहचान। 2) अनाज को कैसे पहुंचाया जाए। 3) अनाज का वितरण कैसे हो।

◆ उचित लाभार्थी की पहचान (Problems of Identification)

PDS की सफलता सर्वप्रथम उस वर्ग का पहुंचाना जाना आवश्यक है, जो वास्तव में खाद्य सुरक्षा पाने का हकदार है। इसके लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं –

1) भारत में 350 लाख पेन कार्डधारकों को सीधा गैर-वंचित माना जाए।

2) भारत में **1000 लाख** पंजीकृत वाहन मालिक हैं, इन्हें भी सीधे गैर-वंचित माना जाए।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) जिन लोगों के पास स्व-निवास के अतिरिक्त निवास स्थान हो, उन्हें भी सीधे गैर-वंचित वर्ग माना जाए।

4) उचित मूल्य या अनाज वितरण की दुकानों को इस तरह से तैयार किया जाए कि वहां केवल वंचित व्यक्ति ही पहुंचे। यहां जमैका का दृष्टान्त उल्लेखनीय है जहां उचित मूल्य की दुकानों को प्राथमिक स्वास्थ्य क्लिनिक की तरह तैयार किया गया है, जिससे वहां अमीर लोग आने से कतराते हैं।

5) PDS की वस्तु संरचना इस तरह निर्मित हो, जिससे गरीबों द्वारा उपभोग किए जाने वाले मोटे अनाज (ज्वार, बाजरा आदि) तथा पोषणयुक्त दालों का प्रतिशत अधिक हो।

- **अनाज को कैसे पहुंचाया जाए (Problems of Transportation)**

PDS की सफलता में सुदूर स्थानों तक अनाज को पहुंचाने की भी समस्या महत्वपूर्ण है। इसके लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं -

1) सुदूर गांवों तक पक्की सड़कों एवं परिवहन की पर्याप्त सुविधा हो।

2) FCI गोदामों का पर्याप्त विकेन्द्रीकरण हो, ताकि स्थानीय स्तर पर अतिशीघ्र कम लागत में अनाज की उपलब्धता सुनिश्चित हो सके।

3) चूंकि PDS का एक बड़ा रिसाव ट्रकों के माध्यम से होता है। अत: आवश्यक है कि PDS पहुंचाने वाले वाहनों/ट्रकों को GPS द्वारा जोड़कर पर्याप्त निगरानी रखी जाए।

- **अनाज का वितरण कैसे हो (Problems of Distribution)**

विगत कई वर्षों से सार्वजनिक वितरण प्रणाली के द्वारा खाद्यान्न वितरण का जिम्मा उचित मूल्य की दुकानों के माध्यम से हो रहा है। यह भी PDS के रिसाव का मुख्य स्रोत बनकर उभरी हैं। इस समस्या के निदान हेतु निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं -

1) स्मार्ट कार्ड प्रत्यागम अपनाया जा सकता है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक वंचित व्यक्ति को प्रत्येक माह उसके स्मार्ट कार्ड में अनाज का आवंटन कर दिया जाए, जिसे वह बाजार में कुछ चिह्नित दुकानों से स्वेप कर खाद्यान्न प्राप्त कर सकता है। बाद में उन चिह्नित दुकानों को सरकार भुगतान कर सकती दे। इस क्षेत्र में 2 राज्यों द्वारा किए कार्य उल्लेखनिय हैं -

   a) कर्नाटक की वर्तमान सरकार द्वारा वंचित वर्ग को तय सीमा तक कुछ पूर्व निर्धारित खाद्यान्नों को सुपर मार्केट/मॉल/डिपार्टमेंट स्टोर से खरीद सकता है। यह सुविधा अभी केवल शहरों तक सीमित है।

   b) तमिलनाडु सरकार द्वारा अम्मा केन्टीन चलाया जा रहा है, जहां खाद्यान्न वितरण के अलावा सीधे तोर पर न्यूनतम शुल्क में भोजन उपलब्ध कराया जाता है।

2) उचित मूल्य की वर्तमान दुकानों को भी पूर्णत: कम्प्यूटरीकृत किया जा सकता है, जिससे खाद्यान्नों की आगत (Input) एवं निर्यात (Output) की पारदर्शी बनाया जा सके।

❑ खद्यान्न वितरण बनाम नकद सब्सिडी (Public Distribution v/s Cash Subsidy)

एक नई बहस विगत कई वर्षों से सरकार इस हेतु प्रयासशील है कि भौतिक साधन अन्तरण (Physical Transfer) के स्थान पर नकद अन्तरण (Cash Transfer) किया जाए। भारत सरकार द्वारा शुरू की गई प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण (DBT) के अन्तर्गत परिवार के मुखिया, जो साधारणतया किसी महिला को माना जाएगा, के खाते में सब्सिडी की रकम पहुंचा दी जाएगी। इससे वह बाजार से खाद्यान्न अथवा इच्छित वस्तु खरीद सके। किन्तु प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण को लेकर भी मतभेद हैं -

- **पक्ष में तर्क**

1) सरकार इससे खाद्यान्नों के भण्डारण, परिवहन एवं वितरण की समस्याओं से बच जाएगी तथा इन 3 प्रक्रियाओं के दौरान होने वाले रिसाव भी समाप्त हो जाएगा।

2) हाल के अनेक अध्ययन हमें स्पष्ट करते हैं कि बिना शर्त के नकद अन्तरण का लक्ष्य सही होता है, तो यह घरेलू उपभोग को बढ़ावा दे सकता है और अत्यन्त गरीबों की खाद्य सुरक्षा की समस्याओं को कम कर सकता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

3) नकद अन्तरण के माध्यम से मौजूदा गरीबी निवारण कार्यक्रमों की सफलता दर को बढ़ा सकता है।

4) नकद अन्तरण के माध्यम से वितरण प्रक्रिया से जुड़े सरकारी विभागों की संख्या को कम हो जाएगी, जिससे इनके लीकेज के अवसरों में कमी आ जाएगी। साथ ही सब्सिडी की लागत में भी कमी आएगी।

5) नकद अन्तरण के माध्यम से लाभार्थी को समय पर भुगतान प्राप्त हो जाएगा।

6) गैर-वंचित वर्गों के बाहर हो जाने के कारण सरकार पर सब्सिडी भार भी कम होगा, जो कि राजकोषीय सेहत के लिए अच्छा है।

- **विपक्ष में तर्क**

1) परिवार के मुखिया की पहचान, स्वयं परिवार के मध्य विवाद का कारण है। साथ ही इससे लाभान्वित लोग सब्सिडी का उपयोग गैर-जरूरी वस्तुओं के उपभोग में कर सकते हैं। सर्वप्रथम दिल्ली में जब यह योजना प्रारंभ की गई थी, तब कई ऐसे उदाहरण सामने आए हैं।

2) प्रत्यक्ष सब्सिडी की कोई भी योजना तभी सफल हो सकती है, जब वह लक्षित वर्ग तक पहुंचे। इस संदर्भ में भारत सरकार 'आधार' के माध्यम से बैंक खातों को जोड़ने का प्रयास कर रही है, किन्तु स्वयं यह योजना कई खामियों से गुजर रही है।

3) फर्जी आधार कार्ड एवं आधार कार्ड से जुड़े सुरक्षा सम्बन्धी मुद्दे भी नहीं सुलझाएं जा सके हैं।

4) यह स्पष्ट नहीं है कि क्या DBT भविष्य में PDS को समाप्त कर देगी। PDS की 5 लाख उचित मूल्य दुकानों का भविष्य अस्पष्ट है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि खाद्य सुरक्षा एवं सब्सिडी की सफलता सीधे तौर पर क्रियान्वयन पक्ष से जुड़ी है न कि नीतिगत पक्ष से। खाद्य सब्सिडी की मूल समस्या गरीब एवं वंचित वर्ग के पहचान की है। इस समस्या के सुलझने के साथ अन्य सभी समस्याएं सुलझाई जा सकती हैं। यदि एक बार वंचित वर्ग का निर्धारण हो जाए, तो गैर-वंचित स्वत: बाहर हो जाएंगे, सब्सिडी के बोझ को भी कम किया जा सकेगा एवं रिसाव की मात्रा भी स्वत: कम हो जाएगी। प्रत्यक्ष लाभ अन्तरण खाद्य सब्सिडी के क्षेत्र में इस ओर सराहनीय प्रयास है। यदि इस प्रयास में गरीबी निर्धारण एवं चुनावों पर ध्यान दिया जाए, तो एक क्रांतिकारी कदम होगा।

Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

भारतीय वित्तीय प्रणाली
Indian Finacial System

वित्तीय प्रणाली से आशय बाजर की उन संस्थाओं (Institution) तथा विलेखों (Instruments) से है, जो अर्थव्यवस्था में बचत को बढ़ाने तथा उनके कुशलतम प्रयोग की ओर गतिशीलन में भूमिका अदा करते हैं। वित्तीय बाजार का प्रमुख कार्य वित्त आधिक्य क्षेत्रों से वित्त कमी वाले क्षेत्रों की ओर गतिशीलन सुनिश्चित करना है।

भारतीय मुद्रा बाजार
(Indian Money Market)

मुद्रा बाजार भारतीय अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण भाग है, जहां मौद्रिक संपत्तियां सामान्यत: अल्पकालीन अवधि के लिए व्यवहार में लाई जाती है। मुद्रा बाजार के माध्यम से रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया तरलता (Liquidity) की मात्रा को नियंत्रित करता है। मुद्रा बाजार को 2 भागों में बांटा जा सकता है - संगठित मुद्रा बाजार (Organised) तथा असंगठित मुद्रा बाजार (Un-Organised)। रिजर्व बैंक, वाणिज्यिक बैंक तथा सहकारी बैंक संगठित मुद्रा बाजार के प्रमुख अंग है। इन्हें संगठित मुद्रा बाजार इसलिए कहते हैं, क्योंकि इसके सभी भाग रिजर्व बैंक द्वारा संचालित व नियंत्रित होते हैं। इसके अलावा देशी बैंकर्स, शेट्टी, महाजन आदि असंगठित क्षेत्र के अंग हैं।

भारतीय रिजर्व बैंक
(Reserve Bank of India)

भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना 1 अप्रैल, 1935 को केन्द्रीय बैंक के रूप में हुई थी। प्रारंभ में इसकी लगभग समस्त पूंजी निजी अंशधारियों की थी। निजी अंशधारियों के बैंक के रूप में रिजर्व बैंक ने लगभग 14 वर्षों तक कार्य किया। इस काल में देश तथा विदेश की आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों में परिवर्तन हुए। विश्व के कई राष्ट्र स्वतंत्र हुए तथा वहां के केन्द्रीय बैंकों का राष्ट्रीयकरण हुआ। भारत को भी 15 अगस्त, 1947 में स्वतंत्रता प्राप्त हुई। इस बदले हुए परिदृश्य में रिजर्व बैंक के स्वामित्व का प्रश्न एक बार पुन: उठाया गया और 1 जनवरी, 1949 को इसका राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। अब रिजर्व बैंक पर सरकार का स्वामित्व हो गया। रिजर्व बैंक में सामान्य प्रबंधन निर्देशन कार्य 20 सदस्यों की एक केंद्रीय संचालकमण्डल (Central Board of Directors) द्वारा किया जाता है। इसका मुख्यालय मुम्बई में है।

केंद्रीय संचालक मण्डल

01 गर्वनर	04 डिप्टी गवर्नर	01 वित्त मंत्रालय द्वारा नियुक्त सरकारी अधिकारी	भारत सरकार द्वारा मनोनित 10 अन्य संचालक, जो उद्योग, व्यापार, सहकारिता आदि विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ होते हैं	04 निदेशक स्थानीय बोर्ड से RBI के 04 स्थानीय बोर्ड
- प्रथम गवर्नर सर ओसबोर्न स्मिथ - स्वतंत्रता के समय सी. डी. देशमुख - वर्तमान रघुराम राजन		(सामान्यत: वित्त सचिव)		- मुम्बई - कलकत्ता - चेन्नई - नई दिल्ली

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

यहां उल्लेखनीय है कि भारतीय रिजर्व बैंक ने 1947 में देश के विभाजन के बाद भी जून 1948 तक पाकिस्तान के सेन्ट्रल बैंक के रूप में भी कार्य किया। **भारतीय रिजर्व बैंक का लेखा वर्ष (Accounting Year) 1 जुलाई से 30 जून तक है।**

❒ RBI के प्रमुख कार्य

रिजर्व बैंक भारत का केन्द्रीय बैंक है, उसके विभिन्न प्रकार के कार्य हैं। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से रिजर्व बैंक के कार्यों को 2 श्रेणियों में बांटा जा सकता है – सामान्य केन्द्रीय बैंकिंग कार्य और विकास संबंधी एवं प्रवर्तन कार्य।

◆ सामान्य केन्द्रीय बैंकिंग कार्य (General Central Banking Functions)

अन्य देशों के केन्द्रीय बैंकों की तरह रिजर्व बैंक निम्नलिखित केन्द्रीय बैंकिंग कार्यों को सम्पन्न करता है –

1) **मुद्रा का निर्गमन (Issue of Currency Notes)** – रिजर्व बैंक को देश में करेंसी नोटों के निर्गमन का एकाधिकार प्राप्त है। करेंसी नोट निकालने का कार्य रिजर्व बैंक का नोट निर्गमन विभाग करता है। इस कार्य के द्वारा रिजर्व बैंक के हाथ में देश की अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने की महत्वपूर्ण शक्ति है। रिजर्व बैंक 2 रुपए से लेकर 1000 रुपए तक के नोटों का निर्गमन करता है। उल्लेखनीय है कि 1 रुपए के नोट (जिसका निर्गमन बंद कर दिया गया है) वित्त मंत्रालय द्वारा निर्गमित होते हैं, जिस पर वित्त सचिव के हस्ताक्षर होते हैं तथा सभी सिक्के भारत सरकार द्वारा निर्गमित होते हैं, परंतु इन्हें चलन में रिजर्व बैंक द्वारा डाला जाता है। वर्तमान समय में भारतीय रिजर्व बैंक करेन्सी नोटों को जारी करने के लिए नोट प्रचालन की **न्यूनतम आरक्षित पद्धति (Minimum Reserve System)** का अनुसरण करता है। इस पद्धति के अंतर्गत रिजर्व बैंक के पास स्वर्ण एवं विदेशी ऋण पत्र कुल मिलाकर किसी भी समय 200 करोड़ रुपए के मूल्य से कम नहीं होने चाहिए, जिसमें कम से कम 115 करोड़ रुपए सोने के सिक्के या धातु के रूप में तथा 85 करोड़ रुपए विदेशी मुद्रा या विदेशी प्रतिभूति के रूप में रखना अनिवार्य होगा। यह पद्धति रिजर्व बैंक ने अक्टूबर 1957 से अपनाई।

2) **सरकार के बैंकर के रूप में कार्य (Banker to the Government)** – रिजर्व बैंक का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के बैंकर व सलाहकार का है। वह केंद्र सरकार को अल्पकालीन ऋण प्रदान करती है, जिससे सरकार अपने सार्वजनिक व्यय तथा सार्वजनिक प्राप्ति के बीच अस्थायी घाटे को पूरा कर सके। यह भारत सरकार तथा राज्य सरकरों के लिए विदेशी विनिमय का प्रबंध करती है। वहीं दूसरी ओर यह सरकार को आर्थिक तथा मौद्रिक नीति के संबंध में सलाह भी देती है।

3) **बैंकों के बैंक के रूप में कार्य (Banker's Bank)** – देश की साख तथा बैंकिंग व्यवस्था पर नियंत्रण रखने की दृष्टि से रिजर्व बैंक को मुद्रा बाजार के विभिन्न अंगों पर अधिकार प्राप्त है। वह व्यापारिक बैंकों का अंतिम ऋणदाता है। बैंकों को उस समय ऋण देना या तरलता की आपूर्ति करना, जिस समय उन्हें बाह्य स्रोतों से ऋण आसानी से न मिल सके। इसके अलावा वह सभी बैंकिंग कंपनियों का निरीक्षण करता है तथा नई बैंकिंग कंपनी की स्थापना हेतु लाइसेंस देता है।

4) **विदेशी विनिमय का नियंत्रण (Regulation of Foreign Exchange)** – भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम की धारा 40 के अन्तर्गत रिजर्व बैंक का उत्तरदायित्व है कि वह विदेशी विनिमय दर को स्थिर रखे। इस दृष्टि से वह देश के विदेशी विनिमय भण्डार के परिरक्षक (Custodin) के रूप में कार्य करता है तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के सभी सदस्य देशों की मुद्राओं का क्रय-विक्रय करता है। मुद्राओं का क्रय-विक्रय करता है। वर्तमान में विदेशी विनिमय का नियमन विदेशी विनिमय प्रबंध अधिनियम (FEMA) द्वारा किया जाता है। इस अधिनियम का उद्देश्य विदेशी विनिमय का 'नियंत्रण' न करके केवल उसका 'प्रबंधन' करना है।

5) **कृषि साख की व्यवस्था करना (Agricultural Finance)** – कृषि साख की व्यवस्था करने के लिए रिजर्व बैंक ने एक कृषि साख विभाग की स्थापना की है। इस विभाग के 2 कार्य निश्चित किए गए थे –

a) कृषि साख से संबंधित सभी समस्याओं के अध्ययन के लिए विशेषज्ञों की व्यवस्था करना तथा केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, सहकारी बैंकों एवं अन्य बैंकिंग संस्थाओं को उनकी सलाह एवं सेवाएं उपलब्ध करना।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

b) कृषि साख से संबंधित सभी वित्तीय संगठनों एवं बैंकों के मध्य तालमेल बैठाना।

12 जुलाई, 1982 को स्थापित कृषि एवं ग्रामीण विकास के राष्ट्रीय बैंक (नाबार्ड) ने रिजर्व बैंक से कृषि वित्त संबंधी कार्य ले लिया है।

6) **समाशोधन गृह (Clearing House)** - रिजर्व बैंक बैंकों को समाशोधन गृह (Clearing House) की सुविधा प्रदान करता है। यह कार्य करके रिजर्व बैंक सदस्य बैंकों में रुपए के स्थानान्तरण को सुविधाजनक बनाता है।

7) **औद्योगिक वित्त की व्यवस्था में सहायता करना (Industrial Finance)** - रिजर्व बैंक ने औद्योगिक वित्त निगम तथा राज्य वित्त निगमों के बड़ी मात्रा में अंश खरीद रखे हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर दीर्घकालीन व मध्यमकालीन ऋण भी प्रदान करता है।

8) **आर्थिक आंकड़ों का संकलन एवं प्रकाशन (Collection & Publication of Statistics)** - रिजर्व बैंक मुद्रा, साख, बैंकिंग, वित्त, कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन आदि से संबंधित आंकड़े एकत्रित करता है और उन्हें प्रकाशित करता है। ये आंकड़े देश की विभिन्न आर्थिक समस्याओं को समझने में सहायता देते हैं।

9) अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष में भारत सरकार का प्रतिनिधित्व करना।

10) **वित्त बाजार का विनियमन एवं साख नियंत्रण (मौद्रिक नीति)** - अर्थव्यवस्था में तरलता समायोजन या साख नियंत्रण RBI का सबसे प्रमुख कार्य माना जाता है। साख नियंत्रण के द्वारा रिजर्व बैंक मौद्रिक नीति के 3 उद्देश्यों - विनिमय स्थिरता, कीमत स्थिरता और आर्थिक स्थिरता की पूर्ति करता है। इसके लिए रिजर्व बैंक बैंक दर नीति, खुले बाजारों की क्रियाओं, व्यापारिक बैंकों के नकद कोषों में परिवर्तन, प्रत्यक्ष कार्यवाही, साख की राशनिंग, नैतिक प्रोत्साहन आदि तरीको द्वारा साख नियंत्रण करता है।

11) **विकास संबंधी एवं प्रवर्तन कार्य (Development & Promotional Functions) -** स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में आर्थिक विकास के प्रति चेतना पैदा हुई और आर्थिक आयोजन प्रारंभ हुआ। राष्ट्रीय स्तर पर इस तरह आर्थिक विकास का महत्व बढ़ने पर रिजर्व बैंक के कार्यों में लगातार विस्तार हुआ। अब इस समय बहुत सारे ऐसे विकास संबंधी एवं प्रवर्तन कार्य करता है, जो पहले केन्द्रीय बैंक के कार्य क्षेत्र के बाहर माने जाते थे। तात्पर्य यह है कि रिजर्व बैंक के कार्य मुद्रा बाजार पर प्रतिबंधात्मक नियंत्रण तक सीमित नहीं है। अब वह बचतों को बैंकों व दूसरी वित्तीय संस्थाओं द्वारा उत्पादन कार्यों के लिए उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक प्रयास करता है। इस संदर्भ में रिजर्व बैंक ने 1962 में जमा बीमा निगम (Deposit Insurance Corporation) की स्थापना में पहल की। इसके अलावा बचतों को प्रोत्साहन देने के लिए रिजर्व बैंक के प्रयत्न व सक्रिय भागीदारी से 1964 में यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया की स्थापना हुई थी।

संस्थागत कृषि साख की सुविधाओं का विस्तार करना, रिजर्व बैंक का प्रारंभ से महत्वपूर्ण कार्य रहा है। अल्पकालीन साख की व्यवस्था के लिए सहकारी समितियों के विकास के अलावा दीर्घकालीन कृषि वित्त की व्यवस्था के लिए इसने 1963 में कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम (Agricultural Refinance & Development Corporation) की स्थापना की। आगे चलकर इसका विलय नाबार्ड में हो गया। इसके अलावा रिजर्व बैंक ने संस्थागत औद्योगिक वित्त की व्यवस्था करने के उद्देश्य भारतीय औद्योगिक वित्त निगम (Industrial Finance Corporation of India) और राज्य वित्त निगमों (State Finance Corporation) की स्थापना में महत्वपूर्ण सहायता प्रदान की है। भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (Industrial Development Bank of India) की स्थापना रिजर्व बैंक की सहायक संस्था के रूप में हुई थी। आगे चलकर यह स्वायत संस्था बन गई तथा इसका स्वामित्व भारत सरकार के हाथ मे चला गया। नाबार्ड की स्थापना में आधी अंश पूंजी रिजर्व बैंक ने ही प्रदान की थी। इस प्रकार आर्थिक विकास के संदर्भ में रिजर्व बैंक के कार्य का महत्व बढ़ गया है। अब वह भारत सरकार को वित्तीय मामलों के अलावा सामान्य आर्थिक मसलों पर भी उपयोगी सलाह देता है। इस तरह उसकी विकास आयोजन के संचालन में उपयोगी भूमिका है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

मौद्रिक नीति व साख नियंत्रण
Monetary Policy & Credit Conrol

किसी भी राष्ट्र में जनता के मध्य किए जाने वाले परस्पर विनिमय व्यवहार मुद्रा के माध्यम से होते हैं। मुद्रा की अनियंत्रित मात्रा अथवा उसमें होने वाले उतार-चढ़ाव अर्थव्यवस्था में अनिश्चितता लाते हैं। इसी समस्या के समाधान के लिए केन्द्रीय बैंक द्वारा मौद्रिक नीति का निर्माण किया जाता है। केन्द्रीय बैंक द्वारा अर्थव्यवस्था में मुद्रा की मात्रा के प्रसार एवं संकुचन के प्रबंधन को मौद्रिक नीति कहा जाता है। मौद्रिक नीति का उद्देश्य देश की स्थिरता को बनाए रखते हुए आर्थिक विकास करना होता है। इसके अलावा इसके निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं -

1) अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत होने वाले असंतुलन एवं उतार-चढ़ाव से उत्पन्न स्थिति से निपटने के लिए, मुद्रा की मात्रा को इस प्रकार नियंत्रित करना होता है कि मुद्रा की पूर्ति सही बनी रहे। साथ ही अर्थव्यवस्था में भी संतुलन व स्थिरता बनी रहे।
2) विनियम दरों में स्थिरता लाना।
3) मुद्रास्फीति को नियंत्रित करना।
4) विकास कार्यों के लिए साख का विस्तार करते हुए योजनाओं की प्राथमिकता के अनुरूप साख की दिशा को निर्धारित करना।
5) राष्ट्रीय आय तथा प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि करते हुए आर्थिक विकास की गति को तेज करना।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए रिजर्व बैंक 2 प्रकार के साधनों का प्रयोग करती है, जो निम्नलिखित हैं -

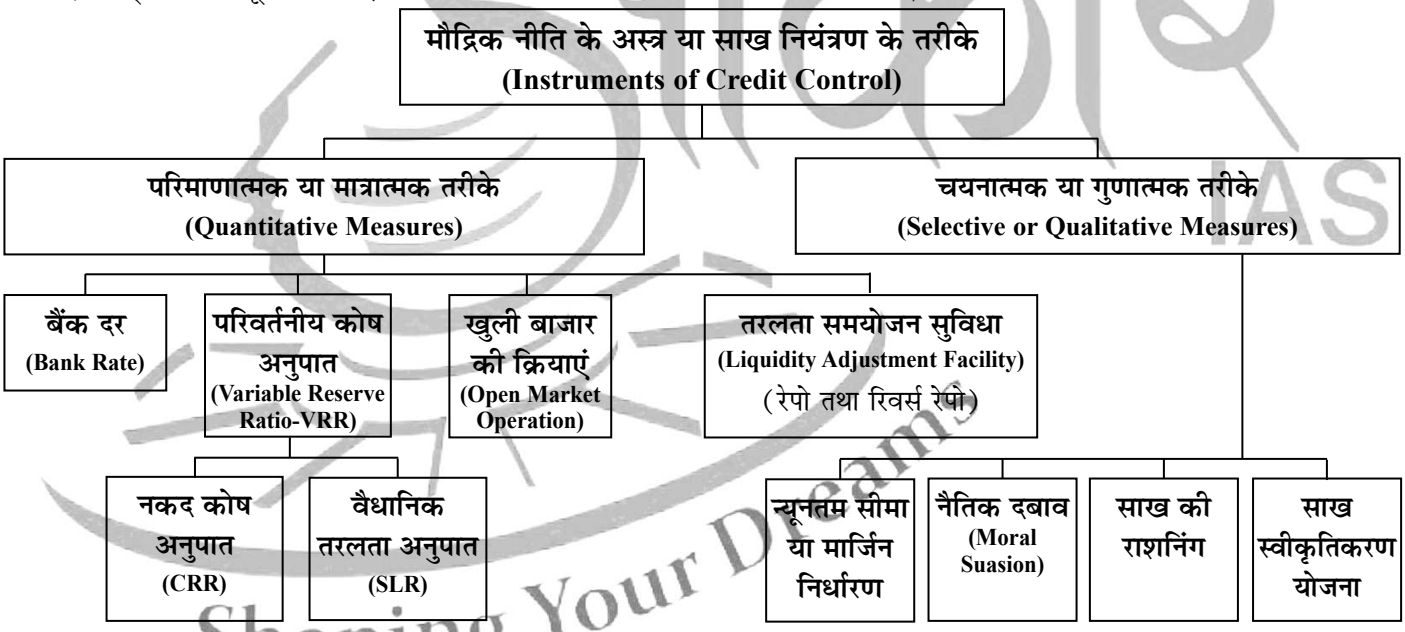

❐ परिमाणात्मक या मात्रात्मक तरीके (Quantitative Measures)

इन तरीकों के द्वारा रिजर्व बैंक साख की मात्रा को प्रभावित करता है।

1) **बैंक दर (Bank Rate)** - बैंक दर वह ब्याज दर है, जिस पर केन्द्रीय बैंक वाणिज्यिक बैंकों को ऋण उपलब्ध कराता है। बैंक दर जितना आधिक होगा, वाणिज्यिक बैंकों की साख-सृजन क्षमता उतनी ही कम होगी। यदि केन्द्रीय बैंक देश में मुद्रा की पूर्ति बढ़ाना चाहता है, तो बैंक दर को कम देता है। बैंक दर को कम करने पर वाणिज्यिक बैंकों को कम ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध होगा। परिणामस्वरूप वे औद्योगिक तथा अन्य व्यापारिक कार्यों के अधिक ऋण उपलब्ध करा सकेंगे, जिससे आर्थिक विकास को प्रोत्साहन मिलेगा।
2) **नकद कोष अनुपात (Cash Reserve Ratio)** - प्रत्येक अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों को अपनी जमा का निश्चित अंश भारतीय रिजर्व बैंक के पास नकद रूप में रखना अनिवार्य होता है। इस अंश का निर्धारण भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किया जाता है। नकद आरक्षित अनुपात जितना आधिक होगा, वाणिज्यिक बैंकों की साख-सृजन क्षमता उतनी ही कम होगी। साथ ही जब रिजर्व बैंक को मुद्रा प्रसार करना होता है, तो नकद आरक्षित अनुपात में कमी कर देता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) **वैधानिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidity Ratio)** - सभी वाणिज्यिक बैंकों को अपनी सम्पत्ति का एक निश्चित अंश (CRR के अतिरिक्त) नकद, स्वर्ण, विदेशी मुद्रा या स्वीकृत प्रतिभूतियों में रखना अनिवार्य है। 2007 को जारी एक अध्यादेश के द्वारा SLR की न्यूनतम सीमा (25 प्रतिशत) को समाप्त कर दिया गया है।

4) **खुले बाजार की क्रियाएं (Open Market Operation)** - खुले बाजार की क्रिया के अन्तर्गत रिजर्व बैंक अर्थव्यवस्था में मुद्रा की पूर्ति को नियंत्रित करने के लिए बाजार से सरकारी प्रतिभूतियों पर क्रय-विक्रय करता है। रिजर्व बैंक द्वारा प्रतिभूतियों के विक्रय का अर्थ है - अर्थव्यवस्था से मुद्रा निकालना, जबकि क्रय का अर्थ है - अर्थव्यवस्था में मुद्रा डालना।

5) **तरलता समायोजन सुविधा (Liquidity Adjustment Facility)** - 1990 के दशक के दौरान तथा उसके बाद विश्वभर में व्यापक पैमाने पर वित्तीय उदारीकरण किया गया, जिसके परिणामस्वरूप भारत को मौद्रिक नीति के परिचालन कार्य-प्रणाली (Operating Procedures) में व्यापक फेर-बदल की आवश्यकता महसूस हुई। बढ़ते हुए पैमाने पर अर्थव्यवस्था के बाजार उन्मुख हो जाने के कारण रिजर्व बैंक के लिए आवश्यक हो गया कि वह मौद्रिक नीति के प्रत्यक्ष साधनों की अपेक्षा अप्रत्यक्ष साधनों पर ध्यान केन्द्रित करे। इसके लिए रिजर्व बैंक ने तरलता समायोजन सुविधा के अन्तर्गत रेपो तथा रिवर्स रेपो को साधन के रूप में अपनाया। ये अर्थव्यवस्था की मौद्रिक तरलता को अल्पकाल के लिए अप्रत्यक्ष रूप से नियमित व नियंत्रित करते हैं।

a) **रेपो (Re-Purchase Option - REPO)** - जब कोई इस समझौते या विकल्प के साथ कोई प्रतिभूति किसी को बेचता है कि वह उसे एक निश्चित अवधि के बाद क्रय कर लेगा, तो इसे हम सामान्यत: रेपो कहते हैं।

b) **रिवर्स रेपो (Reverse REPO)** - जब कोई इस समझौते के अन्तर्गत कोई प्रतिभूति क्रय करता है कि एक निश्चित अवधि के बाद उसे बेच देगा, तो उसे रिवर्स रेपो कहते हैं।

इस प्रकार रेपो दर वह है, जिस पर रिजर्व बैंक अर्थव्यवस्था में तरलता की अतिरिक्त मात्रा जारी करता है (बैंकों को अल्पकालीन ऋण देकर)। रिवर्स रेपो दर वह है, जिस पर रिजर्व बैंक अर्थव्यवस्था से तरलता वापस लेता है (बैंकों से अल्पकालीन ऋण लेकर)। रेपो रेट के बढ़ने का मतलब है कि अब वाणिज्यिक बैंकों को अपनी प्रतिभूतियों के बदले जो राशि प्राप्त होगी, उस पर उसे अपेक्षाकृत अधिक ब्याज देना होगा। इसके कारण बैंकों के वाणिज्यिक ऋण महंगे होंगे और उधार लेने की प्रवृत्ति हतोत्साहित होगी। इसी प्रकार रिवर्स रेपो रेट बढ़ाकर रिजर्व बैंक अपने द्वारा जारी प्रतिभूतियों पर अधिक ब्याज प्रदान कर बैंकों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करती है कि वे अपनी अतिरिक्त तरलता का RBI में निवेश करें।

यहां उल्लेखनीय है कि रेपो व खुले बाजार की क्रिया दोनों में ही प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय होता है, परन्तु दोनों में मूल अन्तर यह है कि **खुले बाजार की क्रिया दीर्घकालीन तरलता प्रबंधन** का, जबकि **रेपो अल्पकालीन तरलता प्रबंधन** का तरीका है।

❐ चयनात्मक या गुणात्मक तरीके (Selective or Qualitative Measures)

इसके अन्तर्गत साख की मात्रा या परिमाण की बजाय उसके **प्रवाह** व **उद्देश्य** को नियंत्रित किया जाता है। इसका प्रमुख उद्देश्य व्यापारिक बैंकों द्वारा अवांछित आर्थिक क्रियाओं के लिए साख देने पर रोक लगाना या उन्हें हतोत्साहित करना है।

1) **न्यूनतम सीमा या मार्जिन निर्धारण (Margin Requirements)** - इसके तहत कुछ विशिष्ट प्रतिभूतियों की गारंटी में ऋण देने के संबंध में न्यूनतम मार्जिन निर्धारित करना है। उदाहरणार्थ - कपास के संबंध में मार्जिन 40 प्रतिशत रहे, अर्थात् - कपास के 100 रुपए के स्टॉक पर 60 रुपए ही ऋण दिया जाएगा। मार्जिन दर के निर्धारण के जरिये बैंक ऋण की पुनर्वापसी सुनिश्चत करती है।

2) **नैतिक दबाव (Moral Suasion)** - रिजर्व बैंक नैतिक दबाव के द्वारा भी बैंकों पर प्रभावपूर्ण नियंत्रण स्थापित करती है। सामान्यत: व्यापारिक बैंक उसकी सलाह तथा निर्देश की उपेक्षा नहीं कर सकते, क्योंकि वे जानते हैं कि उनकी सलाह न मानने पर उन्हें हानि हो सकती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) **साख स्वीकृतिकरण योजना (Credit Authorisation Scheme)** - इसके तहत एक निश्चित सीमा के ऊपर किसी एक पार्टी को ऋण देने के पूर्व व्यापारिक बैंक को रिजर्व बैंक से स्वीकृति लेनी होती थी। इसे रिजर्व बैंक ने 1988 में समाप्त कर दिया, परन्तु वित्तीय अनुशासन बनाए रखने के लिए रिजर्व बैंक ने 1988 को एक नई योजना क्रेडिट मॉनिटरिंग अरेन्जमेंट चालू की है। इसके द्वारा रिजर्व बैंक व्यापारिक बैंकों द्वारा दिए जाने वाले ऋणों पर नजर रखती है।

4) **साख की राशनिंग (Rationing of Credit)** - साख का गुणात्मक नियंत्रण करने का एक महत्वपूर्ण तरीका साख की राशनिंग करना है। अंतिम ऋणदाता के रूप में रिजर्व बैंक जब अन्य बैंकों की मांग को पूरा नहीं कर पाता, तो वह उसका राशनिंग कर देता है, अर्थात् - यह निश्चित कर देता है कि प्रत्येक बैंक को कितनी साख दी जाएगी।

5) **प्राथमिकता क्षेत्र का साख नियंत्रण (Credit Control to Priority Sector)** - रिजर्व बैंक के निर्देशानुसार बैंकों को अपनी उधारियों का कम से कम 40 प्रतिशत प्राथमिकता क्षेत्र को, जिसका 18 प्रतिशत भाग कृषि को उपलब्ध करना होता है। जो बैंक इस लक्ष्य को पूरा नहीं कर पाते, उनके विरूद्ध रिजर्व बैंक उचित कार्यवाही भी कर सकता है। विदेशी बैंकों द्वारा प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को 32 प्रतिशत तक का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

❐ बेस रेट (Base Rate)

बैंकों द्वारा दी जानी वाली उधारियों पर ब्याज दरों के मामले में अधिक पारदर्शिता लाने के लिए प्राइम लैण्डिंग रेट (PLR) के स्थान पर नई बैस रेट व्यवस्था अपनाया गया है। प्राइम लैण्डिंग रेट बैंक की मुख्य ब्याज दर होती थी तथा विभिन्न श्रेणियों के ऋणों पर ली जाने वाली ब्याज की वास्तविक दर (PLR) कुछ कम या अधिक भी हो सकती थी। 1 जुलाई, 2010 से प्राइम लैण्डिंग रेट की जगह बेस रेट की संकल्पना को लागू की गई। बेस रेट वह आधारभूत ब्याज दर है, जिसके नीचे अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक किसी भी तरह का ऋण आवंटित नहीं कर सकते हैं। बेस रेट का निर्धारण बैंक स्वयं करते हैं।

❐ सीमांत स्थायी सुविधा दर (Marginal Standing Facility Rate)

यह अल्पकालीन तरलता प्रबंधन के क्षेत्र में नवीन साधन है। इसे सबसे पहले रिजर्व बैंक ने 9 मई, 2011 में घोषित साख नीति में लागू किया था। इसका उद्देश्य 'अन्त:बैंक दरों' (Inter-bank Rates) में एक दिन के भीतर होने वाले उतार-चढ़ाव को रोकना है। इस सुविधा के तहत् वाणिज्यिक बैंक एक रात के लिए अपनी विशुद्ध मांग एवं सावधि दायित्वों (Net Demand and Time Liabilities) के 1 प्रतिशत तक रिजर्व बैंक से ऋण तुरन्त प्राप्त कर सकेंगे। इसकी ब्याज दर रेपो दर से 1 प्रतिशत अधिक होगी।

❐ गैर-निष्पादनीय परिसम्पत्तियां (Non-Performing Assets)

बैंकों द्वारा वितरीत ऐसे सभी ऋण और उस पर देय ब्याज गैर निष्पादनीय परिसम्पत्तियों के रूप में पहचाने जाते हैं, जिनमें किसी वित्तीय वर्ष में मूलधन का भुगतान 90 दिन तथा ब्याज का भुगतान 180 दिन से अधिक दिनों तक रोक लिया जाता है।

❐ मौद्रिक नीति का मूल्यांकन (Evaluation of Monetary Policy)

रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति के 2 प्रमुख उद्देश्य रहे हैं - अर्थव्यवस्था का विस्तार (Expansion of the Economics) एवं मुद्रास्फीति पर नियंत्रण (Control of Inflationary Pressure)। इस प्रकार रिजर्व बैंक को मौद्रिक नीति को विस्तार नियंत्रण की नीति (Policy of Expansion Control) की संज्ञा दी जा सकती है। रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति का मूल्यांकन उपरोक्त दोनों उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही किया जा सकता है। प्रथम उद्देश्य, अर्थव्यवस्था का विस्तार एवं विकास के संबंध में रिजर्व बैंक को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है। रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति को नियोजित आर्थिक विकास की आवश्यकताओं के अनुरूप ही बनाया गया है, जिसके अन्तर्गत कृषि, लघु उद्योग, सहकारी संस्थाओं तथा निर्यात व्यापार आदि प्राथमिक क्षेत्रों को पर्याप्त मात्रा में साख की सुविधा प्रदान की तथा अनेक विशिष्ट वित्तीय संस्थानों की भी स्थापना की। रिजर्व बैंक ने आर्थिक विकास की दिशा में बैंकिंग सुविधा का विस्तार करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की है।

रिजर्व बैंक की मौद्रिक नीति का द्वितीय उद्देश्य मुद्रास्फीति पर नियंत्रण करना है। इस संबंध में रिजर्व बैंक के सामान्य एवं चयनात्मक साख नियंत्रण के साधन काफी प्रभावशील रहे हैं, फिर भी रिजर्व बैंक अपनी साख नियंत्रण की नीति में असफल रहा। इसका

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

प्रमुख कारण यह है कि हमारे देश में विकसित एवं संगठित मुद्रा बाजार का अभाव है। रिजर्व बैंक का मुद्रा बाजार के परम्परागत देशी अंग, अर्थात् - साहूकार, महाजन तथा देशी बैंकरों से प्रत्यक्ष संबंध का अभाव है। अतः साख नियंत्रण नीति मुद्रा बाजार के संगठित भाग को प्रभावित नहीं करती है। इसके अलावा साख नियंत्रण नीति की असफलता के लिए देश में कालेधन की समानान्तर अर्थव्यवस्था का कार्यरत होना भी है। एक अनुमान के अनुसार मौद्रिक साधनों का एक तिहाई (1/3) भाग कालेधन के रूप में है, जो साख नियोजन के क्षेत्रों में बाधा उपस्थित करता है।

वाणिज्यिक बैंक तथा वित्तीय संस्थाएं
Commercial Bank & Financial Institution

वाणिज्यिक बैंक एक वित्तीय संस्था है, जो मुद्रा और साख (Credit) में व्यापार करती है। वह मुद्रा के रूप में लोगों से जमा स्वीकार करती है तथा आवश्यकता पड़ने पर उद्यमियों तथा साहसियों को उधार देती है, बल्कि इससे भी अधिक महत्वपूर्ण कार्य साख सृजन करती है। इनका नियमन **भारतीय बैंक विनियम अधिनियम 1949** द्वारा किया जाता है।

❒ वाणिज्यिक बैंकों का वर्गीकरण

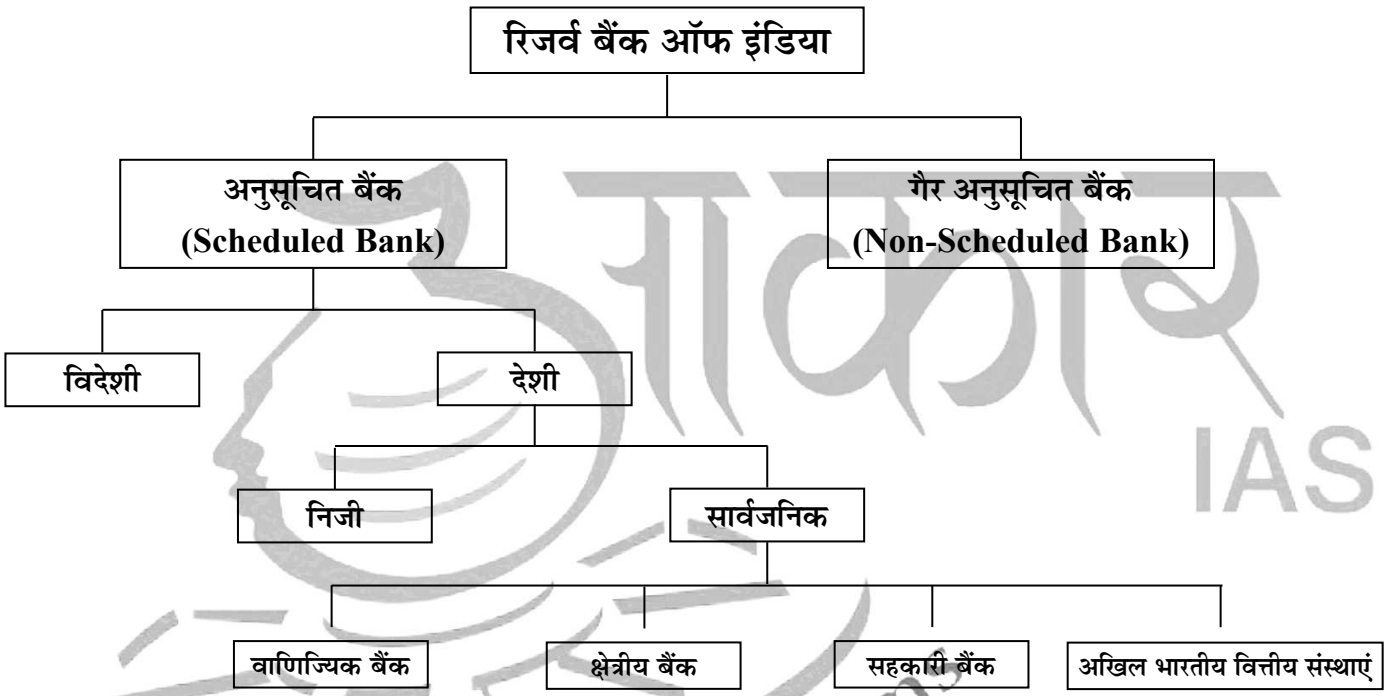

- **अनुसूचित बैंक (Scheduled Bank)**

अनुसूचित बैंक वे बैंक होते हैं, जिनका नाम रिजर्व बैंक अधिनिमय 1934 की दूसरी अनुसूची में सम्मिलित हो। अनुसूचित बैंक का दर्जा प्राप्त करने के लिए बैंकों को निम्नलिखित शर्तें पूरी करनी होती है -

1) इनकी प्रदत्त पूंजी तथा आरक्षित कोष का योग कम से कम 5 लाख रुपए के बराबर हो।
2) रिजर्व बैंक के निर्देशानुसार अपनी जमा राशि का निर्धारित प्रतिशत नकद आरक्षित कोष (CRR) के रूप में रिजर्व बैंक के पास रखे।
3) भारतीय रिजर्व बैंक को इस बात से पूरी संतुष्टी हो की बैंकों द्वारा ऐसा कोई कार्य नहीं किया जाएगा, जिससे जमाकर्ताओं का अहित हो।

- **गैर अनुसूचित बैंक (Non-Scheduled Bank)**

जो बैंक अनुसूचित नहीं होते हैं, वे गैर अनुसूचित कहलाते हैं। इस प्रकार के बैंक की संख्या में निरन्तर कमी हो रही है। इन बैंकों को भी सांविधिक नकद कोष शर्तों को मानना पड़ता है, लेकिन इस कोष को ये बैंक रिजर्व बैंक के पास रखने को बाध्य नहीं हैं। ये

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

बैंक सामान्य कार्य उद्देश्यों हेतु रिजर्व बैंक से उधार लेने के अधिकारी नहीं होते हैं, किन्तु असामान्य परिस्थितियों में ये रिजर्व बैंक से संपर्क करके उधार प्राप्त कर सकते हैं।

सार्वजनिक वाणिज्यिक बैंक

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	19 राष्ट्रीकृत बैंक + आई. डी. बी. आई. बैंक	महिला बैंक

1) **स्टेट बैंक ऑफ इंडिया** – भारतीय स्टेट बैंक का गठन 1 जुलाई, 1955 को इम्पीरियल बैंक के राष्ट्रीकरण के फलस्वरूप हुआ। साथ ही अन्य 7 सहयोगी बैंकों को इसके अनुषंगी बैंक के रूप में बदल दिया, जिन्हें स्टेट बैंक समूह कहा जाता है।

1) स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर। **2)** स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद। **3)** स्टेट बैंक ऑफ मैसूर।
4) स्टेट बैंक ऑफ पटियाला। **5)** स्टेट बैंक ऑफ ट्रावनकोर। **6)** स्टेट बैंक ऑफ सौराष्ट्र।
7) स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर।

उपर्युक्त 7 बैंकों में स्टेट बैंक ऑफ **सौराष्ट्र** का जुलाई, 2008 में तथा स्टेट बैंक ऑफ **इन्दौर** का जून, 2009 में भारतीय स्टेट बैंक में विलय कर दिया गया। फलस्वरूप भारतीय स्टेट बैंक के सहयोगी बैंकों की संख्या 5 रह गई है। भारतीय स्टेट बैंक का प्रबंधन एक 20 सदस्यीय केंद्रीय संचालक मण्डल द्वारा किया जाता है, जिसमें 1 अध्यक्ष, 2 प्रबंध निदेशक तथा 17 संचालक होते हैं। इनकी नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है। भारतीय स्टेट बैंक का प्रधान कार्यालय मुम्बई में है। इसे राष्ट्रीकृत बैंकों की श्रेणी में नहीं रखा जाता है। यह बैंक इस समय सबसे अधिक गैर निष्पादक संपत्तियों (NPA) वाला बैंक है। स्टेट बैंक ऑफ इंडिया बिल 2010 के अनुसार स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में सरकार की न्यूनतम वैधानिक धारिता 51 प्रतिशत होगी, लेकिन वर्तमान में सरकार की शेयरधारिता 59.41 प्रतिशत है।

2) **19 राष्ट्रीकृत बैंक** – बैंकों को और अधिक समाजोपयोगी बनाने के उद्देश्य से देश के 14 बड़े व्यवसायिक बैंकों का 19 जुलाई, 1969 को राष्ट्रीकरण कर दिया गया।

1) सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया। **2)** बैंक ऑफ इंडिया। **3)** पंजाब नेशनल बैंक।
4) केनरा बैंक। **5)** यूनाइटेड कमर्शियल बैंक। **6)** सिंडीकेट बैंक।
7) बैंक ऑफ बड़ौदा। **8)** यूनाइटेट बैंक ऑफ इंडिया। **9)** यूनियन बैंक ऑफ इंडिया।
10) देना बैंक। **11)** इलाहबाद बैंक। **12)** इंडियन बैंक।
13) इंडियन ओवरसीज बैंक। **14)** बैंक ऑफ महाराष्ट्र।

1 दशक पश्चात् 15 अप्रैल, 1980 को पुन: 6 निजी बैंकों का राष्ट्रीकरण किया गया।

1) आन्ध्रा बैंक। **2)** पंजाब एण्ड सिंध बैंक। **3)** न्यू बैंक ऑफ इंडिया।
4) विजया बैंक। **5)** कॉरपोरेशन बैंक। **6)** ऑरिएण्टल बैंक ऑफ कॉमर्स।

4 सितम्बर, 1993 को सरकार ने न्यू बैंक ऑफ इंडिया का पंजाब नेशनल बैंक में विलय कर लिया। इससे राष्ट्रकृत बैंकों की संख्या 20 से घटकर 19 रह गई।

3) **आई. डी. बी. आई. बैंक** – आई. डी. बी. आई. की स्थापना संसद के अधिनियम द्वारा 1964 में की गई थी, जिसे रिजर्व बैंक ने 2009 में सार्वजनिक बैंक के रूप में घोषित किया।

4) **भारतीय महिला बैंक** – महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक ओर कदम आगे बढ़ाते हुए सरकार ने देश में पहली महिला बैंक की स्थापना **19 नवम्बर, 2013** में की। पाकिस्तान तथा तंजानिया के बाद भारत विश्व का ऐसा तीसरा देश बन गया है, जहां विशिष्ट रूप से महिला बैंक की स्थापना की गई हो। वर्तमान में इसकी अध्यक्ष उषा अनन्तसुब्रमण्यम तथा मुख्यालय नई दिल्ली में है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ क्षेत्रीय बैंक

जिन ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधा उपलब्ध नहीं है, वहां इन सुविधाओं की उलब्धता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई है। इन बैंकों का मूलभूत उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर वर्गों को रियायती दरों पर ऋण उपलब्ध कराना तथा साथ ही इन क्षेत्रों के लोगों की बचतों को जुटाकर उत्पादक कार्यों में लगाना है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना **2 अक्टूबर, 1975** को की गई। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक में केन्द्र सरकार, राज्य सरकार तथा प्रवर्तक बैंक क्रमश: 50:15:35 के अनुपात में पूंजी लगाते हैं। 31 मार्च, 2010 को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कुल संख्या 82 थीं।

❐ सहकारी बैंक

सहकारी बैंक वाणिज्यिक बैंकों से भिन्न होते हैं, किन्तु वे भी बैंकिंग के क्षेत्र में आधारभूत कार्य सम्पन्न करते हैं। वाणिज्यिक बैंकों का गठन संसद द्वारा पारित अधिनियम द्वारा होता है, जबकि सहकारी बैंकों की स्थापना अलग-अलग राज्यों द्वारा बनाई गई सहकारी समिति अधिनियमों द्वारा होता है। वाणिज्यिक बैंकों पर बैंकिंग विनियमन अधिनियम 1949 की सभी धाराएं लागू होती हैं, जबकि सहकारी बैंकों पर इस अधिनियम की कुछ धाराएं ही लागू होती हैं। अत: सहकारी बैंकों पर रिजर्व बैंक का नियंत्रण केवल आंशिक होता है। भारत में सहकारी बैंकों का गठन 3 स्तरों पर होता है –

1) **राज्य स्तर पर** – राज्य सहकारी बैंक संबंधित राज्य में शीर्ष संस्था होती है।

2) **जिला स्तर पर** – केन्द्रीय या जिला सहकारी बैंक कार्य करती है।

3) **ग्राम स्तर पर** – प्राथमिक ऋण समितियां होती हैं।

सहकारी बैंक केवल निर्धारित क्षेत्र में ही अपना कार्य सीमित रखते हैं। उदाहरणार्थ – राज्य सहकारी बैंक, जो कि शीर्ष सहकारी बैंक है, का कार्य क्षेत्र एक राज्य विशेष तथा जिला सहकारी बैंक, किसी एक जिले विशेष में ही कार्य कर सकता है। उल्लेखनीय है कि सहकारी ढांचे के अन्तर्गत केवल राज्य सहकारी बैंकों को ही भारतीय रिजर्व बैंकों के पास पहुंच करने का अधिकार है।

❐ अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाएं

अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं के अन्तर्गत विकास वित्त संस्थाएं तथा निवेश संस्थाएं आती हैं, जो वित्तीय बाजार में प्रमुख भूमिका अदा करती है। आर्थिक समीक्षा 2012-13 के अनुसार नाबार्ड, सिडबी, EXIM बैंक तथा राष्ट्रीय आवास बैंक रिजर्व बैंक द्वारा विनियमित 4 अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाएं हैं।

1) **राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (National Bank for Agriculture and Rural Development Bank)** - नाबार्ड की स्थापना 12 जुलाई, 1982 को की गई। इसका मुख्यालय मुम्बई में है। यह देश में कृषि एवं ग्रामीण विकास हेतु वित्त उपलब्ध कराने वाली शीर्ष संस्था है। इसकी स्थपाना में भारत सरकार व भारतीय रिजर्व बैंक की बराबर पूंजी थी। अक्टूबर, 2010 में रिजर्व बैंक ने अपनी सारी हिस्सेदारी सरकार को बेच दी तथा केवल 1 प्रतिशत हिस्सेदारी अपने पास रखी। अत: वर्तमान में नाबार्ड की इक्विटी में सरकार व रिजर्व बैंक की हिस्सेदारी क्रमश 99 व 1 प्रतिशत है।

नाबार्ड एक शीर्ष संस्था के रूप में अनेक वित्तीय संस्थाओं, जैसे – क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, राज्य सहकारी बैंकों, अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों तथा गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं को पुनर्वित्त सुविधाएं प्रदान करता है।

2) **भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (Small Industries Development Bank of India)** – सिडबी की स्थापना अप्रैल, 1990 में की गई। इसका मुख्यालय लखनऊ में है। यह छोटे स्तर के औद्योगिक इकाइयों की स्थापना, वित्त पोषण तथा विकास हेतु प्रमुख वित्तीय संस्था है।

3) **भारतीय आयत-निर्यात बैंक (Export-Import Bank of India)** – इसकी स्थापना 1 जनवरी, 1982 में की गई। इसका मुख्यालय मुम्बई में है। इसका उद्देश्य निर्यातकों एवं आयातकों को वित्तीय सहायता प्रदान करना है। इसके अलावा इसे उन सभी वित्तीय संस्थाओं के काम का समन्वय करने का कार्य भी सौंपा गया है, जो वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यात एवं आयात के लिए वित्त जुटाते हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

4) **राष्ट्रीय आवास बैंक (National Housing Bank)** – इसकी स्थापना 9 जुलाई, 1988 में की गई। इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। यह भारत में आवासीय वित्त के लिए सर्वोच्च संस्था है।

5) **भारतीय औद्योगिक वित्त निगम लिमिटेड (Industrial Finance Corporation of India Ltd.)** – इसकी स्थापना एक विशेष अधिनियम द्वारा 1948 में की गई। इसका उद्देश्य देश के औद्योगिक प्रतिष्ठानों के लिए मध्यकालीन एवं दीर्घकालीन साख की व्यवस्था करना है।

6) **भारतीय औद्योगिक ऋण तथा निवेश निगम लिमिटेड (Industrial Credit and Investment Corporation of India Ltd. - ICICI)** – इसकी स्थापना जनवरी, 1955 को कंपनी अधिनियम के अन्तर्गत की गई थी। इसका उद्देश्य निजी क्षेत्रों में लघु तथा मध्यम उद्योगों का विकास करना है। वर्तमान में इसका विलय ICICI बैंक में किया जा चुका है।

7) **भारतीय औद्योगिक निवेश बैंक लिमिटेड (Industrial Investment Bank of India Ltd.)** – भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक (IRBI) को पुनर्संरचित कर इसकी स्थापना की गई। उल्लेखनीय है कि भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक (IRBI) की स्थापना 1985 को की गई थी। इसका मुख्यालय कोलकता में है।

8) **भारत में म्यूचुअल फण्ड (Mutual Fund in India)** – म्यूचुअल फण्ड का तात्पर्य ऐसी वित्तीय व्यवस्था से है, जिसमें जनसामान्य के निवेश योग्य धन को ऐच्छिक आधार पर एकत्रित करके विनियोग (Investment) के सर्वोत्तम अवसरों में प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रकार यह एक निवेश वित्तीय मध्यस्थ है, जिसके माध्यम से जनता प्रतिभूति बाजार में भाग लेती है। यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया (UTI) भारत का प्रथम म्यूचुअल फण्ड है। इसकी स्थापना 1964 में की गई थी।

❐ गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाएं (Non-Banking Financial Companies)

रिजर्व बैंक एक्ट के अनुसार NBFCs एक संस्था या कंपनी है, जिसका मुख्य व्यवसाय किसी भी योजना के अन्तर्गत जमा स्वीकार करना तथा उसे किसी अन्य तरीके से उधार देना होता है। इस आधार पर वे सभी निवेश कंपनियां, जो कंपनी एक्ट में पंजीकृत हो, वे सभी NBFCs सम्मिलित हो जाएंगी।

NBFCs प्राय: उन क्षेत्रों के लिए ऋण की व्यवस्था करती है, जहां ऋण अन्तराल विद्यमान है। उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं और मोटर कारों के लिए वित्त पोषण करने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। NBFCs रिजर्व बैंक के नियंत्रण में आते हैं।

❐ भारत में प्रतिभूति-मुद्रण एवं सिक्कों का उत्पादन (Printing of Securities and Minting)

1) **इण्डिया सिक्योरिटी प्रेस (नासिक, महाराष्ट्र)** – नासिक स्थित **भारत प्रतिभूति मुद्राणालय (India Security Press)** में डाक सम्बन्धी लेखन सामग्री, डाक एवं डाक भिन्न टिकटों, अदालती एवं गैर-अदालती स्टाम्पो, बैंकों (RBI & SBI) के चेकों, बॉण्डों, राष्ट्रीय बचत पत्रों, पोस्टल ऑर्डर, पासपोर्ट, इन्दिरा विकास पत्रों, किसान विकास पत्रों आदि के अलावा राज्य सरकारों, सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों, वित्तीय निगमों आदि के प्रतिभूति पत्रों की छपाई की जाती है।

2) **सिक्योरिटी प्रिन्टिंग प्रेस (हैदराबाद)** – इसकी स्थापना दक्षिण राज्यों की डाक लेखन सामग्री की माँगों को पूरा करने व पूरे देश की केन्द्रीय उत्पाद शुल्क स्टाम्प की मांग को पूरा करने के लिए 1982 में की गई थी, ताकि भारत प्रतिभूति मुद्रणालय, नासिक के उत्पादन की अनुपूर्ति की जा सकें।

3) **करेन्सी प्रेस नोट (नासिक, महाराष्ट्र)** – यह 10, 50, 100, 500 तथा 1000 रुपए के बैंक नोट छापती है और उनकी पूर्ति करती है।

4) **बैंक नोट प्रेस (देवास, मध्य प्रदेश)** – यह 20, 50, 100 और 500 रुपए के उच्च मूल्य वर्ग के नोट छापती है। बैंक नोट प्रेस का स्याही का कारखाना प्रतिभूति पत्रों की स्याही का निर्माण भी करता है।

5) **शाहबनी (पं. बंगाल) तथा मैसूर (कर्नाटक) के भारतीय रिजर्व बैंक नोट मुद्रा लिमिटेड** – इन दोनों स्थानों पर दो-दो नए एवं अत्याधुनिक करेन्सी नोट प्रेस स्थापित किए गए हैं, यहां RBI के नियंत्रण में करेन्सी नोट छापे जाते हैं।

6) **सिक्योरिटी पेपर मिल (होशंगाबाद, मध्य प्रदेश)** – बैंक और करेन्सी नोट कागज तथा नॉन-ज्यूडिशियल स्टाम्प पेपर की

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

छपाई में प्रयोग होने वाले कागज का उत्पादन करने के लिए 1967-68 में उक्त मिल चालू की गई थी।

7) **टकसाल (Mints) -** सिक्कों का उत्पादन करने तथा सोने व चाँदी का परख करने और तमगों का उत्पादन करने के लिए भारत सरकार की चार टकसालें मुम्बई, कोलकाता, हैदराबाद तथा नोएडा में स्थित है। **मुम्बई, हैदराबाद तथा कोलकाता** की टकसालें काफी समय पहले क्रमश: 1830, 1903 तथा 1950 में स्थापित की गई थी, जबकि **नोएडा** की टकसाल 1989 में स्थापित की गई थी। मुम्बई तथा कोलकाता की टकसाल में सिक्कों के अलावा विभिन्न प्रकार के पदकों (मेडल) का भी उत्पादन किया जाता है।

❒ बेसल मानक (Basel Standard)

बेसल स्विट्जरलैण्ड का एक शहर है, जहां बैंकिंग व वित्तीय संस्थाओं को अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप देने के संबंध में मानक तय निर्धारित किए गए हैं, जिसे बेसल मानक कहा जाता है। बेसल-I मानक वर्ष 1980 में तय किया गया था, जो बैंकों के लिए न्यूनतम पूंजी अपेक्षा तक सीमित था और मुख्यत: ऋण जोखिम पर केन्द्रित था।

बेसल-II मानकों का निर्धारण जून, 2004 में किया गया था। इसके तहत अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय जोखिमों से निपटने के लिए बैंकों व वित्तीय संस्थाओं को एक निश्चित मात्रा में (9 प्रतिशत) धनराशि को अपने पास सुरक्षित रखने के मानक तय किए गए। भारतीय रिजर्व बैंक के दिशा-निर्देशों के अनुरूप देश में कार्यरत सभी बैंकों ने बेसल-II का अनुपालन कर लिया है।

बेसल-III के अनुसार बैंकों के पास 2.4 लाख करोड़ रुपए होने चाहिए। इसे मार्च, 2018 से लागू होना था, लेकिन अत्यधिक पूंजी के कारण इसे मार्च, 2019 तक लागू करने की संभावना है।

❒ वित्तीय संस्थाओं के लिए पूंजी पर्याप्तता मानक (Capital Adequacy Standard for Financial Institutions)

वाणिज्यिक बैंक, वित्तीय संस्थान और गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां अपनी निजी एवं प्राप्त जमाओं के आधार पर विभिन्न प्रकार ऋण उपलब्ध कराती है या परिसम्पत्तियों को सृजन करती है। इन ऋणों का पुनर्भुगतान न हो पाने या विलम्ब से होने तथा ब्याज की प्राप्ति न हो पाने का जोखिम प्राय: बना रहता है। पिछले वर्षों में भारत ने जिस प्रकार से पूंजी बाजार में ऋण वितरीत किए और मंदी की स्थिति में उन ऋणों की वसूली न हो पाने के कारण अधिकांश बैंकों की लाभप्राप्यता में कमी आई है।

इसी प्रकार दक्षिण कोरिया में वर्ष 1997-98 में आए आर्थिक संकट का एक प्रमुख कारण यह था कि वहां के बैंकों ने जनता से अल्पकालीन ऋण प्राप्त करके उससे सृजित निधियों के आधार पर घरेलू नागरिकों एवं कंपनियों को दीर्घकालीन ऋण वितरीत किए, जिसके फलस्वरूप ये बैंक अपनी देनदारियों को समय से पूरा नहीं कर पाए और अर्थव्यवस्था में आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया।

इसी प्रकार 2008 में भी अमेरिका सहित विश्व के अनेक देशों में आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया था। अत: वैश्विक स्तर पर उत्पन्न होने वाले ऐसे आर्थिक संकटों को रोकने हेतु बैंक ऑफ इंटरनेशल सेटलमेंट द्वारा 1988 में वास्ले समिति का गठन किया गया, जिसने उसी वर्ष पूंजी पर्याप्तता मानक (Concept of Capital Adequacy Standard) की अवधारणआ प्रस्तुत की।

पूंजी पर्याप्तता का आशय ऐसी पूंजी से है, जिसे किसी कंपनी द्वारा अपनी व्यवसायिक परिसम्पत्ति के सृजन के एक निश्चित स्तर तक अपने पास रखना चाहिए। पूंजी पर्याप्तता अनुपात व्यवसाय के उस स्तर को सुनिश्चित करता है, जिसे कोई वाणिज्यिक बैंक या वित्तीय संस्थान या गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनी कर सकती है। उदाहरणार्थ - यदि पूंजी पर्याप्तता अनुपात 8 प्रतिशत है, तो इसका अर्थ यह है कि वित्तीय संस्थान को प्रति 100 रुपए की व्यवसायिक परिसम्पत्ति हेतु 8 रुपए की पूंजी अनिवार्य रूप से अपने पास रखनी चाहिए। भारत में वास्ले समिति के अनुरूप समस्त बैंकों में पूंजी पर्याप्तता मानक वर्ष 1992-93 से लागू करना प्रारंभ कर दिया।

वर्तमान में नरसिंहम समिति (II) सिफारिशों का अनुसरण करते हुए पूंजी पर्याप्तता अनुपात को चरणबद्ध तरीके से तत्कालीन 8 प्रतिशत से बढ़ाकर 10 प्रतिशत करने का निर्णय लिया गया है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

बैंकिंग दरें	
बैंक दर	7.0 प्रतिशत
नकद आरण अनुपात (Cash Reserve Ratio)	4.0 प्रतिशत
सांविधिक तरलता अनुपात (Statutory Liquidty Ratio)	21.0 प्रतिशत
रेपो दर	6.50 प्रतिशत
रिवर्स रेपो दर	6.0 प्रतिशत
बैंकों के लिए मार्जिन स्टैंडिंग फैसिलिटी (MSF) की दर	7.0 प्रतिशत

❐ बैंकिंग सुधार (Banking Reform)

1991 में जब देश गंभीर आर्थिक संकट में फंस गया था, तो व्यापक आर्थिक सुधार करने के संबंध में निर्णय लिया गया। सरकार ने उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की नीति को अपनाया। इन आर्थिक सुधारों से बैंकिंग क्षेत्र भी अछूता नहीं रहा। बैंकिंग क्षेत्र में सुधार तथा वित्तीय प्रणाली के ढांचे के सभी पहलुओं की जांच करने के लिए अगस्त, 1991 में श्री एम. नरसिंहम की अध्यक्षता में भारत सरकार ने समिति बनाई थी। पुनः दिसम्बर, 1997 में नरसिंहम की अध्यक्षता में बैंकिंग सुधार समिति का गठन किया गया था। नरसिंहम समिति ने मजबूत एवं प्रभावी वित्तीय व्यवस्था विकसित करने, बैंकों की गैर निष्पादित परिसम्पत्तियों (NPA) में कमी करने, पूंजी पर्याप्तता अनुपात (CAR) में वृद्धि करने, बैंकों की खराब परिसम्पत्तियों के अधिकरण करने के लिए एसेट रिकन्सट्रक्शन फंड की स्थापना करने आदि की सिफारिशें की थीं।

❐ बैंकिंग नियम (संशोधन) अधिनियम, 2012 (Banking Laws (Amendment) Act., 2012)

18 दिसम्बर, 2012 को संसद ने बैंकिंग नियम (संशोधन) विधेयक पारित कर दिया। यह अधिनियम रिजर्व बैंक के लिए रास्ता खोलता है कि वह नए बैंक लाइसेंस जारी करें तथा बैंकिंग क्षेत्र में और पूंजी निवेश के लिए अवसर प्रदान करता है। नए बैंक लाइसेंस जारी करने के निर्णय से बड़े औद्योगिक घरानों तथा गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों द्वारा बैंकिंग क्षेत्र में प्रवेश करने की आशा है। किन्तु बैंकिंग क्षेत्र में बड़े औद्योगिक घरानों को प्रवेश की अनुमति देना खतरे से खाली नहीं है।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने अपनी रिपोर्ट में भारत को वाणिज्यिक बैंकों में बड़े औद्योगिक घरानों के प्रवेश के प्रति सचेत किया है। उसने यह तर्क दिया है कि इससे होने वाली हानियां, अनुमानित लाभों से कई अधिक होगी। रिपोर्ट में कहा गया है कि प्रवेश की अनुमति देने से पहले यह जरूरी है कि भारत एक व्यापक ढांचे के कार्यान्वयन के लिए स्वयं को तैयार करें तथा उपयुक्त अनुभव प्राप्त करने के बाद ही इस प्रकार का कदम उठाए।

रिजर्व बैंक ने 1 जुलाई, 2013 तक नए बैंकिंग लाइसेंसों के लिए प्रार्थना-पत्र आमंत्रित किए। इस संदर्भ में बड़े औद्योगिक घरानों, जैसे - बिड़ला, अंबानी ग्रुप, लॉर्सन एण्ड टुब्रो तथा बजाज ग्रुप आदि के प्रार्थना-पत्र भी प्राप्त हुए। रिजर्व बैंक ने इन प्रार्थना पत्रों पर निर्णय लेने के लिए भूतपूर्व गवर्नर विमल जालान की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया। समिति ने इन सभी प्रार्थना-पत्रों का अध्ययन करने के बाद 2 नए बैंक लाइसेंस जारी किए - आई. डी. एफ. सी (Infrastructure Development & Finance Corporation) एवं कोलकत्ता में स्थापित माइक्रो ऋणदाता कंपनी बंधन (Bandhan)। इस तरह समिति ने बड़े औद्योगिक घरानों के प्रार्थना-पत्र स्वीकार नहीं किए, जो अपने आप में सही निर्णय है।

❐ वित्तीय समावेशन (Financial Inclusion)

वित्तीय समावेशन से आशय उन लोगों के पहुंच बैंकिंग ढांचे एवं सुविधाओं तक और बैंकिंग ढांचे एवं सुविधाओं की पहुंच उन लोगों तक सुनिश्चित करना है, जो अब तक इसकी पहुंच से बाहर है। इसके लिए 4 सूत्रीय कार्यनीति पर बल दिया जा रहा है -

1) बैंकिंग अवसंरचना में विस्तार करना।
2) वित्तीय उत्पादकों की पेशकश करना।
3) प्रौद्योगिकी का विस्तृत एवं गहन उपयोग।
4) हितधारकों की भागीदारी को सुनश्चित करना।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

पूंजी बाजार एवं वित्तीय संस्थान
Capital Market & Financial Institution

किसी भी देश के आर्थिक विकास में पूंजी बाजार का विशेष महत्व होता है। पूंजी बाजार में विभिन्न संस्थाएं तथा प्रक्रिया होती हैं, जिनके माध्यम से मध्यम अवधि तथा दीर्घावधि की निधियां एकत्र की जाती है। पूंजी बाजार का प्रमुख कार्य उन क्षेत्रों से जहां बचत आधिक्य है, निकालकर उन क्षेत्रों तक पहुंचाना है, जिनमें बचत की मांग है। इस प्रकार पूंजी बाजार अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों से बचत को गतिशील करके उत्पादक क्षेत्रों की ओर निर्देशित करता है।

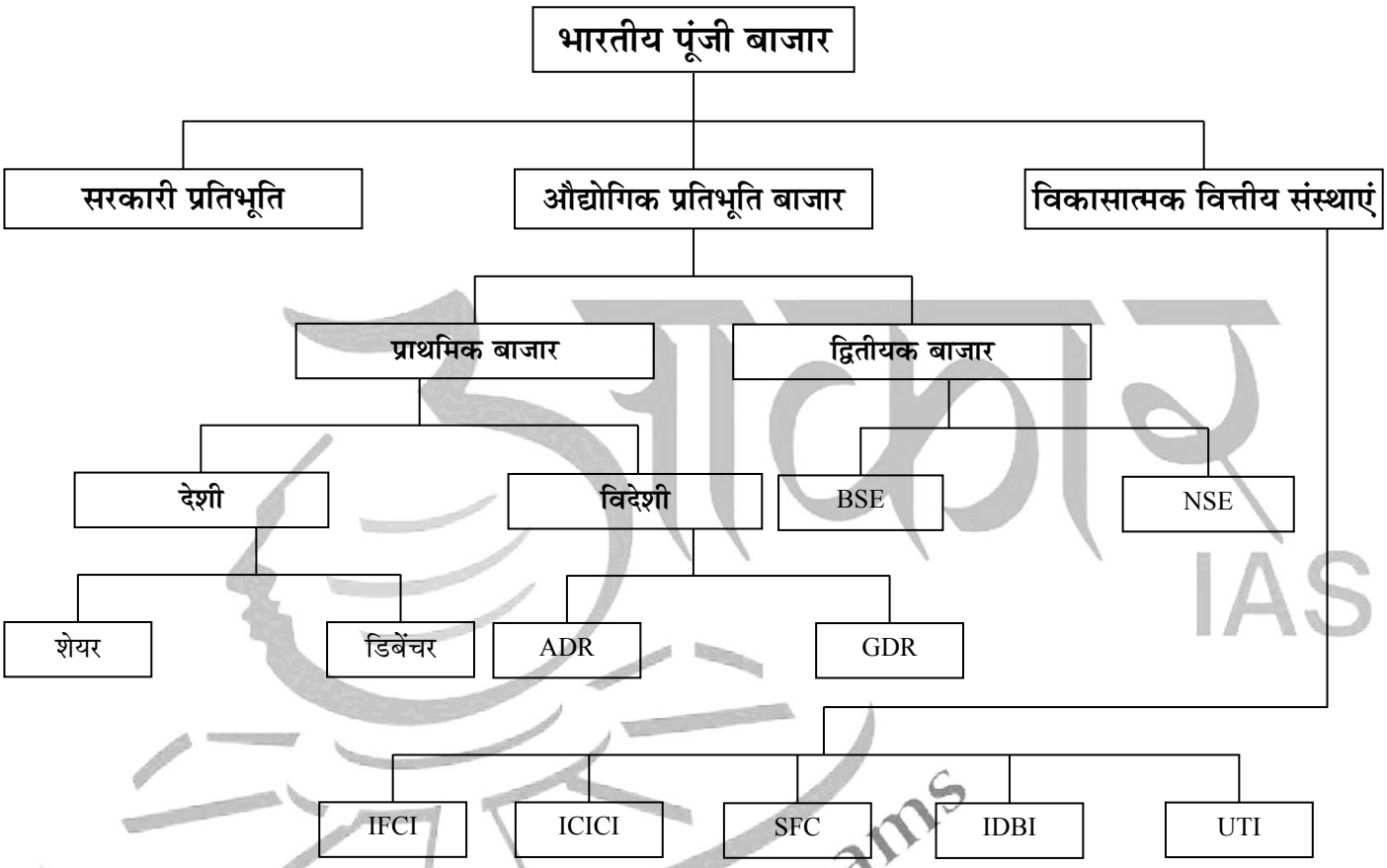

❒ सरकारी प्रतिभूति बाजार

सरकारी प्रतिभूति बाजार में केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों, स्वायत सार्वजनिक संस्थाओं, जैसे - पोर्ट ट्रस्ट, राज्य विद्युत बोर्ड, सार्वजनिक निगम तथा अन्य सरकारी एजेंसियों, जैसे - नाबार्ड, IFCI आदि द्वारा निर्गमित प्रतिभूतियां बेची-खरीदी जाती हैं। ये प्रतिभूतियां अत्यन्त ही सुरक्षित तथा जोखिमरहित होती हैं।

❒ औद्योगिक प्रतिभूति बाजार

औद्योगिक प्रतिभूति बाजार में स्थापित होने वाले नए उद्योगों या पहले से ही स्थापित औद्योगिक उपक्रमों के शेयरों व डिबेंचरों का क्रय-विक्रय किया जाता है। औद्योगिक प्रतिभूति बाजार को 2 भागों में बांटा जा सकता है -

1) **प्राथमिक बाजार** - प्राथमिक बाजार पूंजी बाजार का वह अंग है, जिसमें सभी प्रतिभूतियां पहली बार बाजार में बिकने के लिए आती हैं। इस प्रकार इसमें फण्ड का गतिशीलन सर्वथा नई प्रतिभूतियों के निर्गमन के द्वारा होता है। उल्लेखनीय है कि प्राथमिक बाजार में घरेलू तथा विदेशी क्षेत्र से फण्ड की उगाई हो सकती है। इसमें निर्गमित प्रतिभूतियां शेयर तथा डिबेंचर के रूप में होती है।

2) **द्वितीय बाजार** - यह वह बाजार है, जिसमें पुरानी (पूर्व निर्गमित) प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय होता है। द्वितीयक बाजार के अन्तर्गत स्वीकृति प्राप्त रजिस्टर्ड स्टॉक एक्सचेंज आते हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❒ अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी बाजार से पूंजी की उगाई

1991 में अपनाई गई LPG नीति के बाद भारतीय कंपनियों को अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी बाजार से पूंजी उगाही की अनुमति प्रदान की। विदेशी पूंजी विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (FDI), विदेशी संस्थागत निवेश (FII), ग्लोबल डिपॉजिटरी रिसिप्ट्स (GDR), अमेरिकन डिपॉजिटरी रिसिप्ट्स (ADR) आदि के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

1) **डिपॉजिटरी रिसिप्ट्स** - सभी डिपॉजिटरी रिसिप्ट्स (ADR, GDR) भारतीय कंपनियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्गमित नहीं किए जाते, बल्कि भारतीय कंपनियों द्वारा अधिकृत ओवरसीज डिपॉजिटरी बैंकों (ODB) द्वारा भारतीय कंपनियों के समता अंशों (Equity Shares) की आड़ में विदेशी निवेशकों को निर्गत किए जाते हैं। ये सभी डिपॉजिटरी रिसिप्ट्स हस्तांतरण योग्य होते हैं, अर्थात् इनकी खरीद-बिक्री उस स्टॉक एक्सचेंज में होगी, जिसमें ये सूचीबद्ध होंगे। उल्लेखनीय है कि ADR/GDR को प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के एक भाग के रूप में लिया जाता है, इसलिए यह आवश्यक है कि इनका निर्गमन वर्तमान FDI नीति के अन्तर्गत हो तथा उन्हीं क्षेत्रों में हो, जो वर्तमान FDI नीति अनुमति देती हो।

2) **इंडियन डिपॉजिटरी रिसिप्ट्स (IDR)** - जिस प्रकार भारतीय कंपनियां विदेशी पूंजी बाजार से संसाधान जुटा सकती है, ठीक उसी प्रकार जब विदेशी कंपनियां भारतीय पूंजी बाजार से संसाधन जुटाती है, तो इंडियन डिपॉजिटरी रिसिप्ट्स जारी करती है। इसके लिए उन्हें सेबी से अनुमति लेना होती है।

3) **प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI)** - किसी औद्योगिक इकाई, कंपनी या अन्य व्यवसायों की स्थापना या उनके विस्तार के लिए उस इकाई के हिस्सेदार के रूप में प्रत्यक्ष रूप से जो विदेशी निवेश किया जाता है, उसे प्रत्यक्ष विदेशी निवेश कहते हैं। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को भी 2 भागों में बांटा जा सकता है -

   a) **विलय व अधिग्रहण** - इसमें विदेशी कंपनी कोई नया कारखाने डालने या कारोबार शुरू करने की बजाय पहले से विद्यमान इकाइयों को खरीद लेती है।

   b) **ग्रीन फिल्ड इन्वेस्टमेंट** - इसमें विदेशी कंपनी कोई नया कारखाना डालती है या कारोबार शुरू करती है। यह किसी भी प्रकार के विदेशी निवेश से ज्यादा बेहतर है। इसमें आर्थिक गतिविधियों में तेजी के साथ उत्पादकता में विस्तार होता है और रोजगार की नई संभावनाएं पैदा होती हैं। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के बढ़ने की स्थिति में वित्तीय पूंजी के साथ-साथ विदेशी निवेशक अपने साथ उन्नत प्रौद्योगिकी और बेहतर प्रबंधन एवं विपणन प्रणाली भी लाते हैं। इस कारण अर्थव्यवस्था की कार्य कुशलता व उत्पादकता में वृद्धि के साथ-साथ प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार होता है।

3) **विदेशी संस्थागत निवेश (FII)** - यह निवेश विदेशी निवेशकों द्वारा शेयर बाजार में विभिन्न प्रकार की प्रतिभूतियों में किया जाता है। दूसरे शब्दों में विदेशी निवेशक, जिन्होंने शेयर बाजार के जरिए भारतीय कंपनियों में निवेश के लिए सेबी के पास अपना पंजीकरण करवा रखा है, विदेशी संस्थागत निवेश कहलाते हैं। इसका उद्देश्य मुख्यरूप से लाभ कमाना होता है। लेकिन अस्थायित्व की प्रवृत्ति के कारण इसकी अत्यधिक हिस्सेदारी जोखिमपूर्ण हो सकती है। आर्थिक अस्थिरता या किसी अल्पकालिक संकट की स्थिति में FII की जोरदार वापसी अर्थव्यवस्था को गहरे संकट में फंसा सकती है। इसका कारण यह है कि FII के मूल में त्वरित लाभ प्राप्ति की कामना होती है। जिन क्षेत्रों में लाभ की अधिक संभावना होती है, FII उन्हीं क्षेत्रों की ओर अभिमुख होता है। इसमें शीघ्र पलायन की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। इसीलिए अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य के मददेनजर FDI को FII से बेहतर माना जाता है।

4) **पार्टिसिपेटरी नोट्स (P-Notes)** - FII's के जरिए निवेश की स्थिति में विदेशी निवेशकों को आय के स्रोत के साथ-साथ अपने संदर्भ में विस्तृत जानकारियां उपलब्ध करानी होती हैं। वे अपनी पहचान को छुपाकर नहीं रख सकते। ऐसी स्थिति में जो विदेशी निवेशक अपना नाम-पता और पहचान को गोपनीय रखना चाहते हैं, वे प्रत्यक्ष रूप से खुद शेयर बाजार में निवेश नहीं कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में ऐसे निवेशक FII's से संपर्क करते हैं और FII's उनके बदले निवेश करते हैं। FII's के द्वारा उन विदेशी निवेशकों को एक नोट्स जारी किया जाता है, जिसे पार्टिसिपेटरी नोट्स कहते हैं। ऐसा माना जाता है कि

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

नाम-पता और पहचान को गोपनीय रखे जाने के कारण P-Notes कालेधन का एक महत्वपूर्ण जरिया बन चुके हैं। इसलिए पिछले कुछ समय से सरकार पर लगातार दबाव बना हुआ है कि वह P-Notes के जरिए पोर्टफोलियो निवेश को प्रतिबंधित करें।

❐ स्टॉक एक्सचेंज

स्टॉक एक्सचेंज वह बाजार है, जहां पर विभिन्न प्रकार की औद्योगिक प्रतिभूतियां, विभिन्न निकायों द्वारा जारी किए गए ऋण पत्रों का क्रय-विक्रय होता है। स्टॉक एक्सचेंजों में समस्त लेन-देन उसके अधिकृत सदस्यों द्वारा निश्चित नियमों के अन्तर्गत सम्पन्न होता है। भारत में बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज और राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज महत्वपूर्ण शेयर बाजार है।

बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज (BSE) की स्थापना 1875 में हुई थी। यह एशिया का सबसे पुराना स्टॉक एक्सचेंज है। वर्तमान में इसमें लगभग 5000 भारतीय कंपनियां पंजीकृत हैं। बहुत लम्बे समय तक BSE देश का सबसे बड़ा व प्रभावपूर्ण स्टॉक एक्सचेंज था, उसकी एकाधिकारी स्थिति के कारण पूंजी बाजार का विस्तार तथा विविधीकरण बाधित हो रहा था। इसे दूर करने के लिए फेरवानी कमेटी की सिफारिश पर 1992 में राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज (NSE) की स्थापना की गई।

❐ भारत के प्रमुख शेयर मूल्य सूचकांक

1) **BSE सेंसेक्स** - यह बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज का संवेदी शेयर सूचकांक है, जो 30 सबसे बड़ी कंपनियों के शयरों पर आधारित होता है। इसका प्रयोग अर्थव्यवस्था में शेयरों के मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों के सूचक के रूप में किया जाता है। यदि सेंसेक्स में बढोत्तरी होती है, तो इसका अर्थ है कि सभी बड़ी कंपनियों के शेयर मूल्यों में बढ़ोत्तरी हुई है और यदि सेंसेक्स में गिरावट आती है, तो इससे शेयर मूल्यों में गिरावट आने का पता चलता है।

2) **BSE 200** - यह बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज के 200 शेयरों का प्रतिनिधित्व करता है।

3) **DOLLEX** - BSE 200 सूचकांक का डॉलर मूल्य ही डॉलेक्स कहलाता है।

4) **BANKEX** - BSE में बैंकिंग शेयरों का नया सूचकांक है, जो 12 बैंकों के शेयर मूल्यों का प्रतिनिधित्व करता है।

5) **NSE 50** - राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज से संबंधित यह सूचकांक 50 कंपनियों के शेयरों का प्रतिनिधित्व करता है। इस सूचकांक का नाम बदलकर 'S & P CNX NIFTY' रखा गया है।

6) **RESIDEX** - देश के विभिन्न भागों में भूमि के मूल्यों में उतार-चढ़ाव पर निगरानी रखने के लिए राष्ट्रीय आवास बैंक ने रेसिडेक्स नामक एक सूचकांक 2007 में जारी किया है।

❐ भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (Security Exchange Board of India)

यह भारतीय शेयर एवं पूंजी बाजार की नियामक संस्था है। इसकी स्थापना 12 अप्रैल, 1988 को एक गैर-सांविधिक संस्था के रूप में हुई थी, किन्तु 30 जनवरी, 1992 को एक अध्यादेश द्वारा इसे वैधानिक दर्जा प्रदान किया गया। इसकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य पूंजी बाजार में निवेशकों का विश्वास कायम रखना और निवेशकों का संरक्षण सुनिश्चित करना है। सेबी के निम्नलिखित कार्य हैं -

1) स्टॉक एक्सचेंज तथा प्रतिभूति बाजार के व्यवसाय का नियमन करना।

2) प्रतिभूति बाजार को उचित माध्यमों से विकसित करना और विनियमित करना।

3) निवेशकों के हितों की रक्षा करना।

4) प्रतिभूति के अन्तरंग या अंदरूनी व्यापार (Insider Trading) पर रोक लगाना।

5) प्रतिभूति बाजार से संबंधित व्यक्तियों व संस्थाओं को प्रशिक्षित करना।

❐ बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण (IRDA)

देश में बीमा क्षेत्र के नियमन के लिए इरडा की स्थापना 19 अप्रैल, 2000 को की गई थी। इसका प्रमुख कार्य बीमा उद्योग के क्रमबद्ध विकास हेतु विनिमय, उन्नयन की नीतियां बनाना तथा बीमा पॉलिसी धारकों के हितों की रक्षा करना।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ वायदा बाजार (Future Market)

इसके अन्तर्गत 2 पक्षों के बीच विनिमिय की शर्त निर्धारित या चालू कीमत को ही कायम रखने के लिए समझौता होता है, जो भविष्य की किसी निश्चित तिथि पर क्रियान्वित होगा। यह एक वैधानिक समझौता है और इस प्रकार हुए समझौते में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। वायदा बाजार का नियमन **फॉरवर्ड मार्केट कमीशन** द्वारा होता है। सितम्बर, 2005 में फॉरवर्ड मार्केट कमीशन का विलय सेबी में कर दिया गया है।

- **कमोडिटी फ्यूचर मार्केट**

कमोडिटी का तात्पर्य कच्चा तेल, खाद्य पदार्थों और धातुओं से है। जिस तरह शहरों के कारोबार के लिए स्टॉक एक्सचेंज है, उसी तरह कमोडिटी बाजार में कारोबार के लिए कमोडिटी एक्सचेंजों की स्थापना की गई है। इन एक्सचेंजों में कमोडिटीस की 'कीमत का व्यापार' होता है। किसी वस्तु की आगामी कीमतों का अनुमान लगाकर उनका क्रय-विक्रय करना (फ्यूचर ट्रेडिंग) कीमत का व्यापार कहलाता है। कमोडिटी एक्सचेंज के अनेक लाभ हैं। इसके अन्तर्गत भविष्य का भाव निर्धारित कर किसानों को बिचौलियों के शोषण से बचाया जा सकता है। भारत में कुल 5 कमोडिटी एक्सचेंज हैं -

1) नेशनल कमोडिटी एक्सचेंज (MCX), मुम्बई ।
2) नेशनल कमोडिटी एण्ड डेराइवेटिव्स एक्सचेंज (NCDX), मुम्बई।
3) इंडियन कमोडिटी एक्सचेंज (ICEX), गुड़गांव।
4) नेशनल मल्टी कमोडिटी एक्सचेंज (NMCE), अहमदाबाद।
5) यूनिवर्सल कमोडिटी एक्सचेंज (UCX), मुम्बई।

- **विदेशी मुद्रा का वायदा कारोबार (Future Trading of Foreign Currency)**

भविष्य की तिथि के लिए विदेशी मुद्रा का स्टॉक एक्सचेंज में तयशुदा रेट पर क्रय-विक्रय को ही विदेशी मुद्रा का वायदा कारोबार संज्ञा दी जाती है। भारत में सर्वप्रथम 2008 को राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज ने डॉलर-रुपया के मध्य इसका शुभारंभ किया। इससे आयातकों, निर्यातकों एवं विदेश यात्रा पर जाने वाले इच्छुक लोगों को विनिमय दर में होने वाले उतार-चढ़ाव के झोखिम से सुरक्षा मिल जाती है। जनवरी, 2010 से सेबी ने अब यूरो, पाउण्ड व येन में भी वायदा कारोबार की अनुमति प्रदान कर दी है। विदेशी मुद्रा का वायदा कारोबार करने के लिए 4 स्टॉक एक्सचेंजों को स्वीकृति प्रदान की गई है -

1) बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज।
2) राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज।
3) मल्टी कमोडिटी स्टॉक एक्सचेंज।
4) यूनाइटेड स्टॉक एक्सचेंज ऑफ इंडिया लिमिटेड।

- **भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग (Competition Commission of India - CCI)**

एकाधिकार शक्तियों पर अंकुश लगाकर प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने तथा कंपनियों के विलयों व अधिग्रहणों पर निगरानी रखने के उद्देश्य से भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग का गठन किया गया। इसने मई, 2009 से कार्य करना प्रारंभ किया। इस आयोग ने एकाधिकार और प्रतिबंधित व्यापार व्यवहार अधिनियम, 1969 का स्थान लिया है। अब बड़े विलय तथा अधिग्रहण के लिए सरकार ने प्रतिस्पर्धा आयोग की मंजूरी अनिवार्य कर दी है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

राजकोषीय नीति व लोक वित्त
Fiscal Policy & Public Finance

प्रत्येक राष्ट्र का उद्देश्य आर्थिक स्थिरता के साथ आर्थिक विकास करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राजकोषीय नीति तथा उपायों का सक्रिय प्रयोग किया जाता है। राजकोषीय नीति से आशय सरकार की सार्वजनिक आय, व्यय, ऋण, करारोपण तथा हीनार्थ प्रबंध (Deficit Financing) से संबंधित उन नीतियों से हैं, जिनका प्रयोग करके सरकार अर्थव्यवस्था में रोजगार, राष्ट्रीय उत्पादन, आन्तरिक व बाह्य आर्थिक स्थिरता, आर्थिक समता आदि आर्थिक नीतियों के प्रमुख उद्देश्य को प्राप्त करना चाहती है।

❒ सार्वजनिक आय (Public Income)

सार्वजनिक आय में सरकारी आय के विभिन्न स्रोतों, करारोपण पद्धतियां का अध्ययन किया जाता है। सार्वजनिक आय से सरकार अपने समस्त कार्यों का संचालन करती है। करारोपण (Taxation) सार्वजनिक आय का एक महत्वपूर्ण साधन है, जिसमें परिवर्तन के द्वारा प्रयोज्य आय (Disposable Income), उपभोग तथा निवेश को प्रभावित किया जा सकता है। प्रत्यक्ष करों में परिर्वतन प्रयोज्य आय, निवेश तथा उत्पादन को प्रभावित करते हैं, जबकि अप्रत्यक्ष करों में परिवर्तन का कीमतों तथा उपभोग पर प्रभाव पड़ता है।

प्राय: यह माना जाता है कि मंदीकाल (Depression) में करों में कमी करने से लोगों की व्यय करने की क्षमता बढ़ती है। प्रत्यक्ष करों में कमी करने पर प्रयोज्य आय में तो वृद्धि होगी, परन्तु यह निश्चित नहीं है कि निवेश बढ़ेगा अथवा नहीं। निवेश का बढ़ना देश की आर्थिक स्थिति एवं भविष्य की संभावनाओं पर निर्भर करता है। यदि मान लिया जाए कि उपभोग तथा निवेश में वृद्धि होती है, तो भी यह कहना कठिन है कि बेरोजगारी में कितनी कमी होगी। यदि रोजगार नहीं बढ़ता, तो करों में बार-बार कमी करनी होगी।

इसके विपरीत मुद्रास्फीति (Inflation) की स्थिति में कर नीति का उद्देश्य स्फीतिक अन्तर को समाप्त करना होता है, जिससे अतिरिक्त क्रयशक्ति तथा उपभोग की मांग को कम किया जा सके। क्रय की दरों में वृद्धि करना आवश्यक होगा, परन्तु कर की दरें अत्यधिक ऊँची होने पर इसके प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकते हैं। प्रयोज्य आय में बहुत अधिक कमी होने पर मांग इतनी कम होगी कि शिथिलता (Recession) की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। अत: उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए सरकार को एक संतुलित कर नीति तथा कर ढांचा बनाना चाहिए।

❒ सार्वजनिक व्यय (Public Expenditure)

सार्वजनिक व्यय में सरकारी व्यय का वर्गीकरण किया जाता है एवं उन समस्त सिद्धान्तों का अध्ययन किया जाता है, जिनके आधार पर सरकार विभिन्न मदों पर व्यय करती है। सरकार व्यय करने के लिए बजट बनाती है। सार्वजनिक व्यय किसी अर्थ व्यवस्था को वांछित दिशा में अग्रसर करने का प्रभावी माध्यम है। यह अर्थव्यवस्था के स्वरूप में परिवर्तन ला देता है। सरकार द्वारा किए गए व्यय का आर्थिक क्रियाओं के स्तर पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। व्यय में वृद्धि होने पर आय, उत्पादन तथा रोजगार पर प्रभाव पड़ता है।

मंदीकाल में राजकोषीय नीति का उद्देश्य उपभोग प्रवृत्ति में वृद्धि करने के उपाय करना तथा सार्वजनिक व्यय व निवेश में वृद्धि करना होगा। इसके विपरीत सार्वजनिक व्यय में वृद्धि होना मुद्रास्फीति का एक मुख्य कारण है। अत: मुद्रास्फीति की स्थिति में व्यय में कमी करना आवश्यक होता है। मुद्रास्फीति काल में राजकोषीय नीति के अन्तर्गत कर के आकार में भी वृद्धि होनी चाहिए। ये कर इस प्रकार होने चाहिए कि इनके परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था में कुल उपभोग व्यय में कमी की जा सके।

❒ घाटे का बजट (Deficit Budget)

घाटे के बजट में सरकार द्वारा प्रस्तावित व्यय का आकार उसकी प्रस्तावित प्राप्तियों की राशि से अधिक होता है। घाटे की पूर्ति ऋण लेकर की जाती है। यह ऋण यदि देश के केन्द्रीय बैंक से लिया जाता है, तो मुद्रा का विस्तार होता है। बैंकों अथवा जनता से ऋण लेने पर उनके निष्क्रिय मौद्रिक साधन सक्रिय हो जाते हैं तथा चलन में मुद्रा की मात्रा बढ़ती है।

घाटे का बजट मंदी की स्थिति में अथवा आर्थिक विकास के लिए साधान जुटाने के उद्देश्य बनाया जाता है। घाटे के बजट के विरोध में यह तर्क दिया जाता है कि इसका प्रभाव स्फीतिकारी होता है, परन्तु यह सदैव सही नहीं है। मंदीकाल में तो यह एक ऐसा उपाय है, जो अर्थव्यवस्था को मंदी के जाल बाहर निकालने में सहायक हो सकता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ हीनार्थ प्रबंधन/घाटे की वित्त व्यवस्था (Deficit Financeing)

सरकारी बजेटरी व्यवहार से उत्पन्न घाटा या नियोजित ढंग (Planned Way) से सृजित घाटे के वित्तीयन के साधन को हिनार्थ प्रबंधन कहते हैं। दूसरे सब्दों में सरकार के बजेटरी व्यवहार से उत्पन्न घाटे को बजटीय घाटा कहते हैं और जिन स्रोतों से इन घाटों की वित्तीय व्यवस्था की जाती है, उसे घाटे की वित्तीय व्यवस्था या हिनार्थ प्रबंधन कहते हैं।

पूर्व में बजेटीय घाटे की वित्तीय व्यवस्था रिजर्व बैंक एडहॉक ट्रेजरी बिल जारी करके करती थी, किन्तु 1 अप्रैल, 1997 से अर्थोपाय अग्रिम (Wage & Means - WMA) द्वारा घाटे की वित्त व्यवस्था की जाती है। उल्लेखनीय है कि अर्थोपाय अग्रिम को बजट अनुमान में शामिल नहीं किया जाता है एवं समय पर भुगतान होने पर इसे राजकोषीय घाटे में भी सम्मिलित नहीं किया जाता है। अत: शुद्ध रूप से अर्थोपाय अग्रिम बजट घाटे के वित्तीयन का स्रोत नहीं कहा जा सकता है, किन्तु बजट वर्ष में लिए गए अर्थोपाय अग्रिम का वह भाग, जो सरकार रिजर्व बैंक को नहीं लौटा पाती, वह सरकार की देयता होगी। अत: यह सार्वजनिक ऋण माना जाएगा और राजकोषीय घाटे में वृद्धि करेगा।

बढ़ता राजकोषीय घाटा या राजकोषीय घाटे का बड़ा आकार सदैव हानिकारक नहीं होता है। यदि घाटे की राशि को उत्पादक गतिविधियों (Productive Activities) में खर्च किया जाता है, तो यह आर्थिक विकास को बढ़ावा देने वाली नीति हो सकती है। विकासशील देशों के लिए यह नीति आवश्यक है, किन्तु यदि घाटे का उपयोग अनुत्पादक गतिविधियों (Un-productive Activities) में, जैसे - पेंशन, सब्सिडी भुगतान, प्रशासनिक व्यय आदि में किया जाता है, तो यह अर्थव्यवस्था के लिए अत्यन्त हानिकारक होगा। ज्ञातव्य हो कि प्रत्येक परिस्थिति में घाटे की वित्त व्यवस्था स्फीतिकारी (Inflationary) प्रभाव दर्शाती है।

❐ राजकोषीय नीति के उद्देश्य (Objectives of Fiscal Policy)

1) पूंजी निर्माण के द्वारा आर्थिक वृद्धि को बढ़ावा देना एवं आर्थिक विकास की प्रक्रिया को स्थापित करना।
2) आय तथा धन के वितरण की असमानता को कम करना।
3) मुद्रा प्रसार के प्रभाव को रोकना, अर्थात् - मुद्रास्फीति को नियंत्रित करना।
4) रोजगार के स्तर में वृद्धि करना।
5) आर्थिक स्थिरता प्राप्त करना।

❐ राजकोषीय तथा मौद्रिक नीतियों में सम्बन्ध (Relation Between Fiscal & Monetary Policies)

राजकोषीय नीति तथा मौद्रिक नीति के उद्देश्यों में काफी समानता रहती है। दोनों ही एक-दूसरे के पूरक हैं। इसके बावजूद दोनों के संचालन तथा प्रभावों में निम्नलिखित अन्तर हैं -

1) राजकोषीय नीति का निर्धारण सरकार की बजट नीति के अधीन होता है, जिसके लिए संसद की स्वीकृति लेना आवश्यक होता है। मौद्रिक नीति का निर्धारण तथा संचालन रिजर्व बैंक द्वारा किया जाता है। राजकोषीय उपायों में उतनी आसानी से परिवर्तन नहीं किया जा सकता, जितनी आसानी से मौद्रिक नीति में किया जा सकता है।
2) राजकोषीय नीति जनता के हाथों में क्रयशक्ति को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। अलग-अलग करों के द्वारा सभी वर्गों को प्रभावित किया जा सकता है। मौद्रिक नीति के प्रभाव अप्रत्यक्ष रूप से पड़ते हैं, क्योंकि यह वाणिज्यिक बैंकों के माध्यम से संचालित होती है।
3) राजकोषीय नीति मांग पक्ष को प्रभावित करती है। इसके विपरीत मौद्रिक नीति का प्रभाव लागत पर पड़ता है, क्योंकि ऋण लागत उत्पादन लागत का अंश होती है।
4) राजकोषीय नीति का प्रभाव प्राय: अधिक निश्चित होते हैं, क्योंकि इसके प्रभावों से कोई भी उत्पादक नहीं बच पाता है। जबकि मौद्रिक नीति का प्रभाव इतने निश्चित नहीं होते हैं, क्योंकि यदि रिजर्व बैंक साख की मात्रा को नियंत्रित भी करता है, तो भी बैंक मुद्रा बाजार के अन्य अंगों से ऋण प्राप्त कर सकता है। दूसरे शब्दों में राजकोषीय नीति संगठित व असंगठित दोनों क्षेत्रों को प्रभावित करती है, जबकि मौद्रिक नीति केवल संगठित क्षेत्र को प्रभावित करती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

5) राजकोषीय नीति के प्रभाव तात्कालिक होते हैं, जबकि मौद्रिक नीति के प्रभाव समय अन्तराल से उत्पन्न होते हैं।

6) मंदी की स्थिति का उपचार करने में मैद्रिक नीति विफल रहती है, जबकि राजकोषीय नीति को पर्याप्त सफलता मिलती है।

उपर्युक्त व्याख्या के आधार हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि राजकोषीय नीति व तथा मौद्रिक नीति का सम्मिलित रूप से प्रयोग ही आर्थिक स्थिरता लाने में प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य कर सकता है। दोनों नीतियों को एक-दूसरे के सहयोग की आवश्यकता होती है। यदि सरकार हीनार्थ प्रबंधन की नीति के अन्तर्गत मुद्रा का विस्तार करती जाए, तो आर्थिक स्थिरता प्राप्त करने के उद्देश्य से अपनाए गए मौद्रिक उपाय सफल नहीं हो पाते। इसी प्रकार राजकोषीय उपायों की सफलता भी इसी बात पर निर्भर करती है कि मौद्रिक नीति के उद्दश्यों की प्राप्ति में कहा तक सफलता मिल रही है। दोनों नीतियां एक-दूसरे की पूरक हैं, इसलिए अर्थव्यवस्था में आर्थिक स्थिरता एवं विकास प्राप्त करने के लिए इनका सम्यक प्रयोग करना चाहिए।

भारत में बजटरी व्यवस्था
Budgetory System in India

बजट शब्द की व्युत्पत्ति फ्रांसीसी शब्द बूजे (Bougettee) से हुई है, जिसका अर्थ है - चमड़े का छोटा बैग या थैला। सन 1733 में ब्रिटिश प्रधानमंत्री व वित्त मंत्री रॉबर्ट वॉलपोल देश की आर्थिक स्थिति का लेखा-जोखा चमड़े के एक बैग में रखकर लाए थे, जिसे जादू का पिटारा कहा गया था। इसका मूल निहितार्थ यह था कि बजट में निहित तत्वों को उस समय तक गुप्त रखने की परिपाटी रही है, जब तक कि उसे देश की संसद के समक्ष प्रस्तुत न कर दिया जाए।

भारत में सर्वप्रथम बजट प्रस्तुत करने का श्रेय लॉर्ड केनिंग के कार्यकाल (1860) में कार्यरत वित्तीय सदस्य जेम्स विल्सन को है। इसीलिए जेम्स विल्सन को भारतीय बजट का प्रणेता माना जाता है। 26 नवम्बर, 1947 को स्वतंत्र भारत का पहला बजट वित्त मंत्री आर. के. शण्मुखन चेट्टी ने प्रस्तुत किया था।

❒ बजट क्या है

व्यवहारिक अर्थों में बजट सरकार की आय-व्यय का एक विवरण प्रपत्र है। इसमें सरकार की गत वर्ष की आय-व्यय की स्थिति, चालू वर्ष में आय-व्यय के संशोधन आकलन, आगामी वर्ष के लिए आय-व्यय के अनुमानित आंकड़े तथा आगामी वर्ष के आर्थिक सामाजिक कार्यक्रम एवं आय-व्यय के घटाने-बढ़ाने के लिए प्रस्तावों का विवरण दिया होता है। इस प्रकार भारत में बजट प्रस्तुतीकरण का संबंध में 3 वर्षों के आंकड़ों से होता है। ज्ञातव्य है कि भारत में संघीय बजट को 2 स्तरों पर प्रस्तुत किया जाता है -

1) सामान्य बजट - इसे वित्त मंत्री प्रस्तुत करते हैं।

2) रेलवे बजट - इसे रेल मंत्री प्रस्तुत करते हैं।

उल्लेखनीय है कि भारत में रेलवे बजट को सामान्य बजट से अलग सर विलियम आकवर्थ कमेटी की रिपोर्ट की संस्तुतियों पर 1924 में अलग किया गया। सामान्य बजट में भी रेलवे बजट की राजस्व प्राप्तियां तथा व्यय मदे प्रदर्शित होती हैं।

❒ बजट के प्रकार

अर्थव्यवस्था में सरकारी हस्तक्षेप के बदलते आयामों, उद्देश्यों व परिस्थितियों आदि के फलस्वरूप बजट की प्रक्रिया और स्वरूपों में समय-समय पर परिवर्तन किए जाते रहे हैं। मोटे तौर पर 5 प्रकार के बजट प्रचलन में हैं -

- **पारम्परिक बजट (Traditional Budget)**

आज के आम बजट का प्रारंभिक रूप ही पारम्परिक बजट है। इस प्रकार के बजट का मुख्य उद्देश्य विधायिका का कार्यपालिका पर वित्तीय नियंत्रण स्थापित करना रहा है। इसके अनुसार बजट में मुख्यत: व्यय तथा विभिन्न मदों से होने वाली आय को प्रस्तुत किया जाता रहा है। इसमें किस क्षेत्र में कितना धन व्यय करना है, उसी का उल्लेख होता था, किन्तु इस व्यय से क्या-क्या परिणाम प्राप्त करने है, उनका विवरण नहीं दिया जाता है। इसलिए कालान्तर में पारम्परिक बजट पद्धति स्वतंत्र भारत की समस्याओं को सुलझाने तथा इसकी महत्वाकांक्षाओं को प्राप्त करने में असमर्थ समझी गई। यही कारण है कि भारत में पिछले कुछ वर्षों से निष्पादन बजट की आवश्यकता तथा महत्ता को स्वीकार किया गया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

- **निष्पादन बजट (Performance Budget)**

कार्य के परिणामों आधार बनाकर निर्मित होने वाले बजट को निष्पादन बजट या कार्यपूर्ति बजट कहा जाता है। इसमें केवल सरकार के आय-व्यय का हिसाब ही नहीं होता, बल्कि प्राप्त हुए निष्कर्षों या कार्य निष्पादन को मूल्यांकन का आधार बनाया जाता है। इस प्रकार का बजट में सरकार क्या कर रही है, कितना कर रही है तथा कितनी कीमत पर कर रही है यह सभी बातें प्रतिम्बिबित होती हैं। निष्पादन बजट का प्रयोग सर्वप्रथम हूपर आयोग (1949) की सिफारिश पर USA की संघीय सरकार द्वारा 1951 में हुआ था। भारत में इस प्रणाली को 1968 से प्रयोग में लाया जा रहा है।

- **आउट कम बजट (Out Come Budget)**

आउट कम बजट भी निष्पादन बजट की तरह परिणाम लक्षित प्रक्रिया से सम्बद्ध है। निष्पादन बजट का निर्माण जहां वित्त मंत्री द्वारा किया जाता है, वहीं आउट कम बजट का निर्माण विभिन्न विभागों के मंत्रालयों द्वारा किया जाता है। इस बजटीय प्रक्रिया में निष्पादन के मात्रात्मक तथा गुणात्मक प्रगति प्रपत्र तैयार किए जाते हैं। इस प्रकार की बजटीय प्रक्रियाओं का मुख्य उद्देश्य बजटीय प्रक्रिया में पारदर्शिता लाना है, ताकि सरकार राजकोषीय नीति के मामले में जनता व सदन के प्रति अधिक जवाबदेह हो सके।

- **शून्य आधारित बजट (Zerobase Budget)**

शून्य आधारित बजट का प्रवर्तन पीटर पायर (1970) ने किया था, जिसका उद्देश्य सार्वजनिक व्ययों की अपव्ययता में कमी लाना था। किसी भी विभाग या संगठन द्वारा प्रस्तावित व्यय के प्रत्येक मद पर पुनर्विचार करके प्रत्येक मद को शून्य मानते हुए उसका नए सीरे से मूल्यांकन करना ही शून्य आधारित बजट कहलाता है। बजट की यह प्रणाली व्यय किए जाने वाले प्रत्येक मद के औचित्य पर बल देती है। विगत व्यय को भावी व्यय के लिए तर्क के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है। व्यय की प्रत्येक मद का व्यापक विश्लेषण किया जाता है कि अमूक व्यय कहा तक आवश्यक हैं, उस व्यय को संशोधित किया जाना चाहिए या सर्वथा बंद कर दिया जाना चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक विभाग प्रत्येक बार शुरू से सबकुछ शून्य मानकर बजट बनाता है और प्रत्येक व्यय के लिए न्यायोचित आधार प्रस्तुत करता है। भारत सरकार ने इसे सभी मंत्रालयों तथा विभागों में बजट वर्ष 1987-88 से लागू किया है।

- **जेण्डर बजटिंग (Gender Budget)**

विश्व में सर्वप्रथम आस्ट्रेलिया (1984) में जेण्डर बजट पेश किया गया था। भारत में महिला अधिकारिता और सशक्तिकरण की दिशा में बजट के योगदान को स्वीकार करते हुए केन्द्र सरकार द्वारा जेण्डर बजटिंग की शुरुआत विगत कुछ वर्षों से की गई है। जेण्डर बजट के माध्यम से सरकार द्वारा महिलाओं के विकास, कल्याण व सशक्तिकरण से सम्बन्धित योजनाओं और कार्यक्रम के लिए प्रतिवर्ष बजट में एक निर्धारित राशि की व्यवस्था सुनिश्चित करने के प्रावधान किए जाते हैं।

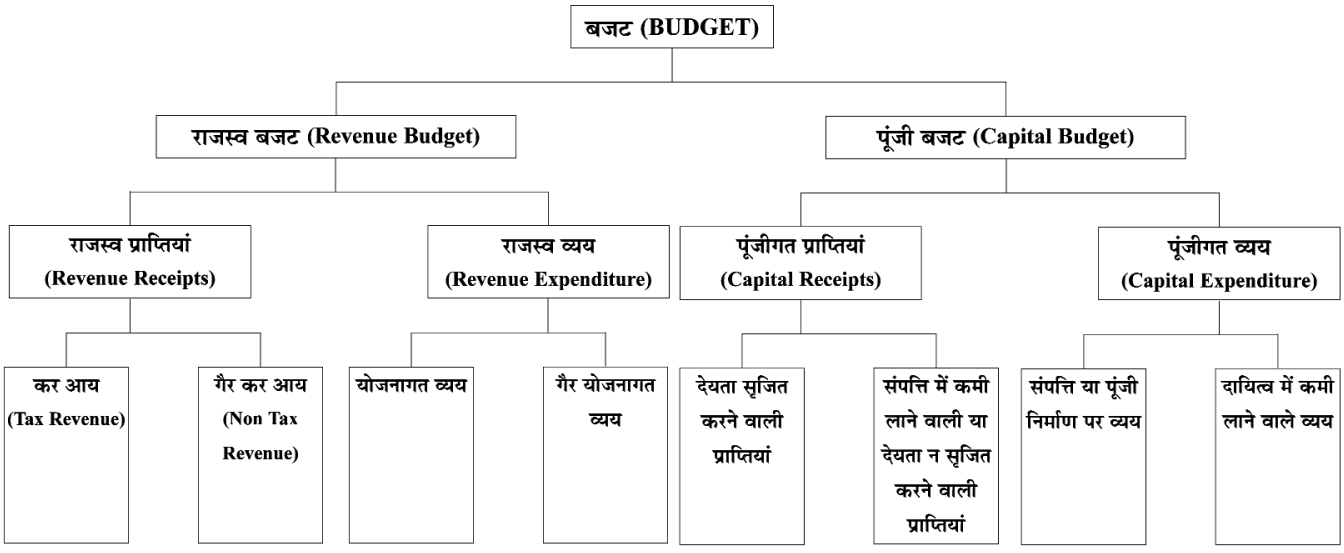

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

बजट के अवयव
Elements of Budget

❒ राजस्व बजट (Revenue Budget)

राजस्व बजट के 2 भाग होते हैं – राजस्व प्राप्तियां व राजस्व व्यय।

◆ राजस्व प्राप्तियां (Revenue Receipts)

इसके अन्तर्गत उस आय को रखा जाता है, जिसका सम्बन्ध उसी वित्तीय वर्ष से होता है। इसे चालू खाता नाम से भी जाना जाता है। इस खाते में आय के उन स्रोतों को शामिल किया जाता है, जिनके लौटाने का दायित्व सरकार पर नहीं हो या जिनके बदले में कोई भुगतान नहीं करना पड़ता है तथा जिसके साथ किसी सम्पत्ति की बिक्री न जुड़ी हो।

राजस्व प्राप्तियों के 2 प्रकार हैं –

1) **कर राजस्व या आय (Tax Revenue or Income)** – कर व्यक्ति द्वारा सरकार को दिया जाने वाला अनिवार्य अंशदान है, जिसे सरकार सभी के सामान्य हित के लिए व्यय करती है। कर भी 2 प्रकार के होते हैं –

   a) **प्रत्यक्ष कर (Direct Tax)** – प्रत्यक्ष कर वे होते हैं, जिनकों वही व्यक्ति देता है, जिस पर ये लगाए जाते हैं। दूसरे शब्दों में प्रत्यक्ष कर का दबाव तथा भार अन्तिम रूप से उसी व्यक्ति पर पड़ता है, जिस पर वह सरकार द्वारा लगाया जाता है। करदाता इस कर के भार को किसी अन्य व्यक्ति पर टाल नहीं सकता है।

   b) **अप्रत्यक्ष कर (In-direct Tax)** – अप्रत्यक्ष कर वे कर हैं, जिनका दबाव एक व्यक्ति पर तथा उसका भार दूसरे पर पड़ता है। दूसरे शब्दों में कर की जिम्मेदारी तो करदाता पर होती है, परन्तु वह कर का भार पूर्णरूप से अथवा आंशिक रूप से दूसरे व्यक्तियों पर टाल देता है।

केन्द्र सरकार के कर

प्रत्यक्ष कर	अप्रत्यक्ष
आयकर	सीमा शुल्क
निगमकर	केन्द्रीय उत्पाद शुल्क
व्यय कर	सेवा कर
संपत्ति कर	केन्द्रीय बिक्री कर
पूंजी लाभ कर	केन्द्रीय व्यापार कर
लाभांश कर	
ब्याज कर	
उपहार कर	
अस्तिकर	
लाभांश वितरण कर	
प्रतिभूति व्यापार कर	

राज्य सरकार के कर

प्रत्यक्ष कर	अप्रत्यक्ष
भू-राजस्व	व्यापार / बिक्री कर
कृषि आय पर कर	स्टाम्प एवं पंजीयन कर
होटल प्राप्तियों पर कर	राज्य उत्पाद शुल्क
व्यवसाय कर	डीजल / पेट्रोल पर बिक्री कर
पथ कर	वाहनों पर कर
	परिवहन कर
	प्रवेश कर
	विज्ञापन कर
	विद्युत पर कर व शुल्क
	मनोरंजन शुल्क

2) **गैर-कर राजस्व प्राप्तियां (Non-tax Revenue)** – कर के अलावा केन्द्र सरकार के आय के अन्य स्रोत भी हैं –

   a) **सार्वजनिक प्रतिष्ठानों से प्राप्त निवल अंशदान** – रेलवे, डाक, भारतीय रिजर्व बैंक का लाभ, वन, समुद्रपारीय संचार सेवाएं आदि।

   b) **ब्याज प्राप्ति** – राज्यों एवं केन्द्रशासित क्षेत्रों से, रेलवे से, दूरसंचार से अन्यों से।

   c) **राजकोषीय सेवाएं** – करेंसी, सिक्के एवं ढलाई, अन्य राजकोषीय सेवाएं।

   d) **सामान्य, सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाएं।**

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

e) **आर्थिक सेवाएं** - विभागीय वाणिज्यिक उपक्रमों की प्राप्तियां, चीनी-कैस्टर ऑयल, शीरा के निर्माण से लाभ, कच्चे तेल पर प्राप्त रॉयल्टी।

f) **बाह्य सहायताएं** -

i) समान्य एवं उपकरणों के रूप में सहायता।

ii) बाह्य नकदी अनुदान सहायता।

- **राजस्व व्यय (Revenue Expenditure)**

सरकार के वे सभी खर्च जो कोई भौतिक या वित्तीय परिसंपत्तियों का निर्माण नहीं करते, उन्हें राजस्व व्यय कहा जाता है। इन खर्चों का संबंध सरकारी विभागों के संचालन, विभिन्न सेवाओं, सरकारी ऋण पर ब्याज अदायगी तथा राज्य सरकार को दिए जाने वाले अनुदानों से होता है। बजट दस्तावेज में राजस्व व्यय को योजनागत व्यय तथा गैर योजनागत व्यय में बांटा जाता है।

1) **योजनागत व्यय (Planned Expenditure)** - योजनागत व्यय वास्तव में केन्द्रीय योजनाओं को पूरा करने के लिए दी गई बजेटरी सहायता को व्यक्त करता है। यह व्यय केन्द्रीय योजनाओं की वित्तीय आपूर्ति करता है। इसमें राज्य एवं संघ शासित क्षेत्रों को उनकी योजनाओं को दी जाने वाली केन्द्रीय सहायता भी सम्मिलित है।

2) **गैर योजनागत व्यय (Non Planned Expenditure)** - गैर योजनागत व्यय में सरकार के वे सभी व्यय आते हैं, जो सामान्य, सामाजिक तथा आर्थिक सेवाओं से संबंधित होते हैं। जैसे - ब्याज भुगतान, प्रतिरक्षा सेवाएं, सब्सिडी, वेतन, पेंशन आदि।

❐ **पूंजी बजट (Capital Budget)**

सरकार का पूंजी बजट, जिसे पूंजी खाता भी कहा जाता है, में पूंजीगत प्राप्तियां तथा पूंजीगत व्यय प्रदर्शित होते हैं। यह बजट सरकार की पूंजी आवश्यकता तथा उसके वित्तीयन के स्रोत पर प्रकाश डालती है।

- **पूंजीगत प्राप्तियां (Capital Receipts)**

पूंजीगत प्राप्तियां 2 प्रकार की होती हैं -

1) ऐसी प्राप्तियां, जो केन्द्र सरकार के दायित्व या ऋण में वृद्धि लाती है तथा जिनका हमें भुगतान करना आवश्यक होता है। लेकिन महत्वपूर्ण यह है कि यह भुगतान उसी वित्तीय वर्ष में न होकर आगामी वर्षों में किए जाते हैं। जैसे - आन्तरिक बाजार उधारी, अल्प बचत जमा, भविष्य निधि जमा, विदेश ऋण व सहायता, विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं जैसे अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, एशियन विकास बैंक, विश्व बैंक आदि से प्राप्त सहायता आदि।

2) ऐसी प्राप्तियां, जो केन्द्र सरकार की सम्पत्तियों में कमी लाती है, अर्थात् - जो केन्द्र सरकार की सम्पत्तियों के बेचने से प्राप्त होती हैं। जैसे - विनिवेश से प्राप्ति या किसी को दिए गए ऋण की वापसी आदि।

- **पूंजीगत व्यय (Capital Expenditure)**

वह सरकारी व्यय जो भौतिक व वित्तीय परिसम्पत्तियां बनाने में सहायक है, पूंजीगत व्यय कहलाते हैं। इनसे या तो परिसम्पत्तियों का निर्माण होता है या फिर देयता में कमी आती है। इसमें व्यय तो चालू वर्ष में किया जाता है, किन्तु इनसे सामाजिक कल्याण में वृद्धि चालू वर्ष के साथ-साथ आगामी वर्ष तक होती रहती है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित व्ययों को शामिल किया जाता है -

1) सरकार द्वारा वितरित ऋण (आन्तरिक तथा बाह्य दोनों)।

2) सरकार द्वारा पूर्व में लिए गए ऋण की अदायगी (उल्लेखनीय है कि ऋण अदायगी को पूंजीगत व्यय माना जाता है, पर उस पर दिए गए ब्याज का भुगतान राजस्व व्यय से होता है)।

3) निवेश।

4) सरकार का योजनागत व्यय, जिनसे परिसम्पत्तियों का निर्माण हो।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

बजटीय घाटे की विभिन्न अवधारणाएं
Various Conceptes of Budgetory Deficit

- **राजस्व घाटा (Revenue Deficit)** – सरकारी बजट के राजस्व खाते में यदि कुल व्यय कुल आय से अधिक हो तो इसे राजस्व घाटा कहेंगे।

राजस्व घाटा = कुल राजस्व प्राप्ति – कुल राजस्व व्यय

- **पूंजीगत घाटा (Capital Deficit)** – इस तरह का शब्द लोक वित्त में नहीं है, किन्तु व्यवहार में इस शब्द का प्रयोग किया जाता है। जब सरकारी बजट के पूंजी खाते में कुल व्यय यदि कुल आय से अधिक हो, तो यह पूंजीगत घाटा कहलाता है।
- **बजट घाटा तथा बजट अधिशेष (Deficit & Surplus Budget)** – सरकारी बजट में यदि कुल आय, कुल व्यय से अधिक है, तो इस आधिक्य को बजट अधिशेष कहते हैं। इसके विपरीत बजट में यदि कुल व्यय, कुल आय से अधिक हो, तो इस आधिक्य को बजट घाटा कहते हैं।
- **राजकोषीय घाटा (Fiscal Deficit)** – सरकार के सम्पूर्ण बजटीय व्यवहार के कारण उसकी देयता में होने वाली वृद्धि को ज्ञात करने के लिए हम घाटे की एक नई धारणा का प्रयोग करते हैं, जिसे हम राजकोषीय घाटा कहते हैं। भारत में राजकोषीय घाटे की अवधारणा को पहली बार डॉ. मनमोहन सिंह ने 1991 के अपने केन्द्रीय बजट में रखी थी, परन्तु व्यवहार में इस अवधारणा का प्रयोग 1997–98 से किया जा रहा है।

राजकोषीय घाटा = बजटीय घाटा + सरकारी दायित्व

चूंकि बजटीय घाटा भी सरकार की रिजर्व बैंक के प्रति देयता प्रदर्शित करता है, इसलिए हम कह सकते हैं –

राजकोषीय घाटा = सरकार की सम्पूर्ण देयताएं (सार्वजनिक ऋण + रिजर्व बैंक से लिया गया उधार)

यहां स्पष्ट है कि बजटीय घाटे में कुल आय तथा कुल व्यय का अन्तर प्रदर्शित होता है। यहां कुल आय में वो प्राप्तियां भी शामिल हैं, जो सरकार को किसी भी तरह के ऋण के रूप में प्राप्त हुई हैं तथा जिनसे सरकार पर भुगतान का उत्तरदायित्व उत्पन्न होता है। अत: राजकोषीय घाटे में सरकार की आय में केवल वही प्राप्तियां शामिल की जाती हैं, जिनसे कोई उत्तरदायित्व उत्पन्न नहीं होता है।

- **प्राथमिक घाटा (Primary Deficit)** – राजकोषीय घाटा इस बात पर प्रकाश डालता है कि बजटीय व्यवहार से उत्पन्न घाटा कितना है, पर इस बात पर प्रकाश नहीं डालता कि इस घाटे का कितना भाग चालू बजटीय व्यवहार के कारण है और कितना भाग पिछले वर्षों में किए गए बजटीय व्यवहार के कारण है। उल्लेखनीय है कि सार्वजनिक ऋणों पर किया जाने वाला ब्याज का भुगतान विगत वर्षों में बजटीय व्यवहार का परिणाम होता है, जिसका कोई सम्बन्ध वर्तमान बजटीय व्यवहार से नहीं होता है। इसलिए वर्तमान बजटीय व्यवहार से उत्पन्न घाटे को ज्ञात करने के लिए हम राजकोषीय घाटे में से ब्याज अदायगी को निकाल देते हैं और इसे ही प्राथमिक घाटा कहते हैं।

प्राथमिक घाटा = राजकोषीय घाटा – ब्याज अदायगी

- **मौद्रिक घाटा (Monetised Deficit)** – राजकोषीय घाटे की वह राशि, जिसकी वित्तीय व्यवस्था सरकार नोट निर्गमन के द्वारा करती है (इसे मौद्रीकरण कहते हैं), उसे मौद्रीकृत घाटा कहते हैं।

❐ विभिन्न घाटों की वर्तमान स्थिति (केन्द्रीय बजट 2016-17 के अनुसार)

घाटे का प्रकार	GDP के प्रतिशत के रूप में	घाटे का प्रकार	GDP के प्रतिशत के रूप में
राजस्व घाटा	2.3	राजकोषीय घाटा	3.5
प्राथमिक घाटा	0.3	प्रभावी राजस्व घाटा	1.2

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

भारतीय कर व्यवस्था
Taxation in India

आधुनिक अर्थशास्त्र में कर आय को वितरित करने का तरीका माना जाता है। यह सरकार द्वारा नागरिकों से लिया गया अनिवार्य अंशदान है, जिसे वह नागरिकों एवं देश के कल्याण के लिए खर्च करती है। भारत में कर केन्द्र सरकार, राज्य सरकार तथा स्थानीय सरकार द्वारा वसूल किए जाते हैं। अर्थव्यवस्था में कर लगाने की 3 विधियां प्रचलित हैं –

1) **प्रगतिशील कर प्रणाली (Progressive Tax System)** – यदि आय की वृद्धि के साथ कर की दर में वृद्धि हो, तो इसे प्रगतिशील कर प्रणाली कहते हैं।

2) **प्रतिगामी कर प्रणाली (Regressive Tax System)** – यदि आय की वृद्धि के साथ कर की दर घटती जाए, तो इसे प्रतिगामी कर प्रणाली कहते हैं।

3) **आनुपातिक कर प्रणाली (Proportional Tax System)** – यदि कर की दर आय में परिवर्तन के साथ भी परिवर्तित न हो, तो इसे आनुपातिक कर प्रणाली कहते हैं।

आय	प्रगतिशील		प्रतिगामी		आनुपातिक	
	कर की दर	कुल कर	कर की दर	कुल कर	कर की दर	कुल कर
1000	10	100	10	100	10	100
2000	20	400	8	160	10	200
3000	25	750	6	180	10	300
4000	45	1800	5	200	10	400

❒ कर के प्रकार

कर 2 प्रकार के होते हैं – प्रत्यक्ष कर एवं अप्रत्यक्ष कर।

◆ प्रत्यक्ष कर (Direct Tax)

प्रत्यक्ष कर वे होते हैं, जिनकों वही व्यक्ति देता है, जिस पर ये लगाए जाते हैं। दूसरे शब्दों में प्रत्यक्ष कर का दबाव तथा भार अन्तिम रूप से उसी व्यक्ति पर पड़ता है, जिस पर वह सरकार द्वारा लगाया जाता है। करदाता इस कर के भार को किसी अन्य व्यक्ति पर टाल नहीं सकता है। कुछ महत्वपूर्ण प्रत्यक्ष कर निम्नलिखित हैं –

1) **आयकर (Income Tax)** – भारत में आयकर सर्वप्रथम 24 जुलाई, 1860 में लगाया गया। 24 जुलाई, 2010 को 150 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में 24 जुलाई को आयकर दिवस के रूप में मनाया जाता है। भारत में आयकर का नियमन इनकम टैक्स एक्ट 1961 द्वारा होता है। सरकार जल्द ही इसके स्थान पर प्रत्यक्ष कर संहिता लागू करने का प्रयास कर रही है।

2) **निगमकर (Corporate Tax)** – कंपनियों की आय पर लगने वाले कर को निगमकर कहते हैं।

➢ प्रत्यक्ष कर संहिता (Direct Tax Code)

केलकर समिति की अनुशंसाओं पर सरकार ने प्रत्यक्ष कर के क्षेत्र में व्यापाक सुधार का प्रस्ताव दिया है। इस प्रस्ताव ने प्रत्यक्ष कर नियमों को परिवर्तित कर एक एकीकृत प्रत्यक्ष कर संहिता लाने का प्रावधान किया गया है। नए प्रस्तावित कानून में प्रत्यक्ष कर ढांचे को सरल बनाने के प्रयास किया गया है, ताकि जटिल आयकर कानून एवं निगम कर आदि प्रत्यक्ष करों को प्रतिस्थापित किया जा सके। इसका उद्देश्य कम से कम दर पर आयकर वसूलना और अधिक से अधिक लोगों आयकर के दायरे में लाना है।

◆ अप्रत्यक्ष कर (Indirect Tax)

अप्रत्यक्ष कर वे कर हैं, जिनका दबाव एक व्यक्ति पर तथा उसका भार दूसरे पर पड़ता है। दूसरे शब्दों में कर की जिम्मेदारी तो करदाता पर होती है, परन्तु वह कर का भार पूर्णरूप से अथवा आंशिक रूप से दूसरे व्यक्तियों पर टाल देता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

कुछ महत्वपूर्ण अप्रत्यक्ष कर निम्नलिखित हैं –

1) **उत्पाद शुल्क (Excise Duty)** – सरकार उत्पाद शुल्क उन वस्तुओं पर लगाती है, जो देश के भीतर उत्पादित होती हैं।

2) **सीमा शुल्क** – सीमा शुल्क ऐसे शुल्क या कर है, जो आयतीत वस्तुओं तथा देश से निर्यातीत वस्तुओं पर लगाया जाता है। इस समय निर्यात शुल्क नहीं लगाया जाता है, इसलिए आयात शुल्क ही सीमा शुल्क का पर्याय है।

3) **बिक्री कर (Sale Tax)** – सरकार किसी वस्तु के विक्रय पर जो कर वसूलती है, उसे बिक्री कर कहते हैं। भारत के ज्यादातर राज्यों मे अब बिक्री कर की जगह वेट ने ले ली है।

4) **सेवाकर (Service Tax)** – चैलैया समिति की संस्तुति पर सेवाकर कर को 1994–95 की केन्द्रीय बजट में शुरू किया गया। यह जम्मू–कश्मीर को छोड़कर सभी राज्यों में लागू है। सेवाकर को और अधिक विस्तृत करने के लिए सरकार द्वारा 1 जुलाई, 2012 से निषेधात्मक सूची (Negative List) जारी की गई। इसका अर्थ यह है कि अब ऐसी सेवाओं की सूची जारी की जाएगी, जिन पर सेवाकर नहीं लगना है। नकारात्मक सूची को छोड़कर बाकी सभी सेवाएं कर के दायरे में आ जाएंगी। सेवाकर मूलत: संघ सूची में आता है। भारतीय संविधान के 88वें संशोधन के अनुसार सेवाओं पर भारत सरकार द्वारा लगाए जाएंगे तथा संसद द्वारा पारित कानून के अन्तर्गत भारत सरकार तथा राज्यों के मध्य बांटे जाएंगे।

➢ **मूल्य वर्धित कर प्रणाली (Value Added Tax System - VAT)**

वेट मूल्य वर्धन पर लगने वाला कर है। इसमें उत्पादन व बिक्री के प्रत्येक चरण में होने वाले मूल्य वर्धन पर कर लगाया जाता है। इसमें कर की गणना का आधार मूल्य वर्धन होता है न की आउटपुट। उदाहरणार्थ – एक धागा बनाने वाली इकाई ने 100 रुपए में कपास खरीदा और उसे धागे के रूप में तैयार करने की प्रक्रिया में कुछ सेवा व श्रम लागत लगाकर लाभ के साथ 200 रुपए में कपड़ा कंपनी को बेचता है। स्पष्ट है कि धागा बनाने वाली इकाई ने कपास में 100 रुपए का मूल्य वर्धन किया है। अत: इस मूल्य वर्धन पर कर लगाया जाएगा। इस प्रकार प्रत्येक स्तर पर वस्तु में होने वाले मूल्य वर्धन पर कर लगाया जाएगा। वेट ने केन्द्र के स्तर पर केन्द्रीय उत्पाद शुल्क को प्रतिस्थापित किया और राज्यों के स्तर पर (बिक्री कर को प्रतिस्थापित) बिक्री के प्रत्येक स्तर पर पंजीकृत व्यापारी को वस्तु के मूल्यवर्धन पर वेट देना पड़ता है।

वेट का प्रथम प्रतिपादन 1918 में एफ. वान सीमेन्स ने किया, परन्तु इसे 1954 में सर्वप्रथम सफलतापूर्वक फ्रांस में लागू किया गया। धीरे–धीरे यह अन्य यूरोपीयन तथा एशियायी देशों में लागू हुआ। भारत में वेट 1 अप्रैल, 2005 से लागू किया गया। वर्तमान में वेट सभी राज्यों में लागू है। वेट लागू करने वाला प्रथम राज्य हरियाणा तथा अंतिम राज्य उत्तर प्रदेश रहा। लक्ष्यद्वीप तथा अन्डमान–निकोबार द्वीप समूह ऐसे संघ शासित प्रदेश है, जहां बिक्री कर नहीं है, इसलिए यहां वेट लागू नहीं है।

➢ **वस्तु एवं सेवा कर (Goods & Service Tax - GST)**

वस्तु एवं सेवा कर भारत में एक कर प्रस्ताव है, जिसकी सिफारिश विजय केलकर की अध्यक्षता वाले कार्य दल द्वारा की गई थी। अभी तक वस्तु एवं सेवाओं पर अलग–अलग कर लगाए जाते रहे हैं। साथ ही अलग–अलग राज्य में कर की दरों में भी अन्तर पाया जाता है। अत: करारोपण की प्रक्रिया को सहज व सरल बनाने के लिए GST को लाया गया है। वस्तु एवं सेवाकर एक ऐसी कर प्रणाली है, जिसके तहत् वस्तु और सेवाओं पर कर की दर एक समान कर दी जाती है और उसका समन्वय कर दिया जाता है।

सरकार ने GST को लागू करने के लिए 122वां संविधान संशोधन विधेयक, 2014 संसद में प्रस्तुत कर दिया है। इस प्रस्तावित विधेयक में निम्नलिखित प्रावधान है –

1) GST के 2 भाग होंगे – केन्द्र के लिए CGST एवं राज्य के लिए SGST। CGST केन्द्रीय उत्पाद शुल्क, अतिरिक्त उत्पाद शुल्क, सेवा कर , एडीशनल कस्टम ड्यूटी, वस्तुओं एवं सेवाओं पर लगने वाले सभी उपकर एवं अधिभार आदि का स्थान लेगा, वहीं SGST वैट, मनोरंजन कर, केन्द्रीय बिक्री कर, चूंगी व प्रवेश कर, विलासिता कर, लॉटरी (सट्टे व जुएं पर लगने वाले कर), राज्यों के सभी उपकर एवं अधिभार आदि का स्थान लेगा।

2) यह एक मूल्यवर्धित कर होगा, अर्थात् – इसमें वैट प्रकार के करों के सारे गुण व लाभ शामिल होंगे।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) इससे पूरे देश में समरूपता के साथ कर की एक ही दर को लागू किया जाएगा।

4) GST विधेयक में केन्द्रीय वित्त मंत्री की अध्यक्षता में GST परिषद् के सृजन का प्रावधान है। राज्यों के वित्त मंत्री/राजस्व मंत्री परिषद् के सदस्य होंगे। परिषद् को कर की दरों की सिफारिश करने, कर सीमाओं तथा इससे दी जाने वाली छूटों को तय करने का अधिकार होगा।

❐ GST से होने वाले लाभ (Gaining from GST)

1) GST लागू होने के परिणामस्वरूप पूरी अर्थव्यवस्था एक कॉमन मार्केट के रूप में परिवर्तित हो जाएगी, जिससे कर लेखांकन की जटिलताओं से बचा जा सकेगा एवं संसाधन पूरे राष्ट्र में समान रूप से गतिशील हो सकेंगे। साथ ही अन्तर्राजीय व्यापार की बाधाएं दूर होंगी। एकीकृत बाजार के फलस्वरूप वस्तुओं एवं सेवाओं की कीमतों में क्षेत्रीय अन्तर समाप्त हो जाएगा।

2) अप्रत्यक्ष करों से उत्पन्न प्रपाती प्रभाव (Cascading Effect) समाप्त हो जाएगा।

3) GST लागू होने से उपभोक्ताओं को उनके द्वारा किए जाने वाले कर की पूर्ण जानकारी होगी। इस प्रकार कर प्रणाली पारदर्शी रहेगी। साथ ही GST से वस्तु एवं सेवाओं की लागत में कमी आएगी, जो अन्त: उपभोक्ताओं को लाभान्वित करेगी।

4) GST के आगमन से विनिर्माण लागत में कमी आएगी, जिससे वाणिज्य एवं व्यापार सुगम होगा।

5) GST के लागू होने से कर आधार बढ़ेगा, जिससे सरकारी राजस्व में वृद्धि होगी।

6) GST के लागू होने से कर अपवंचन (Tax Evasion) में भी कमी होगी।

❐ GST के मार्ग में बाधाएं (Difficulties in GST)

1) चूंकी GST के प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि राज्यों के कुछ कर संबंधी अधिकार स्पष्ट हो जाएंगे। अत: राज्यों की सहमति प्राप्त करना GST के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा है।

2) सहयोगात्मक संघवाद के पेरोकार GST को राज्यों के क्षेत्राधिकार में घुसपैठ मानते हैं। उनके अनुसार GST का ढांचा अत्यधिक केन्द्रीकृत है, जो संघवाद के लिए उचित नहीं है।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

आर्थिक सुधार
Economic Reforms

आर्थिक सुधारों से आशय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में किए उन नीतिगत परिवर्तनों से है, जिनके द्वारा अर्थव्यवस्था में विद्यमान विसंगतियों को दूर किया जाता है। इन सुधारों का उद्देश्य विकास एवं वृद्धि के साथ अर्थव्यवस्था को स्थिरता प्रदान करना है। विश्व के कई राष्ट्रों को विकास हेतु आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया से गुजरना पड़ा है। उदाहरणार्थ – सोवियत संघ में गोर्बाचोव एवं चीन में डेंग द्वारा लाए गए सुधार। भारत ने 1991 में आर्थिक सुधारों को अपनाया तथा इस संदर्भ में उदारीकरण (Liberisation), निजीकरण (Privatiation) एवं वैश्वीकरण (Globlisation) के नीति को लागू किया।

उदारीकरण – उदारीकरण का आशय ऐसी आर्थिक नीतियों से है, जिसमें आर्थिक गतिविधियों में सरकार एवं राज्य की भूमिका को सीमित करते हुए निजी क्षेत्र एवं बाजार कारकों की भूमिका में विस्तार किया जाता है। सरल शब्दों में आर्थिक नीतियों की कठोरता को कम करते हुए उसे उदार बनाना। इसका उद्देश्य आर्थिक नियमों एवं विनियमों को उदार बनाते हुए उन्हें निजी क्षेत्र एवं बाजार के अनुरूप बनाना है।

निजीकरण – निजीकरण से आशय सभी प्रकार की वाणिज्यिक गतिविधियों से सार्वजनिक उपक्रमों को वापस लेते हुए इसके प्रबंधन एवं स्वामित्व को निजी क्षेत्र को सौंपने से है। सरकार इसका क्रियान्वयन विनिवेश नीति द्वारा करती है।

वैश्वीकरण – वैश्वीकरण का आशय देश की अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ एकीकृत (Intigrate) करने से है। दूसरे शब्दों में भारतीय अर्थव्यवस्था को वस्तु, सेवा, पूंजी एवं निवेश के संदर्भ में शेष विश्व की अर्थव्यवस्था के लिए अपना बाजार खोलना।

LPG के माध्यम से औद्योगिक नीति, व्यापारिक नीति, वित्तीय नीति, राजकोषीय नीति आदि में विभिन्न आर्थिक सुधार किए गए।

औद्योगिक नीति एवं आर्थिक उदारीकरण
Industrial Policy & Liberalisation

औद्योगिक नीति देश के औद्योगिक विकास की कार्ययोजना प्रस्तुत करती है। यह स्पष्ट करती है कि योजना की रणनीति क्या होगी या औद्योगिक विकास में सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र में क्या भूमिका होगी तथा औद्योगिक विकास में विदेशी पूंजी तथा विदेशी उद्यमों की दिशा क्या होगी। दूसरे शब्दों में औद्योगिक नीति देश के विकास के हर पहलू पर प्रकाश डालने वाला देश का आर्थिक संविधान है। स्वतंत्रता के बाद से अब तक समय-समय पर सरकार ने अनेक बार औद्योगिक नीति की घोषणा की है।

❐ औद्योगिक नीति 1948

15 अगस्त, 1947 के बाद भारत अपनी अर्थव्यवस्था को मनचाहा रूप देने में स्वतंत्र था। देश की प्रथम औद्योगिक नीति की घोषणा 6 अप्रैल, 1948 को तत्कालीन उद्योग मंत्री डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी द्वारा की गई थी। इस नीति में भारतीय अर्थव्यवस्था के स्वरूप को निश्चित किया गया। भारत सरकार ने मिश्रित एवं नियंत्रित अर्थव्यवस्था (Mixed & Controlled Economy) की आर्थिक विचारधारा को स्वीकार किया, जिसका रूझान समाजवाद की ओर था। इसमें औद्योगिक विकास के लिए सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्रों पर बल दिया गया था। इस मॉडल में सार्वजनिक उद्योगों को नेतृत्वकारी तथा नियंत्रणकारी भूमिका प्रदान की गई और निजी क्षेत्रों से पूरक भूमिका के निर्वाह की अपेक्षा की गई। सार्वजनिक क्षेत्र को न केवल विदेशी प्रतिस्पर्धा से वरन् निजी क्षेत्रों की घरेलू प्रतिस्पर्धा से भी संरक्षण प्रदान किया गया। स्पष्ट है कि इस समय भारतीय अर्थव्यवस्था संरक्षणवादी अर्थव्यवस्था थी।

❐ औद्योगिक नीति 1956

1948 के बाद 1956 में दूसरी औद्योगिक नीति प्रस्ताव स्वीकार किया गया। इन 8 वर्षों में राजनीतिक तथा आर्थिक स्थिति में काफी परिवर्तन आ गया था और विकास कार्य भी आगे बढ़ गया था। भारत समाजवाद को आधारभूत आर्थिक तथा सामाजिक नीति के रूप में स्वीकार कर चुका था। इसके औद्योगिक आधार के लिए 1956 का प्रस्ताव पास किया गया। इसमें उद्योगों को 3 वर्गों में बांटा गया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

1) **प्रथम अनुसूची (क)** - इसमें 17 उद्योगों को रखा गया, जिनके भावी विकास की पूरी जिम्मेदारी सरकार की होगी। इसमें भारी एवं पूंजी आधारित उद्योगों को शामिल किया गया।

2) **द्वितीय अनुसूची** - इसमें 12 उद्योग शामिल किए गए, जो धीरे-धीरे सरकार के स्वामित्व में आ जाएंगे। इन उद्योगों में नए उद्योग खोलने की पहल सरकार करेगी, लेकिन निजी उद्योगपतियों को यह अवसर दिया जाएगा कि वह इस सूची को उद्योगों में वे स्वयं या सरकार की भागीदारी के साथ उद्योग खोले।

3) **तृतीय अनुसूची** - इस सूची में उन सभी शेष उद्योगों को रखा गया, जो उपरोक्त अनुसूची में नहीं आते थे। इस सूची में मुख्यत: उपभोग वस्तुओं को रखा गया था। इन उद्योगों में भावी विकास हेतु इन्हें निजी क्षेत्रों के लिए छोड़ दिया गया।

❐ औद्योगिक नीति 1977

23 दिसम्बर, 1977 को जनता सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा की थी। वस्तुत: यह औद्योगिक नीति सत्ता परिवर्तन के परिणामस्वरूप आई थी। अत: इसका झुकाव गांधीवादी-समाजवादी विचारधारा के प्रति था। इसकी मुख्य बातें निम्नलिखि थीं -

1) सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका के सम्बन्ध में 1956 की नीति पर ही बल।

2) लघु तथा कुटीर उद्योगों को नए ढंग से परिभाषित किया गया तथा इनके प्रवर्तन व विकास पर विशेष बल दिया गया।

3) लघु तथा कुटीर उद्योगों का विस्तार वृहद पैमाने पर करने के लिए **जिला उद्योग केन्द्र** (District Industries Centres) की स्थापना का निर्णय लिया गया। इसका उद्देश्य लघु उद्यमकर्ता को एक ही स्थान पर लघु उद्योगों के विकास के लिए सुविधाओं को उपलब्ध कराना था।

4) खादी एवं ग्रामीण उद्योगों की पुनर्संरचना की गई।

❐ औद्योगिक नीति 1980

जनवरी, 1980 में सरकार में परिवर्तन के पश्चात् कांग्रेस सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा की। 1956 की औद्योगिक नीति को आधार मानते हुए छोटे, मध्यम और बड़े पैमाने के उद्योगों के विकास को बढ़ाने के लिए महत्वपूर्ण घोषणा की। इस नीति का मुख्य उद्देश्य आधुनिकीकरण, विस्तार एवं पिछड़े क्षेत्रों का विकास करन था।

आर्थिक संघवाद (Economic Federalism) इस नीति की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता थी। इसके अन्तर्गत प्रत्येक ऐसे जिले में जिसे पिछड़ा चिह्नित किया जाए, वहां कुछ न्युकलस प्लांट खोले जाएंगे, जिससे अधिक से अधिक संभावित लघु तथा कुटीर उद्योग इकाइयां खुले।

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर 1980 के दशक तक बनी सभी औद्योगिक नीतियों का झुकाव सार्वजनिक कंपनी (PSUs) के पक्ष में था। इन नीतियों के विश्लेषण करने पर निम्नलिखित विशेषताएं देखने को मिलती हैं -

1) **लाइसेंसिंग प्रणाली** - लाइसेंसिंग प्रणाली भारत की औद्योगिक नीति का प्रमुख आधार थी। इसके लिए औद्योगिक विकास व नियमन अधिनियम 1951 लागू किया गया। इसके तहत केन्द्र सरकार से लाइसेंस लिए बिना न तो नई औद्योगिक इकाई खोली जा सकता थी और न ही उसका विस्तार संभव था।

2) **लघु औद्योगिक आरक्षित मद प्रणाली** - लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास तथा बड़े उद्योगों से संरक्षण हेतु आरक्षित मद प्रणाली लागू की गई। 1980 के दशक के अंत तक आते-आते लघु उद्योगों के लिए आरक्षित मदों की संख्या बढ़कर 873 हो गई।

3) **आर्थिक संकेन्द्रण पर रोक** - 1969 में आर्थिक संकेन्द्रण की प्रवृत्ति को रोकने क लिए एकाधिकार तथा प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार अधिनियम (MRTP Act.) लाया गया। इसके तहत उस कंपनी को MRTP कंपनी माना गया, जिसका नेटवर्थ 20 करोड़ से ज्यादा है। ऐसी इकाइयों को अपने विस्तार अथवा नए उद्योग की स्थापना से पूर्व सरकार की अनुमति लेना आवश्यक था। इसके अन्तर्गत MRTP आयोग गठित किया गया था, जो इससे सम्बन्धित मामलों को देखता था।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

4) **निवेश नीति** – 1990 से पहले विदेशी पूंजी तथा निवेश के प्रति सरकार कठोर रूख था। इसे नियंत्रित करने के लिए विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, 1973 (FERA) लागू किया गया। इसके उल्लंघन की स्थिति में आर्थिक के साथ-साथ शारीरिक दण्ड का प्रावधान किया गया।

5) **व्यापार नीति** – 1990 तक भारत का विदेशी व्यापार के प्रति भी नकारात्मक रवैया रहा। आयात के लिए पूर्वानुमति की आवश्यकता थी तथा आयात-निर्यात दोनों पर विभिन्न प्रकार के मात्रात्मक व गुणात्मक प्रतिबंध लगाए जाते थे।

6) **कठोर श्रम नीति** – स्वतंत्रता के पश्चात् भारत ने समाजवाद के आदर्श को अपनाया तथा सामाजिक-आर्थिक न्याय का लक्ष्य रखा। अत: श्रमिकों के हितों को सुरक्षित रखने के लिए सरकार ने कई कठोर तथा जटील श्रम कानून बनाए। इन कानूनों ने कहीं न कहीं विकास में बाधा डाली।

7) **वित्तीय नीति** – बैंकिंग क्षेत्र में निजी व विदेशी कंपनियों को प्रवेश की अनुमति नहीं थी। साथ ही जो वित्तीय संस्थान उपस्थिति थे, उनकी भी कई तरह की सीमाएं थीं। परिणामस्वरूप उद्योगों के विकास हेतु कार्यशील पूंजी का अभाव रहा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 1990 के पूर्व भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप बंद अर्थव्यवस्था की तरह था, जिससे बाह्य अर्थव्यवस्था के साथ इसकी अन्त:क्रिया बाधित हुई। इस दौरान अपनाई जाने वाली संरक्षणवादी नीतियों ने अर्थव्यवस्था की कुशलता के साथ-साथ प्रतिस्पर्धात्मकता को भी प्रभावित किया। औद्योगिक विकास की धीमी गति, बड़े पैमाने पर बेरोजगारी, सार्वजनिक क्षेत्र में औद्योगिक रुग्णता, महंगाई की उच्च दर तथा विदेशी मुद्रा का संकट के कारण भारत की औद्योगिक नीति पर प्रश्न चिह्न लगने लगा। इन्हीं सब आन्तरिक तथा बाह्य घटनाओं के कारण भारत आर्थिक सुधार करने के लिए बाध्य हुआ। 1990-91 में घटित कुछ महत्वपूर्ण घटनाएं –

1) मुद्रास्फीति की दर 17 प्रतिशत तक पहुंच गई थी।

2) सरकार का वित्तीय घाटा GDP का 8.4 प्रतिशत था।

3) खाड़ी युद्ध (1990-91) के कारण तेल की कीमत में वृद्धि के फलस्वरूप भारत के लिए तेल का आयत करना महंगा हो गया। जिसका प्रभाव भारत के विदेशी मुद्रा भण्डार पर पड़ा। जून 1991 तक भारत का विदेशी मुद्रा भण्डार घटकर मात्र 2 सप्ताह के आयात के लिए ही पर्याप्त रह गया।

इस प्रकार भारत पर गंभीर भुगतान संतुलन संकट आ गया था। इसी परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति, व्यापार व विनिमय दर नीति, विदेशी निवेश नीति तथा कर आदि में सुधार किए।

❐ नई औद्योगिक नीति 1991

1991 के आर्थिक सुधारों के अन्तर्गत जितने भी क्षेत्रों में परिवर्तन किए गए, उनमें सबसे अधिक परिवर्तन औद्योगिक नीति के अन्तर्गत किए गए। उदारीकरण (Liberalisation), निजीकरण (Privatisation) तथा वैश्वीकरण (Globalisation) जो नई आर्थिक नीति के आधार स्तम्भ थे, वे सभी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से औद्योगिक नीति से जुड़े हुए थे। 24 जुलाई, 1991 को प्रधानमंत्री नरसिंम्हा राव (वित्तमंत्री मनमोहन सिंह) ने नई औद्योगिक नीति की घोषणा की। इसके महत्वपूर्ण सुधार निम्नलिखित हैं –

1) **औद्योगिक लाइसेंसिंग की समाप्ति** – 1991 के आर्थिक सुधार के तहत लाइसेंसिंग की प्रक्रिया को उदार बनाया गया। इसके तहत 18 उद्योगों की एक सूची जारी की गई, जिनके लिए लाइसेंस लेना अनिवार्य किया गया। वर्तमान में केवल 5 मदें ही हैं, जिनके लिए लाइसेंस लेना अनिवार्य हैं –

- अल्कोहलयुक्त पेय पदार्थों का आसवन व निर्माण।
- तम्बाकू के सिगार, सिगरेट एवं तम्बाकू से बनी अन्य वस्तुएं।
- इलेक्ट्रॉनिक एयरोस्पेस तथा रक्षा साज-सामान।
- उद्योगिक विस्फोटक।
- जोखिम वाले रसायन।

2) **उद्योगों को अनारक्षित करना** – 1991 की नीति के तहत सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका को सीमित किया गया। उद्योगों को अनारक्षित कर निजी क्षेत्र के निवेश खोल दिए गए। वर्तमान में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए केवल 3 उद्योग ही आरक्षित हैं –

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- रेल परिवहन।
- परमाणु उर्जा।
- परमाणु उर्जा आयोग द्वारा जारी आदेश के अन्तर्गत विशिष्ट उत्पाद (Substances Specified) जैसे - हाइड्रोसोनिक एसिड, फासेजिन, आइसो काइनेट्स तथा डाइसो काइनेट्स।

3) **MRTP Act. की समाप्ति** - MRTP Act. के अन्तर्गत ऐसी कंपनियां जिनकी संपत्ति 100 करोड़ रुपए से अधिक थी, उन्हें MRTP कंपनी कहा गया। 1991 में इस सीमा को समाप्त किया गया, ताकि उद्योगों का विलय तथा अधिग्रहण को सरल बनाया जा सके। अक्टूबर 1999 में राघवन समिति ने MRTP Act. की जगह भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग (CCI) के गठन की सिफारिश की। वर्ष 2002 में सरकार ने भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग गठित कर MRTP Act. को प्रतिस्थापित कर दिया।

4) **फेमा द्वारा फेरा का प्रतिस्थापन** - विदेशी व्यापार व भुगतान को सुगम बनाने तथा पूंजी व निवेश के अन्तर्प्रवाह को बढ़ाने के लिए कठोर फेरा अधिनियम की जगह वर्ष 2000 में उदार फेमा लाया गया।

5) **विदेशी निवेश को प्रोत्साहन** - 1990 तक भारतीय अर्थव्यवस्था का स्वरूप बंद अर्थव्यवस्था की तरह था। भारत ने विदेशी पूंजी निवेश के प्रति कभी इच्छा नहीं जताई, किन्तु नई औद्योगिक नीति में विदेशी निवेश के प्रति उदार नीति अपनाई। वर्तमान में 4 क्षेत्रों को छोड़कर सभी में विदेशी निवेश की अनुमति है -

- एकल ब्राण्ड रिटेलिंग को छोड़कर रिटेल ट्रेडिंग।
- परमाणु उर्जा।
- लॉटरी।
- जुआ व सट्टे बाजी।

6) **सार्वजनिक उद्योगों को प्रतिस्पर्धी बनाना** - उदारीकरण, वैश्वीकरण तथा निजीकरण की अवधारणा को अपनाने के बाद सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह भी सार्वजनिक उद्योगों को पेशेवर बनाए। निजी क्षेत्रों द्वारा उत्पन्न की गई प्रतिस्पर्धा का सामना करने के लिए, उन्हें अधिक से अधिक वित्तीय स्वायत्ता दी जाए। वर्तमान में वित्तीय स्वायत्ता के आधार पर इन्हें 3 वर्गों में बांटा गया है -

	पात्रता	**निवेश के लिए स्वायत्ता**	**कंपनियां**
मिनीरत्न I	वे उद्यम जिन्होंने पिछले 3 वर्षों में लगातार मुनाफा कमाया है तथा इन 3 वर्षों में किसी 1 वर्ष में 30 करोड़ या अधिक का शुद्ध लाभ अर्जित किया है।	ये उद्यम 500 करोड़ रुपए या अपने शुद्ध मूल्य (Net Worth) के बराबर पैसा (जो भी कम हो) सरकार की मंजूरी के बिना खर्च कर सकते हैं।	56 कंपनियां
मिनीरत्न II	वे उद्यम जिन्होंने पिछले 3 वर्षों में लगातार लाभ कमाया हो और जिनका शुद्ध मूल्य (Net Worth) सकारात्मक है।	ये उद्यम अपने शुद्ध मूल्य का 50 प्रतिशत तक अथवा 150 करोड़ (जो भी कम हो) तक खर्च कर सकती है।	17 कंपनियां **कुल मिनीरत्न उद्यम 56 + 17 =73**
नवरत्न	मिनीरत्न का दर्जा प्राप्त हो और 6 मानकों में से 100 में 60 अंक प्राप्त किए हो।	एकल परियोजना में 1000 करोड़ रुपए या अपनी परिसम्पत्ति का 15 प्रतिशत निवेश कर सकती है।	17 कंपनियां
महारत्न	3 वर्षों तक 2,500 करोड़ रुपए से अधिक का औसत वार्षिक लाभ एवं विगत 3 वर्षों तक वार्षिक परिसम्पत्ति औसतन 10,000 करोड़ रुपए हो।	किसी परियोजना में 1000-5000 करोड़ रुपए का अथाव अपनी परिसम्पत्ति का 15 प्रतिशत निवेश कर सकती है।	7 कंपनियां

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

वित्तीय नीति एवं उदारीकरण
Financial Policy & Liberlization

उदारीकरण की पूर्व संध्या तक सम्पूर्ण वित्तीय क्षेत्र अत्यधिक निरीक्षण, शाखा लाइसेंसिंग, ऊँची एस. एल. आर. एवं विभेदीकृत ब्याज दर, निर्देशित साख प्रत्यागम आदि से जकड़ा हुआ था। इन सभी ने बैंकों के घाटों को बढ़ाने के साथ-साथ उनकी प्रतिस्पर्धा को भी कम कर दिया था। इस प्रकार इन समस्याओं के साथ आर्थिक सुधारों की अवधि में वित्तीय क्षेत्र में भी सुधारों का आगमन परिहार्य हो गया। इस आशय हेतु सरकार ने वित्तीय प्रणाली पर नरसिंहम समिति का गठन किया। 17 नवंबर, 1991 को नरसिंहम समिति ने संसद में रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें समिति ने वित्तीय क्षेत्रों में सुधारों की सिफारिश की।

इसके अतिरिक्त सरकार ने एक अन्य समिति बैंकिंग क्षेत्र मे सुधार के संबंध में एम. नरसिंहम की अध्यक्षता में नियुक्त की। इस समिति ने अप्रैल, 1998 मे अपनी सिफारिशें दीं। 1990 के दशक में और इसके बाद उदारीकरण के दौरान बैंकिंग क्षेत्र में जो भी सुधार किए गए, उन सभी पर नरसिंहम समिति 1 एवं 2 की सिफारिशों का प्रभाव देखा जा सकता है। हम सम्पूर्ण वित्तीय सुधारों को निम्नलिखित शिर्षकों में समझ सकते हैं -

1) **विवेकपूर्ण नियंत्रण एवं निरीक्षण** - वित्तीय व्यवस्था पर नरसिंहम समिति ने सिफारिश की कि देश में बैंकिंग व्यवस्था पर निरीक्षण को अधिक कारगर बनाए जाए। समिति की सिफारिशों को सरकार ने मानकर रिजर्व बैंक के माध्यम से लागू करने का प्रयास किया। पूंजी की पर्याप्तता के लिए 9 प्रतिशत मानक तय किया गया। हाल के वर्षों में सभी सभी बैंक न्यूनतम CAR को पार करने में सफल हो गए हैं। मार्च, 2013 अन्त में सभी बैंकों की 13.9 प्रतिशत थी।

2) **सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को सक्षम बनाना** - इसके अन्तर्गत घाटे में चल रहे एवं वित्तीय दबाव झेल रहे सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए सरकार ने अतिरिक्त पूंजी की व्यवस्था की। इस पूंजी के माध्यम से इन्हें सक्षम बनाया जा सके।

3) **बैंकों के लिए वैधानिक तरलता अनुपात (SLR) और नकद कोष अनुपात (CRR) को कम करना** - नरसिंहम समिति के अनुसार SLR एवं CRR दोनों में भारी कमी करने से बैंकों की लाभप्रदता में सुधार होगा। इस दिशा में कार्य करते हुए अक्टूबर, 1997 को वैधानिक तरलता अनुपात गिराकर 25 प्रतिशत कर दिया। 14 जून, 2014 को वैधानिक तरलता अनुपात 22.5 प्रतिशत कर दिया गया। 9 फरवरी, 2013 को नकद कोष अनुपात 4.0 प्रतिशत कर दिया गया।

4) **ब्याज की दरों पर नियंत्रण समाप्त करना** - रियायती ब्याज दरों पर बैंकों को ऋण देने के लिए विवश करने का परिणाम यह हुआ कि उसकी लाभप्रदता कम हो गई। इसके साथ-साथ उधार ली जाने वाली राशियों का दुरुपयोग किया गया। इस तरह रियायती ब्याज दरों का प्रचलन समाप्त कर दिया गया। इस संदर्भ में रिजर्व बैंक ने बेस रेट लागू किया है।

5) **प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देना** - 1991 तक बैंकिंग क्षेत्र में बहुत कम प्रतिस्पर्धा थी। उदारीकरण की प्रक्रिया के दौरान सरकार ने बैंकिंग उद्योग को प्रतिस्पर्धात्मक बनाने का प्रयास किया है। इसके लिए सरकार ने विभिन्न बैंकों को काफी स्वायत्तता प्रदान की गई, ताकि वह निजी क्षेत्र से प्रतिस्पर्धा कर सके।

6) **निर्देशित साख को धीरे-धीरे समाप्त करना** - राष्ट्रीयकरण के बाद भारत के बैंकों ने सरकारी दबाव में निर्देशित साख की नीति को अपनाया। इस तरह की साख से बैंकों की लाभप्रदता कम हुई और कुशलता व सामाजिक न्याय की दृष्टि से भी कोई विशेष अधिक फायदा नहीं हुआ। नरसिंहम समिति की राय में निर्देशित साख के लिए अब कोई औचित्य नहीं है। इसलिए समिति का सुझाव है कि बैंक समस्त ऊधार की राशि का 40 प्रतिशत के बजाय केवल 10 प्रतिशत प्राथमिकता क्षेत्रों को दें।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

राजकोषीय नीति एवं आर्थिक सुधार
Fiscal Policy & Economic Reforms

1985 के पश्चात् जो भी आर्थिक संवृद्धि देखी गई, वह बढ़े हुए सार्वजनिक व्यय के कारण थी, जिसे विशाल राजकोषीय घाटे से पूरा किया गया। 1990-91 में राजकोषीय घाटा GDP के 8.2 प्रतिशत के आसपास था एवं कुल ऋण के 60 प्रतिशत के आसपास हो चला था। इस प्रकार एक विशाल राजकोषीय घाटे के साथ अर्थव्यवस्था का चलना मुश्किल था। व्यापक आर्थिक सुधारों में राजकोषीय स्थिरीकरण एक महत्वपूर्ण अंग था, क्योंकि अर्थव्यवस्था पर आए अन्य संकटों पर विशाल घाटा एक महत्वपूर्ण कारक था। अत: सरकार ने इस ओर प्रयास किए और 1995-96 तक घाटा 4.2 तक लाया गया। कालान्तर में सरकार ने इस ओर अधिक प्रयास किए एवं 26 अगस्त, 2003 को राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम (FRBM Act.) को पारित किया गया, ताकि राजकोषीय समेकन के लिए एक मजबूत सांविधिक व्यवस्था स्थापित की जा सके। 5 जुलाई, 2004 से प्रभावी इस अधिनियम की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं -

1) भारत सरकार द्वारा राजकोषीय एवं राजस्व घाटों को कम करने के लिए कदम उठाते हुए 31 मार्च, 2008 तक राजस्व घाटे को शून्य किया जाएगा। (आगे सरकार द्वारा इस अवधि को 1 वर्ष बढ़ा दिया गया था)
2) भारत सरकार द्वारा रिजर्व बैंक से अर्थोपाय अग्रिम के अतिरिक्त किसी ओर प्रकार से उधार नहीं लिया जा सकेगा।
3) राजकोषीय तथा राजस्व घाटे के निर्धारित लक्ष्यों को कुछ विशेष परिस्थितियों में, जैसे - राष्ट्रीय सुरक्षा, आपदा आदि में परिवर्तित किया जा सकेगा।
4) वर्ष 2006-07 से रिजर्व बैंक भारत सरकार द्वारा जारी की गई प्रतिभूतियों का प्राथमिक ग्राहक नहीं होगा।

इसके अतिरिक्त करारोपण प्रणाली एवं सब्सिडी में सुधार भी आर्थिक सुधार की प्रक्रिया के ही भाग हैं। इन सुधारों में कर ढांचे का सरलीकरण, अप्रत्यक्ष करों की जगह प्रत्यक्ष करों पर जोर तथा करों की दर का उचित निर्धारण शामिल है। कर सुधार हेतु सिफारिश करने के लिए सरकार ने चैलया समिति का गठन किया था, जिसकी सिफारिश के आधार सेवाकर को लागू किया गया। कर सुधार की प्रक्रिया में वेट का आगमन हुआ। कर सुधारों के इन प्रयासों में GST एवं प्रत्यक्ष कर संहिता प्रक्रिया में है।

निजीकरण
Privatisation

निजीकरण से आशय सभी प्रकार की वाणिज्यिक गतिविधियों से सार्वजनिक उपक्रमों को वापस लेते हुए इसके प्रबंधन एवं स्वामित्व को निजी क्षेत्र को सौंपने से है। सरकार इसका क्रियान्वयन विनिवेश (Dis-investment), अनारक्षण (Di-reservation) एवं प्रतिराष्ट्रीयकरण (De-nationalisation) द्वारा करती है।

आर्थिक सुधारों के पूर्व काल तक सार्वजनिक उपक्रमों के निष्पादन (Performance) संबंधी बहुत-सी समस्याएं उत्पन्न हो गई थीं, जैसे - उत्पादकता में अपर्याप्त वृद्धि, घटिया प्रोजेक्ट प्रबंधन, स्टॉफ का आवश्यकता से अधिक होना, तकनीक उन्नयन की कमी, नौकरशाही, भ्रष्टाचार, श्रमिक समस्याएं आदि। इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए सरकार ने उन वाणिज्यिक गतिविधियों से बाहर निकलना उचित समझा, जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र की आवश्यकता नहीं है एवं निजी क्षेत्र पर्याप्त रूप से कुशल है। इनके अलावा सरकार ने सार्वजनिक उपक्रमों के लिए कुछ अन्य प्रावधान किए, ताकि वे प्रतिस्पर्धी बन सके। ये प्रावधान निम्नलिखित हैं -

1) सार्वजनिक उपक्रमों को बहुत अधिक प्रबंधकीय स्वायत्ता दी जाएगी।
2) सार्वजनिक उद्यमों को प्राप्त होने वाले बजटीय समर्थन क्रमिक रूप से घटाए जाएंगे।
3) सार्वजनिक उद्यमों में बाजार संतुलन लाने के लिए निजी क्षेत्र से स्पर्धा को बढ़ावा दिया जाएगा और कुछ चुने हुए उद्यमों में हिस्सा पूंजी का विनिवेश किया जाएगा।
4) ऐसे सार्वजनिक उद्यम, जो जीर्णरूप से बीमार हैं तथा जिनके सक्षम होने की कोई संभावना नहीं है, उन्हें पुन: स्थापना के लिए औद्योगिक व वित्तीय पुनर्निमाण बोर्ड (Bord of Industrial & Financial Reconstruction) को सौंप दिया जाएगा।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

5) श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रक्रिया कायम की जाएगी, ताकि विस्थापित श्रमिकों को राहत पहुंचाई जा सके।

6) संसाधन गतिमान करने एवं सार्वजनिक सहयोग को बढ़ावा देने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र में सरकारी हिस्सा पूंजी के एक भाग को पारस्परिक निधियों (Mutual Funds), वित्तीय संस्थानों, सामान्य जनता को बेचा जाएगा।

7) सार्वजनिक क्षेत्र की कम्पनियों के बोर्डों को अधिक व्यवसायिक (Professional) बनाया जाएगा एवं उन्हें और अधिक अधिकार दिए जाएंगे।

कालान्तर में सरकार ने इस आशय हेतु मिनीरत्न, नवरत्न, महारात्न जैसी अवधारणा को लागू किया है, जिनका उद्देश्य प्रतिस्पर्धा बढ़ाना, निवेश निर्णयों में स्वायत्ता प्रदान करना है।

वैश्वीकरण
Globlisation

साधारण शब्दों में वैश्वीकरण का अर्थ है – देश की अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ एकीकृत (Intigrate) करना। भारतीय संदर्भ में इसका अर्थ है – विदेशी कंपनियों को भारत की विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में निवेश की अनुमति देकर अर्थव्यवस्था को विदेशी निवेश के लिए खोलना, विदेशी विनिमय नियंत्रण को कम करना, विदेशी कंपनियों को भारतीय कंपनियों के साथ सहयोग करने की अनुमति देना, आयात-निर्यात उदारीकृत करना आदि शामिल हैं।

वैश्विकरण की दिशा में भारत सरकार ने 1980 के दशक से ही प्रयास करने प्रारंभ कर दिए थे, किन्तु वैश्विकरण की प्रक्रिया में तेजी भारत सरकार द्वारा जुलाई, 1991 में लागू की गई नई आर्थिक नीति के परिणामस्वरूप आई। यह नीतिगत परिवर्तन 1990 के बाद आए भुगतान शेष की गंभीर समस्याओं के कारण हुआ। यह भुगतान संतुलन की समस्या सोवियत विघटन, खाड़ी युद्ध, मुद्रास्फीति आदि का सम्मिलित परिणाम थी। इस प्रकार इन तत्वों ने भारत को सुधार के लिए बाध्य किया एवं अपनी ऋण आवश्यकताओं के लिए IMF एवं विश्व बैंक के समक्ष पहुंचे भारत को विदेशी क्षेत्र में संरचनात्मक परिवर्तन के लिए बाध्य होना पड़ा। इन परिवर्तनों का हम निम्नलिखित शीर्षकों में उल्लेख कर सकते हैं –

- **विनियम दर समायोजन और रुपए की परिवर्तनीयता**

भारत सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय दबाव के चलते जुलाई, 1991 में क्रमागत रूप से 2 चरणों में रुपए का 18-19 प्रतिशत अवमूल्यन किया। इसके बाद सरकार ने विदेशी विनिमय क्षेत्र में पूर्ण परिवर्तनीयता की ओर कदम बढ़ाए एवं तैरती विनिमय दर प्रणाली (Flooting Exchang Rate) को धीरे-धीरे अपनाने का प्रयास किया। 1992-93 में दोहरी विनिमय दर प्रणाली शुरू की गई, जिसका अर्थ था – रूपए की आंशिक परिवर्तनीयता। यहां एक दर बाजार शक्ति पर आधारित थी, वहीं दूसरी दर आवश्यक वस्तुओं के लिए रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित थी। 1993-94 तक व्यापार खाते पर पूर्ण परावर्तनीयता को लागू कर दिया गया एवं 19 अगस्त, 1994 को सम्पूर्ण चालू खाते पर पूर्ण परिवर्तनीयता को लागू किया गया। ज्ञातव्य हो कि वर्तमान में भी पूंजी खाते पर पूर्ण परावर्तनीयता लागू नहीं है।

- **आयात उदारीकरण**

आर्थिक सुधारों के आगमन पर भारत सरकार ने 20 मदों पर से इस शर्त को हटा लिया कि इनका आयात केवल सरकारी एजेंसियों के माध्यम से ही हो सकता है। बाद में अधिकतम आयात शुल्क को 110 प्रतिशत कम करके 85 प्रतिशत कर दिया गया। वर्तमान में समस्त गैर-कृषि वस्तुओं पर उच्चतम आयात शुल्क केवल 10 प्रतिशत है।

- **विदेशी पूंजी को सुविधाएं**

इस क्षेत्र में सरकार ने उच्च प्राथमिकता वाले ऐसे क्षेत्र, जिसमें तकनीक की आवश्यकता थी, 51 प्रतिशत तक बिना सरकार की अनुमति से विदेशी इक्विटी को अनुमति दी। अनिवासीय भारतीयों को उच्च प्राथमिकता वाले उद्योगों में 100 प्रतिशत तक इक्विटी रखने की तथा अर्जित आय को विदेश ले जाने की छुट दी।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

प्रतिष्ठित विदेशी संस्थागत निवेशकों को भारतीय पूंजी बाजार में सशर्त निवेश करने की छूट दी गई। कुछ गतिविधियों को छोड़कर अन्य सभी विनिर्माण गतिविधियों में विशिष्ट आर्थिक क्षेत्रों में 100 प्रतिशत विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को अनुमति दी गई। घरेलू निजी एयरलाइंस में विदेशी निवेश की सीमा 49 प्रतिशत तक बढ़ा दी गई। निजी क्षेत्र में कार्यरत बैंकों में विदेश निवेश की सीमा को बढ़ाकर 74 प्रतिशत कर दिया गया।

❐ आर्थिक सुधारों के प्रभाव (Impact of Economic Reforms)

आर्थिक सुधारों का अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों पर प्रभाव पड़ा। इन समस्त प्रभावों को सम्मिलित रूप से हमें निम्नलिखित शीर्षकों में समझ सकते है -

• आर्थिक सुधार एवं राष्ट्रीय आय (Economic Reforms & National Income)

आर्थिक सुधारों के परिणामस्वरूप सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के सापेक्षत: उच्च वृद्धि दर प्राप्त हुई। 1980-81 से 1990-91 में GDP की औसत वार्षिक वृद्धि दर 5.2 थी, किन्तु यह वृद्धि दर स्थिर नहीं थी। आर्थिक सुधारों के बाद 1993-94 से 1997-98 के दौरान औसत वृद्धि दर 7 प्रतिशत प्रतिवर्ष रही। आर्थिक सुधारों के वास्तविक परिणाम वर्ष 2001-02 के बाद आने शुरू हुए एवं भारत ने लगातार 5 प्रतिशत से ऊपर वार्षिक वृद्धि बनाए रखी। वर्तमान में 7.2 प्रतिशत के साथ भारत विश्व में सर्वाधिक वृद्धि दर वाला राष्ट्र बन गया है।

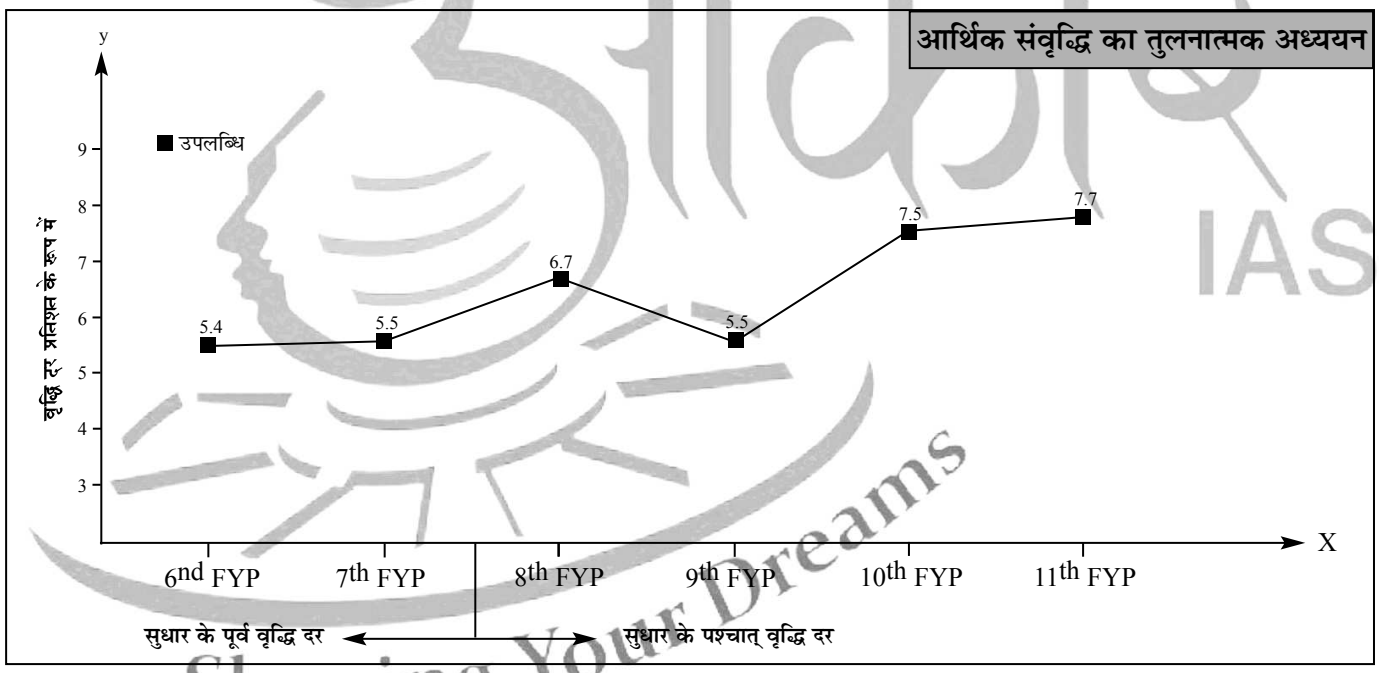

• आर्थिक सुधार एवं गरीबी में कमी (Economic Reforms & Povarty Alleviation)

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के 61वें राउंड के आधार पर योजना आयोग ने अनुमान लगाया कि समग्र गरीबी अनुपात, जो 1993-94 में 36 प्रतिशत था कम होकर 2004-05 में 27.5 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार आलोचात्मक दृष्टि से कहा जा सकता है कि जिस समय देश में वृद्धि अपने चरम पर थी, तब इन 11 वर्षों की अवधि में गरीबी केवल 8.5 प्रतिशत ही कम हुई। इस प्रकार प्रतिशत गिरावट के अलावा गरीबों की कुल संख्या में कोई ज्यादा परिवर्तन नहीं आया।

• आर्थिक सुधार एवं रोजगार (Economic Reforms & Employment)

आर्थिक सुधार रोजगार पर कोई सकारात्मक प्रभाव छोड़ने में नाकाम रहे। आर्थिक सुधारों के बाद आई वृद्धि की लहर रोजगारविहीन (Jobless) रही। 1983 से 1990-91 के मध्य तक रोजगार की वृद्धि दर 2.39 प्रतिशत वार्षिक औसत थी। सुधार बाद की अवधि में 1990-91 से 1997-98 तक रोजगार वृद्धि केवल 1 प्रतिशत वार्षिक औसत रही। विशेष बात यह रही कि यह संगठित क्षेत्र में केवल 0.6 प्रतिशत रही। इस प्रकार आर्थिक सुधार के कारण रोजगार का अनियतीकरण (Casualization) हो गया।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

असंगठित क्षेत्र में आज भी देश के 90 प्रतिशत रोजगार प्राप्त होते हैं तथा ये क्षेत्र सामाजिक सुरक्षा लाभों, पेंशन एवं स्वास्थ्य भत्ता, रोजगार गारंटी आदि से अछुता रहता है। असंगठित क्षेत्र में काम की दशाएं भी ठीक नहीं होती हैं। इन क्षेत्र मजदूरी एवं वेतन भी कम होता है। अफसोस कि आर्थिक सुधार देश के रोजगार ढांचे को असंगठित से संगठित क्षेत्र में बदलने में नाकाम रहे। इसका एक नुकसान यह भी हुआ कि संगठित क्षेत्र के कामगार ऊँचा वेतन ले जाते हैं, जिससे समाज में व्यापक असमानता को बढ़ावा मिला।

- **आर्थिक सुधार एवं कृषि (Economic Reforms & Agriculture)**

सुधार पूर्व अवधि में कृषि क्षेत्र में वृद्धि दर 3.52 प्रतिशत थी, जो 1997-98 से 2001-02 के मध्य गिरकर 2.50 प्रतिशत हो गई। कृषि क्षेत्र का सबसे बुरा समय 2002-03 से 2004-05 के मध्य देखा गया, जब कृषि क्षेत्र में वृद्धि दर केवल 0.89 आ गई, किन्तु 2005-06 के बाद पुनर्प्राति हई एवं कृषि क्षेत्र में वृद्धि दर 2006-07 में 4.84 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार कृषि की संवृद्धि दर अस्थिर रही, जिसके कारण सुधारों के सकारात्मक अथवा नकारात्मक प्रभावों का आकलन करना मुश्किल है।

चूंकि आर्थिक सुधार ऑफ फार्म आए थे, अर्थात् - सुधारों में कृषि क्षेत्र के लिए कोई स्पष्ट नीति नहीं थी। अत: सुधारों का कृषि क्षेत्र पर कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं हो सकता था। सुधारों के अन्य घटकों के कारण कृषि क्षेत्र पर प्रभाव देखे गए। सुधारों के बाद आय में हुई वृद्धि के कारण गैर-खाद्यान्न कृषिगत वस्तुओं की मांग बढ़ी। मांस, मछली, अंडा, दुग्ध उत्पाद आदि का उपभोग तेजी से बढ़ा। आयत-निर्यात उदारीकरण के कारण कृषि वस्तुओं की टर्म्स ऑफ ट्रेड में भी सुधार हुआ, जिसे कृषिगत वस्तुओं का निर्यात बढ़ा। 2013-14 में कृषि एवं सहायक वस्तुएं (Agricultural & Allied goods) दूसरी सबसे बढ़ी निर्यातित मद थी। आर्थिक सुधारों के कारण भारतीय कृषिगत वस्तुओं को एक बड़ा बाजार मिला। उद्योगों को संरक्षण समाप्त कर देने से उद्योग व कृषि दोनों की स्थिति समान हो गई। इसने कृषि को भी लाभ का व्यापार बनने के लिए प्रेरित किया एवं कृषि में भी निजी निवेश का प्रारंभ हुआ।

- **आर्थिक सुधार एवं औद्योगिक विकास (Economic Reforms & Industrial Development)**

1980 से 1991 तक औद्योगिक संवृद्धि दर 7.2 प्रतिशत वार्षिक थी, जो 1991 से 2000 में गिरकर 5.2 प्रतिशत वार्षिक हो गई। 2000-01 में सबसे खराब स्थिति देखी गई एवं औद्योगिक संवृद्धि 2.7 प्रतिशत हो गई। सुधारों के तत्काल बाद औद्योगिक क्षेत्र के कमजोर निष्पादन के निम्नलिखित कारण थे -

1) सुधार पूर्व काल में संरक्षण प्राप्त उद्योगों को अचानक उदारीकृत व्यवस्था में विदेशी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ा।
2) भारत में आर्थिक सुधार ऐसे समय में आए, जब तक अधोसंरचना काफी जर्जर थी। अत: बिना अधोसंरचना के सुधारों के बावजूद उद्योग पर्याप्त विकास नहीं कर पाए।
3) सुधारों के आगमन से एकाएक निवेश संभव नहीं था, जिससे निवेश में कमी बनी रही।
4) निर्यातों में शिथिलता बनी रही।
5) उपभोक्ता की मांग में संकुचन था।

उदारीकरण की संध्या 1990-91 में उद्योगों का GDP में भाग 24 प्रतिशत था, जो वर्ष 2011 तक 24.7 प्रतिशत तक ही पहुंच पाया। इस प्रकार सुधार तीव्र उद्योगीकरण में असफल रहे। आर्थिक सुधारों के पश्चात् उद्योगों में टिकाऊ (Durable) वस्तुओं का उत्पादन अत्यधिक बढ़ा, जो दर्शाता है कि विलासिता वस्तुओं की मांग आर्थिक सुधार के बाद बढ़ी। पेट्रो रसायन उद्योगों का महत्व भी बढ़ा। कुल निर्यात में पेट्रो रसायन पदार्थों का भाग 13.2 प्रतिशत है। आर्थिक समीक्षा 2013-14 के अनुसार यह इंजीनियरिंग एवं कृषि वस्तुओं के बाद तीसरी सर्वाधिक निर्यातित मद है।

सुधारों का सर्वाधिक सकारात्मक प्रभाव तो केवल सेवा क्षेत्र पर पड़ा। 1990-91 में राष्ट्रीय आय में सेवा क्षेत्र का हिस्सा 38 प्रतिशत था, जो 2010-11 में 60.3 प्रतिशत पर पहुंच गया। भारत सेवाओं का एक बड़ा निर्यातक बनकर उभरा। भारत सूचना प्रौद्योगिकी एवं BPO के क्षेत्र में विश्व नेता बनकर उभरा है। एक वृहद नकारात्मक परिणाम यह हुआ कि सेवा क्षेत्र की छोटी-सी श्रम शक्ति राष्ट्रीय आय का बड़ा अंश ले जाती है, जो व्यापक असमानता का कारण है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

- **आर्थिक सुधार एवं अवसंरचना विकास (Economic Reforms & Infrastructure Development)**

आर्थिक सुधारों के पश्चात् इस्पात एवं सीमेंट के उत्पादन ने अत्यधिक वृद्धि हुई। सार्वजनिक-निजी भागीदारी (PPP) के आगमन से सड़कों, पुलों एवं यातायात के अन्य साधनों का अत्यधिक विकास हुआ। परिवहन में रेलवे को छोड़कर सभी क्षेत्रों में निजी क्षेत्र का आगमन हुआ, जिससे व्यापक प्रतिस्पर्धा बढ़ी। इससे परिवहन किराये में कमी आई एवं कार्यकुशलता बढ़ी। इन सबके बावजूद अन्य आधार संरचना उद्योगों बिजली, कोयला, पेट्रोलियम उत्पादों ने सुधार उपरान्त काल में अच्छी प्रगति नहीं दिखाई। सुधारों के बाद जब राज्य ने आधार संरचना क्षेत्र (Infrastructure) में निवेश करने में अपने हाथ पीछे खींच लिए, निजी क्षेत्र भारतीय एवं विदेशी इस रिक्ति को भरने में असफल रहा। अतः सुधार उपरान्त काल में निजी क्षेत्र पर अत्यधिक निर्भरता के परिणामस्वरूप बहुचर्चित एवं इच्छित परिणाम प्राप्त न हो सके।

❒ वैश्वीकरण के प्रभाव (Impact of Globlization)

वैश्वीकरण के प्रभाव को हम निम्नलिखित शिर्षकों में समझ सकते हैं -

1) **सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव** - वैश्वीकरण की संकल्पना ने उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया। कला, फैशन, संगीत, नृत्य, पर्यटन आदि सांस्कृतिक उपभोग की प्रवृत्ति में आ गए। एकल परिवार, विलासितापूर्ण जीवनशैली आदि का आगमन हुआ। वैश्वीकरण ने शहरीकृत सामाजिक ढांचे को जन्म दिया, जिसके कारण प्रवजन बढ़ा।

2) **महिला सशक्तीकरण** - वैश्वीकरण ने महिला सशक्तीकरण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। महिलाओं के लिए आर्थिक अवसरों का विस्तार हुआ। घर के भीतर से लेकर घर के बाहर तक निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी। एक नकारात्मक प्रभाव यह पड़ा कि महिलाओं का वस्तुवादीकरण हो गया। परिणामस्वरूप यौन उत्पीड़न की संख्या में वृद्धि हुई।

3) **कमजोर एवं वंचित समूहों पर असर** - चूंकि वैश्वीकरण राज्य की कल्याणकारी भूमिका की बजाय बाजार कुशलता पर जोर देता है और राज्य की सीमित भूमिका का पक्षधर है, इसलिए पिछले 2 दशकों में सामाजिक सुरक्षा कवच कमजोर हुआ। इसमें समाज के असहाय व वंचित समूहों को असुरक्षित कर दिया। अत्यधिक निर्माण कार्यों में वनों का उन्मूलन किया एवं आदिवासियों के वनाधिकार का उल्लंघन हुआ।

❒ आर्थिक सूधारों का मूल्यांकन (Evaluation of Economic Reforms)

1991 में जिन आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया शुरू हुई थी, उसने व्यापक असमानता को जन्म दिया। बेरोजगारी, गरीबी उन्मूलन आदि में आर्थिक सुधार असफल रहे। यह सिद्ध हो चुका है कि सुधारों के बाद हुआ विकास समावेशी नहीं था। आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया मुख्यतः शहर केन्द्रित रही। गांवों एवं शहरों के मध्य असंतुलन में वृद्धि हुई। राज्यवार विषमता को भी बढ़ावा मिला। आर्थिक विकास का संकेन्द्रण कुछ राज्यों दिल्ली, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु एवं गुजरात में हुआ। पिछड़े राज्यों से इन राज्यों में पलायन बढ़ा।आर्थिक उदारीकरण की नीतियों ने कृषि की कीमत पर उद्योगों के विकास को जन्म दिया। कृषि का राष्ट्रीय आय में हिस्सा लगातार घटता चला गया, किन्तु कृषि की श्रम शक्ति समान स्तर पर बनी रही। अतः व्यापक प्रच्छन्न बेरोजगारी कृषि क्षेत्र में देखी गई। आर्थिक सुधारों के बाद वित्तीय क्षेत्र का शहरों एवं बड़े उद्यमियों को अधिक लाभ मिला। कृषि, मझौले उद्यम एवं सीमांत परिवार ऋण की पर्याप्त उपलब्धता से बाहर ही रहे। कृषि क्षेत्र में वित्तीय क्षेत्र की असफलता विगत वर्षों में ऋणग्रस्तता के कारण होने वाली किसानों की आत्महत्या से स्पष्ट होती है।

निसंदेह यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि आर्थिक सुधारों ने देश के पूर्व प्रचलित विसंगत आर्थिक ढांचे के स्थान पर एक नवीन संगत आर्थिक ढांचे का निर्माण किया। अर्थव्यवस्था के कई क्षेत्र आर्थिक सुधारों से लाभान्वित हुए। बढ़ी हुई जीडीपी, प्रतिव्यक्ति आय आदि से अर्थव्यवस्था को लाभ प्राप्त हुआ। अत्यधिक वैश्वीकृत विश्वमंच पर भारत ने अपना स्थान बनाया। किन्तु आर्थिक सुधारों का अर्थव्यवस्था को हुए लाभों का अनुभव निचले वर्गों तक नहीं हो सका। अतः एक समावेशी विकास मॉडल की आवश्यकता है, जिसके द्वारा समाज के प्रत्येक वर्ग का आर्थिक एवं सामाजिक विकास संभव हो सके।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

मुद्रास्फीति
Inflation

वस्तओं एवं सेवाओं की सामान्य कीमत स्तर (Genral Price Level) में होने वाली वृद्धि को मुद्रास्फीति कहते हैं। इसके कारण मुद्रा की क्रय क्षमता घट जाती है। आम बोलचाल की भाषा में मुद्रास्फीति महंगाई है। उदाहरणार्थ - वर्ष 2000 में 100 रुपए में जितना सामान आता था, उतना ही सामान वर्ष 2010 में खरीदने के लिए 200 रुपए की जरूरत पड़ती है, तो यह कहा जाएगा कि मुद्रास्फीति में शत्-प्रतिशत् की वृद्धि हुई है।

कहने का आशय यह हुआ कि मुद्रा की क्रय शक्ति मूल्य स्तर के व्युत्क्रम (Reciprocal) होती है और मूल्य स्तर का बढ़ना मुद्रा की क्रय शक्ति का गिरना प्रदर्शित करेगा (क्योंकि इस स्थिति में पहले की अपेक्षा मुद्रा से कम ही क्रय किया जा सकेगा) तथा मूल्य स्तर की कमी मुद्रा के मूल्य में वृद्धि प्रदर्शित करेगी। मुद्रास्फीति 2 प्रकार की होती है - लागतजन्य मुद्रास्फीति (Cost Pushed Inflation) व मांगजन्य (Demand Pushed Inflation) मुद्रास्फीति।

❒ मुद्रास्फीति के कारण (Causes of Inflation)

◆ मांग आधिक्य के फलस्वरूप मूल्य स्तर में वृद्धि वाले कारक

1) बढ़ता सरकारी व्यय, जिसके फलस्वरूप सामान्य जनता के हाथों मे अधिक धन आ जाता है, जो उनकी क्रम क्षमता को बढ़ाकर मांग में वृद्धि करता है।
2) घाटे की वित्तीय व्यवस्था जब नई मुद्रा छापकर की जाती है, तो यह मुद्रा प्रसार के साथ मुद्रास्फीति में भी वृद्धि करती है।
3) बैंकों द्वारा अधिक मात्रा में साख मुद्रा का निर्माण या लोगों को ऋण देना।
4) जनसंख्या में की हुई वृद्धि या पड़ोसी देशों से शरणार्थियों के कारण जनसंख्या के आकार तथा मांग में वृद्धि।
5) विदेशी पूंजी के अधिक अन्तर्प्रवाह के कारण मुद्रा प्रसार, परिणामस्वरूप मांग में वृद्धि।

◆ ऐसे कारक जो अर्थव्यवस्था में पूर्ति की मात्रा में कमी लाते हैं

1) आगत की कमी, बाढ़, सूखा का होना, उत्पादकता में कमी आदि के कारण कृषि क्षेत्र के खाद्यान्नों की पूर्ति में कमी आए।
2) राजनीतिक वातावरण की प्रतिकूलता, कच्चा माल, ऊर्जा की अनुपलब्धता, श्रमिकों की हड़ताल, पूंजी की अनुपलब्धता, व्यापारिक बैंकों द्वारा दिए जाने वाले ऋण में कमी या सभी प्रकार के अवरोध, जो औद्योगिक उत्पादन में कमी लाए।
3) वस्तुओं की पूर्ति को कृत्रिम रूप से जान-बूझकर अवरोधित करना या वस्तुओं के स्टॉक के आधार पर बैंक से ऋण लेना तथा इस प्रकार बाजार में पूर्ति में जान-बूझकर कमी लाना जैसे होर्डिंग के द्वारा।
4) आयात, विशेष रूप से ऐसी वस्तुओं के आयात को प्रतिबन्धित करना या कमी लाना जिनकी कमी के कारण मूल्य बढ़ रहा है। अथवा घरेलू पूर्ति पर ध्यान दिए बिना इन वस्तुओं का निर्यात करना।

◆ ऐसे कारण जो वस्तुओं की लागत में वृद्धि तथा परिणामस्वरूप मूल्य में वृद्धि लाते हैं

1) मजदूरी अथवा वेतनों में वृद्धि।
2) अप्रत्यक्ष कर की ऊँची दर जो सामान्य रूप से वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि लाती है, पर इसका प्रभाव और गम्भीर होगा यदि माध्यमिक वस्तुएं अत्यधिक करारोपित हों।
3) प्रशासनिक मूल्य नीति, रेलवे सेवा, स्टील, सीमेन्ट, कोयला, पेट्रोल-डीजल आदि के मूल्य में वृद्धि, जो लागत में वृद्धि लाए।
4) ब्याजदर में वृद्धि, फलस्वरूप ऋण लागत में वृद्धि।
5) तेल संकट तथा पेट्रोल के अन्तर्राष्ट्रीय मूल्य में तेजी से वृद्धि, जो आगत को प्रभावित करके मूल्य स्तर में वृद्धि लाए। उर्वरक की लागत में वृद्धि कृषि वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि लाती है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ मुद्रास्फीति को रोकने के उपाय (Measures to Check Inflation)

- **मौद्रिक नीति द्वारा**

मुद्रास्फीति को रोकने के लिए इस प्रकार की मौद्रिक नीति अपनाई जाती है, जिससे अर्थव्यवस्था में मुद्रा की आपूर्ति/प्रचलन घटाया जा सके। अर्थात् उपभोक्ता के पास धन की कमी करके उसकी मांग पर अंकुश लगाने की कोशिश की जाती है, ताकि निम्न मांग से मुद्रास्फीति घटे। जैसे –

1) बैंक दर में वृद्धि।
2) सी. आर. आर. तथा एस. एल. आर. में वृद्धि।
3) रीपो के द्वारा तरलता कम करना।
4) खुले बाजार की क्रियाओं के अन्तर्गत प्रतिभूतियों का विक्रय।

- **राजकोषीय नीति द्वारा**

राजकोषीय नीति के अन्तर्गत सरकार को ऐसी नीति आपनानी होती है, जिससे मुद्रा प्रसार में कमी हो। जैसे –

1) प्रत्यक्ष कर में वृद्धि, जिससे व्यय योग्य आय में कमी हो।
2) अप्रत्यक्ष करों में कमी, ताकि वस्तुओं के मूल्यों में कमी की जा सके।
3) सार्वजनिक व्यय में कमी।
4) हीनार्थ प्रबंधन तथा मौद्रीकरण पर रोक।

- **आयात-निर्यात नीति**

स्फीति संवेदनशील उपभोग वस्तुओं के आयात को प्रोत्साहित करना तथा उनके निर्यात को प्रतिबंधित करना।

- **उत्पादन की वृद्धि तथा लागत में कमी के उपाय**

1) आवश्यक उपभोग वस्तुओं के उत्पादन को प्रोत्साहित करना।
2) संवेदनशील वस्तुओं के संग्रहण पर रोक लगाना।
3) वस्तुओं की राशनिंग तथा बफर स्टाक के निर्माण पर बल।
4) मजदूरी तथा लाभ की वृद्धि पर रोक।

❐ मुद्रास्फीति की माप (Measurement of Inflation)

भारत में मुद्रास्फीति का मापन थोक मूल्य सूचकांक (Whole Price Index) तथा उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (Consumer Price Index) से होता है।

- **थोक मूल्य सूचकांक (Whole Price Index)**

थोक मूल्य सचकांक एक मूल्य सूचकांक है, जो चुनी हुई वस्तुओं के सामूहिक औसत मूल्य का प्रतिनिधित्व करता है। भारत में थोक मूल्य सूचकांक को आधार मानकर महंगाई दर की गणना होती है। थोक मूल्य सूचकांक के लिए एक आधार वर्ष होता है। इसके अलावा वस्तुओं का समूह होता है, जिनके औसत मूल्य का उतार-चढ़ाव थोक मूल्य सूचकांक के उतार-चढ़ाव को निर्धारित करता है।

भारत में थोक मूल्य सूचकांक का संकलन वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय के आर्थिक सलाहकार कार्यालय द्वारा मासिक स्तर पर होता है, जो पहले साप्ताहिक स्तर पर होता था। मुद्रास्फीति के आकलन को प्रभावी बनाने की दिशा में सरकार ने नया थोक मूल्य सूचकांक जारी किया है, जिसका आधार वर्ष 2004-05 है। इसमें 676 मदों को आधार बनाया गया है।

- **उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (Consumer Price Index)**

उपभोक्ता मूल्य सूचकांक घरेलू उपभोक्ताओं द्वारा खरीदे गए सामानों एवं सेवाओं के औसत मूल्य को मापने वाला एक सूचकांक है। उपभोक्ता मूल्य सूचकांक की गणना वस्तुओं एवं सेवाओं के एक मानक समूह के औसत मूल्य की गणना करके की जाती है। भारतीय उपभोक्ताओं की सामाजिक आर्थिक विषमता के कारण इनकी क्रय शक्ति एवं क्रय व्यवहार समान नहीं है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय (CSO) ने देश में खुदरा मूल्यों में होने वाले उतार-चढ़ावों के प्रभावी आंकलन हेतु अखिल भारतीय और राज्य - संघ शासित प्रदेशों के लिए ग्रामीण, शहरी व संयुक्त उपभोक्ता मूल्य सूचकांक की नई श्रृंखला 18 फरवरी, 2011 से शुरू की। इसमें शहरी सूचकांक CPI-Urban तथा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए CPI-Rural है।

शहरी सूचकांकों के लिए आंकड़ों का आकलन राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण NSSO द्वारा किया जाता है, जबकि ग्रामीण सूचकांक के लिए गांवों से मूल्य संबंधी आकलन डाक विभाग के सहयोग से सांख्यिकी एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय द्वारा एकत्र किए जाएंगे। इन सूचकांकों का आधार वर्ष पूर्व में 2010 था, जो बाद में जनवरी, 2015 में **2012** किया गया है।

ज्ञातव्य हो कि उर्जित पटेल समिति की सिफारिश के बाद रिजर्व बैंक ने 1 जनवरी, 2015 से उपभोक्ता मूल्य सूचकांक को ही अपनी मौद्रिक नीति के आधार बनाने का निर्णय लिया है। पटेल समिति ने मुद्रास्फीति की दर को 4 $\pm$ 2 के बैंड में रखने की अनुशंसा की है, जिसे रिजर्व बैंक ने शब्दशः स्वीकार कर लिया है। इस प्रकार मुद्रास्फीति की अधिकतम दर (4 + 2 = 6) एवं न्यूनतम दर (4 - 2 = 2) हो सकती है। अधिकतम सीमा के ऊपर जाने पर रिजर्व बैंक कठोर मौद्रिक नीति एवं न्यूनतम सीमा के नीचे जाने पर नरम मौद्रिक नीति का पालन करेगा।

❒ मुद्रास्फीति का प्रभाव (Impact of Inflation)

मुद्रास्फीति के अर्थव्यवस्था और विभिन्न वर्गों पर बहुआयामी प्रभाव पड़ते हैं, जो निम्नलिखित हैं -

वर्ग	प्रभाव	वर्ग	प्रभाव
ऋण लेने वाले पर	लाभ	निर्यात	कमी
ऋण देने वाले पर	हानि	व्यापारिक	लाभ
उपभोक्ता	हानि	कृषक	लाभ
सार्वजनिक बचत	कमी	उत्पादक	लाभ
सार्वजनिक व्यय	वृद्धि	पेंशनभोगी	हानि
आयात	वृद्धि	स्थिर आय समूह	हानि

◆ अन्य प्रभाव

1) मुद्रास्फीति के कारण वस्तुओं एवं सेवाओं की लागत बढ़ जाती है, जिससे यह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कम प्रतिस्पर्धी हो जाती है। अतः निर्यात घट जाते हैं।

2) घरेलू वस्तुओं एवं सेवाओं की कीमतों में वृद्धि के कारण घरेलू पदार्थ के उपभोग के स्थान पर सस्ते आयातित पदार्थों का उपभोग बढ़ जाता है। अतः आयातों में वृद्धि होती है, जिससे भुगतान संतुलन की समस्या उत्पन्न होती है।

3) मुद्रास्फीति के कारण उत्पादकों के लाभों में वृद्धि हो जाती है। इस प्रकार बिना उत्पादन बढ़े ही लाभों में वृद्धि से उत्पादक नए उत्पादन हेतु प्रेरित नहीं होते हैं।

4) मुद्रास्फीति के कारण पूंजीगत पदार्थों, मशीनों, प्लान्ट आदि की स्थापित करने की लागत बढ़ जाती है, जिससे निवेश हतोत्साहित होती है।

5) मुद्रास्फीति के कारण वास्तविक ब्याज की दर घट जाती है, जिससे वित्तीय निवेशक विशेष तौर पर विदेशों से होना वाला निवेश हतोत्साहित होता है।

6) मुद्रास्फीति के कारण मजदूर सदैव मुद्रा भ्रम (Money Illusion) में रहता है। वह सदैव नियोगता से मजदूरी बढ़ाने की मांग करता है, किन्तु वह यह नहीं समझ पाता है कि उसकी वास्तविक मजदूरी (क्रय शक्ति में कमी के कारण) मजदूरी घट चुकी है। बढ़ी हुई मजदूरी चूंकि उत्पादन की महत्वपूर्ण लागत है, अतः यह पुनः लागतजनित मुद्रास्फीति को जन्मदेती है। इस प्रकार मुद्रास्फीति का जाल बन जाता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

7) मुद्रास्फीति के कारण सर्वाधिक प्रभावित गरीब वर्ग होता है, उसकी क्रय शक्ति निम्न स्तर पर पहुंच जाती है। अत: वह निर्धनता के जाल में उलझकर रह जाता है। हरित क्रांति के पश्चात् के समस्त अकाल क्रय शक्ति के अकाल ही कहे जाते हैं। अर्थशास्त्रियों ने मुद्रास्फीति को गरीबों पर गंभीर टैक्स कहा है।

8) मुद्रास्फीति से सर्वाधिक प्रभावित होने वाले वर्गों में निश्चित वेतनिक वर्ग (Fixed Salaried Class) भी आता है। मुद्रास्फीति होने पर यह महंगाई भत्तों की मांग करता है। प्राप्त हुए महंगाई भत्ते पुन: बाजार में मांग पैदा करते हैं। यह बढ़ी हुई मांग, मांगजनित मुद्रास्फीति का कारण बनती है। इस प्रकार मुद्रास्फीति का जाल (Inflationary Trap) बन जाता है।

❐ मुद्रा अवस्फीति/मुद्रा संकुचन (Deflation)

मुद्रा अवस्फीति मुद्रास्फीति की सर्वथा विपरीत स्थिति है। जिस प्रकार मुद्रास्फीति सामान्य कीमत स्तर में वृद्धि की एक विशिष्ट अवस्था है, उसी प्रकार मुद्रा अवस्फीति सामान्य कीमत स्तर में गिरावट की एक विशेष अवस्था है। मांग व पूर्ति के बाजार कारकों के असंतुलन के कारण वस्तु की कीमतों में आने वाली कमी को मुद्रा अवस्फीति/मुद्रा संकुचन (Deflation) कहते हैं। सामान्यत: ऐसा अतिउत्पादन (Over Production) की स्थिति में होता है, जब किसी वस्तु की मांग स्थिर रहती है, लेकिन उसकी आपूर्ति बढ़ जाती है। अत: यह कहा जा सकता है कि अर्थव्यवस्था में सदैव अल्पमात्रा में मुद्रास्फीति का रहना भी आवश्यक होता है। इससे उत्पादक प्रोत्साहित होते रहते हैं। मुद्रास्फीति की न्यूनतम दर क्या हो? यह अलग-अलग अर्थव्यवस्था एवं स्थितियों पर निर्भर करता है। भारत के संदर्भ में उर्जित पटेल समिति ने मुद्रास्फीति न्यूनतम दर 2 प्रतिशत रखने की सिफारिश की है।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

लघु तथा कुटीर उद्योग
Small Scale & Cottage Industries

लघु उद्योग क्षेत्र भारतीय औद्योगिक संरचना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसका न केवल देश के सकल घरेलू उत्पाद तथा निर्यात आय मे महत्वपूर्ण योगदान है, बल्कि करोड़ों लोगों को रोजगार उपलब्ध कराकर वह सामाजिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करता है। सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम क्षेत्र देश की GDP में **37.5 प्रतिशत** का योगदान करता है एवं इसके जरिए **8.05 करोड़ लोगों को रोजगार** प्राप्त प्राप्त होती है। वर्तमान में **18 उद्योगों** को लघु उद्योगों हेतु आरक्षित रखा गया है।

लघु एवं कुटीर उद्योगों की परिभाषा समय-समय पर परिवर्तित होती रही है। 2006 में सूक्ष्म, लघु तथा मध्यम उद्यम विकास अधिनियम (Micro, Small & Medium Enterprises Development Act.) पारित होने के बाद लघु एवं मध्यम क्षेत्र को पुनः परिभाषित किया गया। इस अधिनियम के अनुसार विनिर्माण (Manufacturing) तथा सेवा क्षेत्रों में पृथक-पृथक छोटे, लघु एवं मध्यम उद्योगों को परिभाषित किया गया है, जो निम्नलिखित है -

उद्योगों का प्रकार	वर्तमान निवेश सीमा (2006 के अनुसार)	प्रस्तावित निवेश सीमा
विनिर्माण उद्योग		
सूक्ष्म उद्यम	25 लाख तक	50 लाख तक
लघु उद्यम	25 लाख से अधिक, किन्तु 5 करोड़ से कम	50 लाख से अधिक, किन्तु 10 करोड़ से कम
मध्यम उद्यम	5 करोड़ से अधिक, किन्तु 10 करोड़ तक	10 करोड़ से अधिक, किन्तु 30 करोड़ तक
सेवाएं क्षेत्रक के उद्यम		
सूक्ष्म उद्यम	10 लाख तक	10 लाख तक
लघु उद्यम	10 लाख से अधिक, किन्तु 2 करोड़ से कम	10 लाख से अधिक, किन्तु 5 करोड़ से कम
मध्यम उद्यम	2 करोड़ से अधिक, किन्तु 5 करोड़ तक	5 करोड़ से अधिक, किन्तु 15 करोड़ तक

❐ भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु तथा कुटीर उद्योगों की भूमिका

1) **लघु क्षेत्र का विस्तार और औद्योगिक उत्पादन में हिस्सेदारी** - लघु औद्योगिक इकाइयों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है, जो 2011-12 में बढ़कर 447.7 लाख हो गई है। MSME क्षेत्र परम्परागत से लेकर उच्च प्रौद्योगिकी वाली विभिन्न प्रकार की 6000 से अधिक वस्तुओं का उत्पादन करता है। अनुमान है कि MSME क्षेत्र का सकल घरेलू उत्पाद में 8 प्रतिशत, विनिर्माण उत्पादन में लगभग 45 प्रतिशत योगदान है।

2) **रोजगार अवसरों का सृजन** - ये इकाइयां श्रम बहुल होती है, जिन पर पूंजी की प्रति इकाई पर लगने वाला रोजगार बहुत अधिक होता है। इन उद्योगों की रोजगारों सृजन क्षमता बहुत अधिक होती है। वस्तुतः भारत में कृषि के बाद रोजगार प्रदान करने वाला दूसरा सबसे बड़ा क्षेत्र लघु एवं कुटीर उद्योगों का है। भारत की गंभीर बेरोजगारी समस्या को देखते हुए लघु एवं कुटीर उद्योगों का महत्व स्वतः सिद्ध है। वर्तमान में 2011-12 में 1012.6 लाख लोग लघु तथा कुटीर उद्योगों में कार्यरत है।

3) **राष्ट्रीय आय का बेहतर वितरण** - लघु एवं कुटीर उद्योगों के समर्थन में एक महत्वपूर्ण तर्क यह दिया जाता है कि उनकी सहायता से राष्ट्रीय आय का अधिक बेहतर व न्यायोचित वितरण हो सकता है। ऐसा 2 कारणों से हैं - प्रथम, तो लघु उद्योगों का स्वामित्व बड़े उद्योगों की तुलना में अधिक विस्तृत व छितरा हुआ है। द्वितीय, लघु उद्योगों की रोजगार सृजन की सामर्थ बड़े उद्योगों की तुलना में अधिक है।

4) **उद्योगों का क्षेत्रीय विकेन्द्रीकरण** - भारत में बड़े उद्योगों का विकेन्द्रीकरण महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु व गुजरात में बढ़ा है। इससे देश में औद्योगिक दृष्टि से क्षेत्रीय असमानता में ओर अधिक वृद्धि हुई है। साथ ही इनके कारण शहरी क्षेत्र

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

व ग्रामीण क्षेत्र के मध्य अन्तराल बढ़ा है। लघु एवं कुटीर उद्योग क्षेत्र ग्रामीण व शहरी अन्तराल को कम करने तथा क्षेत्रीय विषमताओं को हल करने में सहायक सिद्ध होते हैं। चूंकि लघु उद्योगों की स्थापना प्राय: स्थानीय मांग को पूरा करने के लिए की जाती है। अत: इन्हें सभी राज्यों में सुविधापूर्वक स्थापित किया जा सकता है।

5) **स्थानीय पूंजी एवं उद्यम का उपयोग** - देश के विभिन्न भागों में ऐसे बहुत सारे साधन उपलब्ध होते हैं, जिनकी मांग बड़े उद्योगों द्वारा नहीं की जाती है। इसके अलावा कुछ साधन बड़े उद्योगों की पहुंच में भी नहीं होते हैं। लघु उद्योग इन साधनों को सहज ही प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार शहरों से दूर ग्रामीण क्षेत्रों में की जाने वाली बचतों को बड़े उद्योगों के लिए संचित कर पाना संभव नहीं होता है, किन्तु उनकी सहायता से घरेलू एवं लघु उद्योगों की स्थापना की जा सकती है।

6) **निर्यात में योगदान** - आजादी के बाद बड़े पैमाने पर लघु उद्योगों की स्थापना के कारण निर्यात में इनका योगदान काफी बढ़ा है। बहुत सारे उद्योगों, जैसे - तैयार वस्त्र, खेल का सामान, चमड़े से निर्मित सामान, ऊनी कपड़ों, रसायन पदार्थों तथा इंजीनियरिंग वस्तुओं आदि में लघु उद्योगों के निर्यातों में काफी वृद्धि हुई है। MSME क्षेत्र का निर्यात उत्पाद में 40 प्रतिशत योगदान है।

❐ लघु एवं कुटीर उद्योगों की समस्याएं

1) **वित्त की समस्या** - पूंजी तथा साख का अभाव लघु उद्योगों की प्रमुख समस्या है, जिसमें कुटीर एवं ग्राम उद्योगों की स्थिति तो और भी खराब है। वस्तुत: इन इकाइयों का पूंजीगत आधार काफी कमजोर होता है, क्योंकि इनका संगठन साझेदारी या अकेले स्वामित्व के आधार पर किया जाता है। भारत सरकार ने लघु उद्योग क्षेत्र के विकास के लिए ऋण सुविधाओं के प्रसार की आवश्यकताओं को स्वीकार किया है। इसके लिए 1990 में भारतीय लघु विकास बैंक (सिडबी) की स्थापना की गई। इसके अलावा बैंकों को यह निर्देश दिए गए हैं कि वे कुल ऋणों का 40 प्रतिशत प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को उपलब्ध कराएंगे (प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में कृषि के अलावा लघु एवं कुटीर उद्योग भी शामिल हैं)।

2) **कच्चे माल की उपलब्धि** - अधिकांश लघु एवं कुटीर उद्योग पहले छोटी-मोटी वस्तुओं का ही उत्पादन करते थे, जिनके लिए कच्चा माल स्थानीय स्तर पर ही प्राप्त हो जाता था। किन्तु जब से आधुनिक लघु उद्योगों का पर्याप्त विकास हुआ है और ये उद्योग नई वस्तुओं का उत्पादन करने लगे हैं, तब से इनके लिए कच्चे माल की व्यवस्था कर पाना कठिन हो गया है। अनेक लघु उद्योग आयात किए जाने वाले कच्चे माल का प्रयोग करते हैं। देश के सामने विदेशी विनिमय संकट की स्थिति में इस प्रकार के कच्चे माल का आयात न हो पाने से समय-समय पर लघु एवं कुटीर उद्योगों को भारी नुकसान हुआ है।

3) **मशीनें तथा उपकरण** - अधिकांश लघु औद्योगिक इकाइयों में परम्परागत व पुराने उपकरण प्रयोग किए जाते हैं। इस कारण से इनके द्वारा उत्पादित माल की गुणवत्ता भी घटिया होती है। इसके अलावा लघु इकाइयां लोगों की बदलती हुई रुचियों, फैशनों इत्यादि की ओर भी विशेष ध्यान नहीं देते। अत: औद्योगिक इकाइयों का आधुनिकीकरण अतिआवश्यक है। बेहतर मशीनों, उपकरणों व तकनीकों के प्रयोग द्वारा इनकी कार्य कुशलता में सुधार किया जा सकता है।

4) **विपणन की समस्या** - भारतीय लघु उद्योगों की बहुत बड़ी कमजोरी यह है कि उनके लिए बिक्री के लिए संगठन नहीं है। प्राय: लघु इकाइयों द्वारा मानक वस्तुओं का भी उत्पादन नहीं किया जाता है, इसलिए उनका माल बड़ी इकाइयों की तुलना में सहज रूप से नहीं बिक पाता है।

5) **आर्थिक सुधारों तथा वैश्वीकरण के बुरे प्रभाव** - LPG नीति के द्वारा भारतीय अर्थव्यवस्था को खोलने की दिशा में कई प्रयास किए गए, जैसे - औद्योगिक लाइसेंसिंग की समाप्ति, आरक्षण में कमी, देशी-विदेशी उद्योगों के साथ स्पर्धा को प्रोत्साहन, टेरिफ में कमी, मात्रात्मक प्रतिबंधों को समाप्त करना आदि। इन सुधारों का लघु उद्योग क्षेत्र पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। कई औद्योगिक क्षेत्रों में काम कर रही लघु इकाइयों को सस्ती व बेहतर आयातित वस्तुओं से गंभीर खतरा पैदा हो गया है। सबसे गंभीर खतरा चीन से आ रहे सस्ते आयातों से है, जिनकी कीमत इतनी कम है कि लघु उद्योगों के लिए अपना अस्तित्व बचाना मुश्किल हो गया है। उदाहरणार्थ - 1999-2000 से जब से खिलौनों के आयात की अनुमति दी गई है, तब

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

से भारतीय खिलौना उद्योग बहुत कठिन दौर से गुजर रहा है। पिछले 5 वर्षों में भारत के 40 प्रतिशत खिलौना उत्पादक अपना काम बंद कर चुके हैं तथा 20 प्रतिशत काम बंद करने की कगार पर है।

❐ लघु उद्योग से संबंधित संस्थान

1) **लघु उद्योग विकास संगठन (Small Industries Development Organisation)** - इसकी स्थापना 1954 में हुई थी। यह केन्द्रीय उद्योग मंत्रालय के अधीन है। यह संगठन लघु उद्योगों के संबंध में नोडल एजेंसी है, जो नीति निर्धारक व समन्वयक के रूप में कार्य करती है।

2) **राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (National Small Industries Corporation)** - इसकी स्थापना 1955 में हुई थी। यह भी एक केन्द्रीय एजेंसी है। इसका मुख्य योगदान कार्य किराया क्रय पद्धति पर लघु उद्योगों को मशीनरी उपलब्ध कराना।

3) **खादी तथा ग्रामीण उद्योग आयोग (KVIC)** - इसकी स्थापना 1956 में हुई थी। यह विकेन्द्रीकृत क्षेत्र की महत्वपूर्ण संस्था है, जो ग्रामीण क्षेत्रों के गैर-कृषि क्षेत्र में रोजगार अवसरों का सृजन करती है। इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

   a) ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराने का सामाजिक दायित्व।

   b) विक्रय योग्य वस्तुओं को उत्पादित करने का आर्थिक दायित्व।

   c) ग्रामीण व्यक्तियों को आत्मनिर्भर बनाने एवं एक सुदृढ़ ग्रामीण सामुदायिक भावना उत्पन्न करने का दायित्व।

4) **भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (Small Industries Development Bank of India)** - इसकी स्थापना 1990 में हुई थी। इसका मुख्यालय लखनऊ में है। यह लघु उद्योग क्षेत्र को वित्तीय सुविधा उपलब्ध कराने के संबंध में महत्वपूर्ण संस्था है। इसके अलावा यह उन सभी संस्थाओं के कार्यों में समन्वय स्थापित करने का भी कार्य करती हैं, जो लघु उद्योगों के प्रवर्तन में जुटे हैं।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

काला धन
Black Money

काले धन से आशय उस धन से है, जिसका कोई हिसाब नहीं रखा जाता है अर्थात् छिपाई गयी आय तथा सम्पत्ति। वह आय जो सरकार द्वारा बनाए गए निश्चित नियमों व विधानों का उल्लंघन करके प्राप्त की जाती है, काला धन है। प्रो. सी. एन. वकील के अनुसार, "काली आय या काला धन अभिलेखों (Records) में न दिखाए गए लाभ हैं।" काला धन ऐसी वस्तु का प्रतीक है, जिसने नैतिक, सामाजिक तथा कानूनी आदर्शों का उल्लंघन किया है।

❐ काले धन के प्रभाव

भारत में काले धन के नैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं अन्य दुष्परिणाम निम्नलिखित हैं-

1) **कीमतों में वृद्धि** - काले धन को विशेषकर प्रदर्शन की वस्तुओं पर व्यय करने से कीमतों में वृद्धि हो जाती है। काले धन से मुद्रा-स्फीति की प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिलता है तथा मूल्यों में वृद्धि हो जाती है। **डॉ. वी. के. आर. वी. राव** के अनुसार, "अर्थव्यवस्था में बिखरा हुआ, हिसाब में न दिखाया गया धन मूल्य वृद्धि के लिए उत्तरदायी है।"

2) **जमाखोरों को प्रोत्साहन** - काले धन के कारण विभिन्न वस्तुओं और विशेषत: अनिवार्य उपभोक्ता वस्तुओं, जैसे - खाद्यान्न आदि की जमाखोरी को भी बढ़ावा मिलता है। इससे कृत्रिम कमी पैदा होती है और वस्तुओं के मूल्य बढ़ते हैं।

3) **सट्टे को प्रोत्साहन** -काले धन की अधिकता से सट्टे की प्रवृत्ति को भी प्रोत्साहन मिलता है तथा सट्टे में लगाया गया रुपया भी मूल्य वृद्धि में सहायक होता है।

4) **सरकार की आर्थिक नीतियों को असफल बनाने में सहायक** - काला धन सरकार की आर्थिक नीतियों को असफल बना देते हैं। जब सरकार कुछ क्षेत्रों में साख पर नियंत्रण करना चाहती है, उस समय काले धन की अर्थव्यवस्था स्वयं साख की सुविधाएं उपलब्ध कराकर सरकार की साख नीति के उद्देश्य को विफल कर देती है।

5) **न्याय के विरूद्ध** - काला धन करारोपण में न्याय के सिद्धान्त पर गहरी चोट करता है। काला धन रखने वाले आर्थिक असमानता को बढ़ाते है तथा वे कर नहीं देते हैं अत: ईमानदार करदाताओं पर कर का भारी बोझ पड़ता हैं। कालेधन से देश में बेईमानों के हाथों में धन का केन्द्रीयकरण होता हैं।

6) **नैतिक एवं सामाजिक** - काले धन के कारण नैतिक एवं सामाजिक स्तर में भी गिरावट आती है। यह कहना अतिश्योक्ति न होगा कि काले धन की समस्या के पीछे मुख्य कारण नैतिक एवं सामाजिक स्तर में गिरावट ही है। कालेधन के कारण तस्कर व्यापार, मुनाफाखोरी, कालाबाजारी, घूस-खोरी आदि अनैतिक एवं असामाजिक कार्य पनपते हैं।

7) **अनुत्पादक संचय को प्रोत्साहन** - काला धन अनुत्पादक संचय को भी प्रोत्साहित करता है। इससे देश का आर्थिक विकास भी प्रभावित होता है। विलासिता में वृद्धि होती है।

❐ भारत में काले धन के अनुमान

भारत में विभिन्न समितियों व आर्थिक विशेषज्ञों द्वारा समय-समय पर काली मुद्रा व कालेधन के बारे में आंकड़ें जारी किए गए है। वांचू समिति ने 1971 में काले धन को देश के सकल घरेलू उत्पाद के 7 प्रतिशत बराबर अनुमानित किया था। वांशिगटन स्थित एक वैश्विक गैर-सरकारी संगठन ग्लोबल फाइंनेन्शियल इन्टीग्रिटी (जीएफआई) ने 1948 से दिसम्बर, 2008 तक की अवधि के लिए अनुमान प्रस्तुत किया । इस अनुमान के मुताबिक इस अवधि में भारत से बाहर 462 अरब डॉलर की राशि भेजी गई। वहीं सुरजीत भल्ला वर्ष 2009 के अपने एक अनुमान मे कहते हैं कि भारत मे एक लाख करोड़ रूपए का काला धन है । प्रो. सूरजभान गुप्त अपने अनुमान में कहते हैं कि भारत में जीडीपी के 42 प्रतिशत के आसपास कालाधन है। इस प्रकार सभी अनुमान थोड़ी बहुत मतभिन्नता के साथ यह स्वीकार करते हैं कि भारत में अर्थव्यवस्था में कालाधन बड़ी मात्रा में है जो समानान्तर अर्थव्यवस्था सृजित करता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

❐ काले धन को रोकने के लिए सरकारी प्रयास

भारत सरकार द्वारा समय-समय पर काली मुद्रा रोकने के लिए प्रयास किए गए । काली मुद्रा एवं भ्रष्टाचार का गहरा संबंध है। भ्रष्टाचार रोकने के लिए वर्ष 1986 में भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम पारित किया गया। इसके अतिरिक्त कालांतर में टैक्स की दरों का युक्तीकरण , काली मुद्रा का ऐच्छिक प्रत्यर्पण आदि प्रयास किए गए। वर्ष 2006 में मनी-लॉन्डरिंग अधिनियम पारित किया गया। इसके अंतर्गत मनी-लॉन्डरिंग को रोकने का प्रयास किया गया। भारत ने विदेशों में स्थित काला धन को लाने के लिए 65 देशों के साथ दोहरे कराधान के समझौते (DTAA) किए हैं। विभिन्न देशों के साथ काले धन संबंधी सूचना के आदान-प्रदान की व्यवस्था भी बढ़ाई जा रही है। विगत वर्षो में सुप्रसिद्ध विधिवेत्ता रामजेठमलानी व अन्य व्यक्तियों द्वारा अदालत में सार्वजनिक हित में मुकदमा (PIL) दायर किया गया , जिसके बाद सुप्रीम कोर्ट ने भारत सरकार से इस संबंध में जवाब तलब किया। सरकार ने इस पर सुप्रीम कोर्ट में हलफ नामा पेश कर काले धन पर कार्य करने का विश्वास दिलाया । कालांतर में सरकार ने एम. बी. शाह की अध्यक्षता में विशेष जांच संगठन (SIT) का गठन किया है। विभिन्न देशों के बैंकों से काले धन रखने वाले भारतीयों के नाम प्राप्त हुए है। इस संबंध में भी प्रक्रिया न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है।

इसके अलावा रिजर्व बैंक ने काले धन व नकली नोटों की समस्या से निपटने के लिए वर्ष 2005 से पहले के मुद्रित सभी करेंसी नोट वापस लेने का निर्णय किया है। ज्ञातव्य है कि 2005 से पहले के छपे नोटों की पहचान करना आसान है, क्योंकि 2005 के छपे नोटों के पीछे छपाई का वर्ष अंकित नहीं हैं, जबकि इसके बाद के नोटों पर वर्ष अंकित होता है और उसमे सुरक्षा के भी कई उपाय किए गए है। इस प्रकार काला धन रखने वाले अपनी वे समस्त करेंसी जो वर्ष 2005 क पहले की है बदल नहीं पाएंगे एवं यदि वह इसे सरेंडर भी करते है तो यह मुद्रा बाजार प्रचलन में आ जाएंगी। अत: यह रिजर्व बैंक का एक प्रभावी प्रयास है।

❐ काला धन रोकने के उपाय

काले धन पर सदैव बहस विदेश में स्थित काली मुद्रा पर ही होती है, किन्तु वास्तविक समस्या तो देश में स्थित काला धन ही है। विदेशों में स्थित काले धन से छ: गुना ज्यादा काला धन देश में विद्यमान है। जब वर्ष 2008 मे संपूर्ण विश्व मंदी की चपेट में था तब भारत इस मंदी से बचा रहा । बचत प्रवृत्ति,सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली के अतिरिक्त यह काला धन ही था जिसने मांग की कमी नहीं होने दी एवं देश पर मंदी का असर नहीं पड़ा। जिस समय अमेरिका एवं यूरोप के निवासी सड़कों पर कारों में अपना जीवन व्यतीत कर रहे थें उस समय भारत में थ्री इडियट जैसी फिल्में 275 करोड़ रूपए कमा रही थीं। इस प्रकार काला धन देश में ही अत्यधिक है । काला धन के संदर्भ में हुए अब तक सभी प्रयास केवल अन्य देशों से सूचना आदान-प्रदान ,दोहरा कराधान समझौता आदि तक सीमित रहे है, किन्तु देश में स्थित काले धन पर कोई प्रयास नहीं हुआ है। इस तरह सर्वप्रथम तो दोहरी नीति अपनाई जानी चाहिए, जिसमें विदेश में स्थित काला धन के साथ-साथ देश में स्थित काले धन पर भी ध्यान दिया जाए।

काले धन को रोकने के लिए निम्नलिखित प्रयास कर सकते हैं -

1) सर्वप्रथम व्यापक सत्र पर वित्तीय समावेशन (Financial Inclusion) किया जाए। जनसंख्या के एक बड़े वर्ग को बैंकिंग नेट में लाया जाए, ताकि अधिकतर हस्तान्तरण बैंक के माध्यम से हो। एक 'कैश लैस इकॉनामी' बनाई जाए।
2) मात्र 1 लाख रुपए से ऊपर तक के प्रत्येक सौदे को पेन कार्ड के अधीन लाया जाए।
3) प्रत्यक्ष करों आयकर एवं निगम कर की दरों को कम किया जाए। 'टैक्स टेररिज्म' को कम किया जाए। कर की अधिक दर से कर अपवंचना (Tax Evasion) को बढ़ावा मिलता है।
4) काले धन का एक बड़ा स्रोत 'सेविंग स्कीम', 'किसान पत्र' आदि में निवेश होता है। इन पत्रों एवं प्रतिभूतियों का निर्गमन युक्तियुक्त हो।
5) वास्तविक संपदा (Real State), वर्तमान में काले धन का मुख्य प्लेटफार्म बना हुआ है। देश में Real State को रेगुलेट किया जाए। सभी बेनामी हस्तांतरण को रोका जाए। क्रेता-विक्रेता की पहचान अनिवार्य की जाए। खरीदी-बिक्री की प्रक्रिया पारदर्शी हो। वास्तविक मूल्य उजागर किया जाए। इस दिशा में सूचना प्रौद्योगिकी का सहारा लिया जा सकता है।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

6) वर्ष 2012 के बजट में तत्कालीन वित्त मंत्री चिदंबरम ने अपने बजट भाषण में कहा था कि केवल 4200 लोगों ने स्वयं को करोड़पति स्वीकार किया है, किन्तु यह जगजाहिर है कि देश मे करोड़पतियों की संख्या इससे कहीं ज्यादा है। भारत जर्मनी की लक्जरी कारों का सबसे बड़ा खरीदार है। इन महंगी कारों के खरीदरों पर सख्ती की जाए। प्रत्येक 8 लाख के ऊपर के कार मालिक की जांच जा सकती है।

7) 'धन सरेंडर' प्रोत्साहन योजना शुरू की जा सकती है। इसमें बेनामी धन का सरेण्डर करने पर टैक्स छूट आदि प्रावधानों का इस्तेमाल किया जा सकता है।

8) सम्पत्ति बिक्री, सोना खरीदी आदि सभी सौदों को बैंक के माध्यम से अनिवार्य कर देना चाहिए।

9) विदेशी काले धन को रोकने के लिए धन के निर्गमन वाले रास्ते, जैसे - निवेश, GDR, ADR विदेशों में सम्पत्ति खरीदी आदि को पारदर्शी बनाया जाए।

10) करप्शन एक्ट 1988 को और अधिक प्रभावी बनाया जाए। दोषियों को कड़ी सजा दी जाए। न्याय प्रक्रिया को त्वरीत किया जाए।

11) अधिकतर भ्रष्टाचार का स्रोत सरकारी सेवाएं एवं योजनाएं हैं। सरकारी व्यय एवं योजनाओं की डिलेवरी ई-क्रांति के माध्यम से हो। निविदाओं को ई-निविदा में बदला जाए। सम्पूर्ण प्रक्रिया पारदर्शी हो।

12) सबसे महत्वपूर्ण समाज में पाश्चात्य आडम्बरों को फैलने से रोका जाए। पाश्चात्य संस्कृति अति-उपभोग पर आधारित भौतिकवादी (Materialistic) है। अति-उपभोग, जीवन निर्वाह की लागत (Cost of Living) को बढ़ाते हैं। जीवन निर्वाह की बड़ी लगात भ्रष्टाचार को जन्म देती है।

13) शिक्षा में नैतिक शिक्षा का प्रसार हो। शिक्षा से 'मशीन' नहीं 'मानव' तैयार हो। मानव (Human) ही मानवता (Huminity) को जन्म देते है।

14) कर संग्रहण प्रक्रिया को भ्रष्टाचार मुक्त, पारदर्शी एवं कुशल बनाया जाए। कर इंस्पेक्टरों के कार्य को अधिक दक्ष एवं भ्रष्टाचार मुक्त बनाया जाए।

❐ निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि काली मुद्रा के सृजन को रोकने व विदेशों में जमा काले धन को वापस लाने का प्रश्न काफी गहन व जटिल हैं। इनका संबंध देश में व्याप्त भ्रष्टाचार, आर्थिक प्रशासन की कमजोरियों, बढ़ती मुद्रास्फीति, राजनीतिक अनिश्चितता व अस्थिरता, वैश्वीकरण के प्रभावों आदि से है। 121 करोड़ का देश विश्व की तीसरी महान आर्थिक शक्ति बनने का सपना संजोए हुए है। हालांकि देश बार-बार ऊँची विकास दर कर दावा करता है, लेकिन काली मुद्रा एवं काली अर्थव्यवस्था के विस्तार के कारण वह संतुलित व तीव्र विकास नहीं कर पा रहा है। आशा है, 12वीं पंचवर्षीय योजना की अवधि में कुछ गंभीर किस्म के निर्णय लिए जाएंगे, जो संभवत: हमें वर्तमान आर्थिक दलदल से बाहर निकालने में मदद देंगे।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

सहकारिता

अनेक व्यक्तियों या संस्थाओं द्वारा किसी समान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मिलकर प्रयास करना सहकारिता (Cooperation) कहलाता है। समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए अनेक व्यक्तियों या संस्थाओं की सम्मिलित संस्था को सहकारी संस्था कहते हैं। आम तौर पर सहकारी संस्थान की स्थापना प्रतिकूल बाजार की स्थितियों की प्रतिक्रियाओं के अनुसार की जाती है, जिसमें भाग लेने वाले सभी सदस्य भाग होते हैं, ताकि संयुक्त आकार और पूरे समूह की क्षमता के कारण लाभ उठाया जा सके।

भारत में सहकारी आन्दोलन की शुरुआत कृषि और उससे संबंधित क्षेत्रों की देन है। अकाल, किसानों की ऋणग्रस्तता और गरीबी के इस दुष्चक्र से बाहर निकालने का सबसे अच्छे साधन के रूप में सहकारी समितियों सामने आई। किसानों को सहकारी आन्दोलन के चलते अपने अल्प संसाधनों के संयोजन से क्रेडिट से संबंधित आम समस्याओं और कृषि उपज के विपणन एवं आदानों की आपूर्ति को हल करने का एक आकर्षक तरीका मिल गया।

भारत में वैसे तो सहकारिता का इतिहास काफी प्राचीन है, लेकिन विधिवत रूप से 1904 ई. में सहकारी समिति अधिनियम लाया गया। सर्वप्रथम इसमें ही ग्रामीण ऋण समितियों की परिकल्पना की गई थी। 1919 ई. में सहकारिता का विषय प्रांतों में स्थानांतरित कर दिया गया। अधिकांशत: प्रांतों ने सहकारी समितियों के कार्यों का विनियमन करने के लिए अपने-अपने कानून अधिनियमित किए। वर्तमान में सहकारी समितियां भारत के संविधान की राज्य सूची का विषय है।

स्वतंत्रता के पश्चात् सहकारिता को गरीबी हटाने एवं तेजी से सामाजिक-आर्थिक विकास करने के लिए एक महत्वपूर्ण उपाय माना गया। योजना प्रक्रिया के आगमन के साथ, सहकारिता पंचवर्षीय योजनाओं का एक अभिन्न हिस्सा बन गई। परिणामस्वरूप हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में सहकारिता एक महत्वपूर्ण खण्ड के रूप में उभरकर समाने आई।

1954 ई. में अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति ने अपने रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें सहकारी समितियों के कार्य क्षेत्र के विस्तार, ग्रामीण बचत को प्रोत्साहन और व्यवसाय विविधीकरण की जरूरत पर बल दिया गया। रिपोर्ट में सहकारी समितियों की शेयर पूंजी में सरकार की भागीदारी की भी सिफारिश की। इन सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न राज्यों के द्वारा सहकारी आन्दोलन के लिए विभिन्न योजनाओं का प्रारंभ किया गया, ताकि बड़े आकार की समितियों का गठन किया जा सके।

मध्य प्रदेश में सहकारी संस्थाओं की गतिविधियों का मुख्य आधार सहकारिता विभाग है। विभाग लगभग 35,608 संस्थाओं के माध्यम से प्रदेश में अल्पकालीन व दीर्घकालीन ऋण, खाद-बीज और कृषि आदानों की व्यवस्था, शहरी साख व्यवस्था, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं का वितरण, शहरी उपभोक्ता सहकारिता, आवास सहकारिता एवं मत्स्य, डेयरी, वनोपज, बुनकर व खनिज कर्म, वैधानिक कार्य की गतिविधियों का संचालन करता है।

सहकारिता क्षेत्र में ग्रामीणों को अल्पकालीन साख सुविधा सुनिश्चित करने के लिए मध्य प्रदेश राज्य सहकारी बैंक सहित 38 जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक एवं 4530 प्राथमिक कृषि साख सहकारी समितियां कार्य करती हैं। इसी प्रकार दीर्घकालिक साख व्यवस्था के अन्तर्गत मध्य प्रदेश राज्य सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक द्वारा 38 जिला सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंकों के माध्यम से दीर्घकालीन ऋण वितरित किया जाता है।

❐ आवश्यकता

भारत में जनसंख्या का 70 प्रतिशत गांवों में निवास करता है। इन ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक सुविधा या अवसंरचात्मक विकास की कमी के कारण प्रत्येक व्यक्ति तक वित्तीय सुविधा की पहुंच एक चुनौती बनकर उभरी है। दूसरे शब्दों में कहे तो अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों को वित्तीय समावेशन की प्रक्रिया से नहीं जोड़ा जा सका है। ऐसी स्थिति में सहकारी संस्थाएं एवं स्वयं सहायता समूह बिना किसी अवसंरचना के लोगों को छोटी-छोटी बचत एकत्र करने हेतु प्रोत्साहित करते हैं, ताकि उस एकत्रित राशि को किसी बड़े उद्देश्य की प्राप्ति में लगाया जा सके। इन समूहों से ग्रामीण लोगों के जीवनस्तर में सुधार हुआ है, तो वहीं दूसरी ओर महिलाओं का योगदान भी बढ़ा है। इससे गांवों में सामाजिक-आर्थिक न्याय के आदर्श को प्राप्त करने में सहायता मिली है।

❐ उद्देश्य

1) निर्धनों का जीवनस्तर उच्च बनाना।

2) उनको छोटी बचतों से लाभ कमाने हेतु प्रेरित करना।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

3) महिलाओं को वित्त प्रबंधन व सामुहिक निर्णयों में भागीदार बनाना।

4) महिलाओं को सक्रिय भागीदारी से महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देना।

5) स्व-रोजगार को बढ़ाकर समावेशी व सतत् विकास करना।

6) ग्रामीण निर्धनों की ऋण जरूरतों की पूर्ति के लिए पूरक ऋण नीतियां बनाना है।

7) बैंकिंग गतिविधियों को बढ़ावा देना, बचत तथा ऋण के लिए सहयोग करना।

8) समूहों के सदस्यों के मध्य आपसी विश्वास को बढ़ाना भी इसके लक्ष्यों में शामिल है।

❐ सहकारी संस्था के निर्धारक तत्व

1) एक जैसे सामाजिक-आर्थिक स्तर के व्यक्तियों का समूह होने से उनकी रुचियों में मतभेद कम होगा।

2) इन समूहों में जाति, धर्म, लिंग आदि आधार पर विभेद नहीं किया जाता है।

3) इन समूहों का आकार 15 से 20 व्यक्तियों का होता है, जिससे प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्रतापूर्वक अपनी बात रख सकता है।

4) इन समूहों में व्यक्तियों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु नियमित उपस्थिति होनी चाहिए, जिससे समूह की गतिविधियों में पारदर्शिता बनी रहेगी।

5) यह बचत को गतिशील बनाकर पूंजी निर्माण में सहायक है।

❐ महिलाओं का योगदान

भारत में सहकारिता अपने लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर सका। इसका मुख्य कारण है भारतीय सहकारिता आन्दोलन में महिलाओं के सक्रिय सहयोग का अभाव। इस क्षेत्र में महिलाओं कि भूमिका बिलकुल ही असंतोषप्रद है। भारत में जितने भी प्रकार की सहकारी समितियां बनी हैं, उनमें महिलाओं की सहकारी समितियाँ लगभग 2 प्रतिशत ही हैं, जबकि महिलओं की आबादी लगभग 50 प्रतिशत है। इससे सिद्ध होता है कि सहकारिता आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी लगभग नगण्य सा या बिलकुल ही कम है। आज देश के कुल श्रमशक्ति का एक तिहाई श्रमशक्ति महिलाओं का माना जाता है, लेकिन तब भी उसकी आर्थिक एवं सामाजिक हालात पुरुषों की तुलना में निम्न स्तर की है। यद्यपि ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में महिलाएं कुटीर उद्योग, कृषि कार्य, डेयरी, पशुपालन, मत्स्य पालन, कुक्कुट पालन, मधुमक्खी, बागवानी, दैनिक श्रमिक, बनोत्पाद प्रोसेसिंग कार्य, सूअर पालन आदि कार्यों में लगी हैं, परन्तु उनकी संख्या एवं आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है, जिसका प्रमुख कारण निम्नांकित हैं -

1) महिलाओं में शिक्षा एवं साक्षरता का अभाव।

2) सम्पति के अधिग्रहण में महिलाओं के उत्तराधिकार पुरुषों की तुलना में कम।

3) महिलाओं से सम्बन्धित समाज में स्थित सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति।

4) समाज में महिलाओं की स्वतंत्रता का अभाव।

5) महिलाओं के पोषण एवं स्वास्थ्य सुधार के प्रति उदासीनता।

6) समाज में नीति-निर्धारण कार्यों में महिलाओं की भूमिका का अभाव।

7) जागरूकता की कमी।

8) महिलाओं में सहकारिता आन्दोलन में भाग लेने से होने वाले लाभ की जानकारी या सहकारिता ज्ञान का अभाव।

9) नेतृत्व का अभाव।

बेरोजगारी एवं गरीबी दूर करने हेतु तथा समाज को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने हेतु सहकारिता के समान कोई दूसरा विकल्प नहीं हो सकता। देश एवं समाज तथा महिलाओं की आर्थिक सामाजिक स्थिति के उत्थान हेतु सहकारिता आन्दोलन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना आवश्यक है। किसी भी देश का विकास सिर्फ पुरुषों के सहयोग से ही होना सम्भव नहीं है। पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं का सहयोग आवश्यक ही नहीं बल्कि अनिवार्य है, अन्यथा विकास अधूरा ही होगा।

आज दुनिया के जितने भी विकसित देश, जैसे - जापान, जर्मनी, अमेरिका, इंग्लैण्ड, डेनमार्क आदि वहां के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में महिलओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वहां के सहकारी आन्दोलन में महिलाओं की सक्रियता से सिर्फ देश एवं समाज का ही नहीं, बल्कि वहां की महिलाएं भी आत्मनिर्भर होती जा रही हैं।

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

Success Pana Chahte Hai . Com

इस प्रकार सहकारिता एक आन्दोलन है – सहअस्तित्व का, सहकर्म का, सहयोग का, सहभाग का, सामूहिक जिम्मेदारी का, सामूहिक बहुमुखी विकास का तथा गरीबी एवं बेरोजगारी उन्मूलन का। सब एक के लिए व एक सबके लिए, अर्थात् – समष्टि व्यष्टि के लिए एवं व्यष्टि समष्टि के लिए इसका मौलिक आधार है। इससे एक होकर साथ-साथ चलने एवं जीने की भावना का विकास होता है।

❐ कृषि सहकारिता

कृषि सहकारिता के अन्तर्गत कृषि बागवानी तथा वन उत्पादों का प्रसंस्करण, संचय एवं विपणन किया जाता है। इससे संबंधित कुछ महत्वपूर्ण संस्थान निम्नलिखित हैं –

- **राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एनसीडीसी)**

इसकी स्थापना 1963 ई. में कृषि मंत्रालय के अधीन एक सांविधिक निगम के तौर पर की गई। इस निगम का कार्य उत्पादन, प्रसंस्करण, विपणन, भण्डारण, कृषि उत्पादों का आयात एवं निर्यात, खाद्य पदार्थों, पशुओं, औद्योगिक माल और अन्य अधिसूचित वस्तुओं एवं सेवाओं के कार्यक्रमों की योजना बनाना एवं उनको बढ़ावा देना है।

- **भारतीय किसान सहकारी उर्वरक लिमिटेड (इफको)**

इसकी मदद से देश के किसान उर्वरकों के उत्पादन एवं वितरण के लिए स्वयं सहकारी संस्थानों की स्थापना कर सकते हैं। इफको की स्थाना का उद्देश्य उर्वरकों की पहुंच किसान तक आसान बनाने के लिए 1967 ई. में की गई थी। इफको बहु-संयंत्रों वाली सहकारी समिति है, जो देश और दुनिया के कई हिस्सों में रणनीतिक निवेश के तहत् उर्वरक उत्पादन से संबंधित कार्य कर रही है। इसका एकमात्र उद्देश्य भारतीय किसानों की बेहतरी एवं उनके लिए लाभ कमाना है। इफको के उर्वरकों का वितरण 39824 सहकारी समितियों के माध्यम से पूरे देश में किया जाता है।

- **भारतीय राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ मर्यादित (नेफेड)**

इसकी स्थापना 1958 ई. में की गई। नेफेड की स्थापना कृषि उत्पादों के सहकारी विपणन को बढ़ाने के लिए की गई थी, ताकि किसानों को लाभ मिल सके। नेफेड पूरे देश में फैले हुए अपने सहकारी नेट-वर्क के माध्यम से मण्डी स्तर पर विपणन समितियों को सक्रिय रूप मे शामिल करके किसानों की उपज की खरीद करके उनकी सहायता करता है, जैसे – खाद्यान्नों, दलहनों, तिलहनों, मसालों, कपास, जनजाति उत्पाद, जूट एवं जूट की वस्तुओं, अण्डे, ताजे फल एवं सब्जियों की खरीद।

मुख्य बाजारों में किसानों की उपजों की परेषण आधार पर बिक्री की व्यवस्था कराकर भी नेफेड उन्हें विपणन सहयोग देता है, ताकि उन्हें उनकी उपज का अधिकतम मूल्य मिल सके। नेफेड नेशनल कमोडिटी एक्सचेंज के माध्यम से वायदा कारोबार भी कर रहा है। वायदा कारोबार आरंभ करने का प्रमुख उद्देश्य यह है कि वास्तविक रूप से वस्तुओं की डिलीवरी प्राप्त करके मूल्य जोखिम और बाजार जोखिम को कम किया जा सके तथा विभिन्न उपजों के भण्डारित वास्ताविक माल के अनुसार कृषि उपजों के मूल्यों को स्थिर रखने में मदद कि जा सके, ताकि किसानों को उनकी उपज का बेहतर और मूल्य लाभकारी मिले।

❐ डेयरी सहकारिता

- **राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड (एनडीडीबी)**

1965 ई. में जमीनी स्तर पर लाखों दुग्ध उत्पादकों को एक बेहतर भविष्य देने के मिशन के साथ स्थापित किया गया था। इस प्रतिबद्धता के फलस्वरूप भारत विश्व के अग्रणी सर्वोच्च दुग्ध उत्पादक देश के रूप में स्वयं को प्रतिष्ठित कर सका है। बोर्ड की गतिविधयों में डेरी सहकारिताओं को मजबूती प्रदान करने के लिए वित्तीय सहायता और तकनीकी विशेषज्ञता उपलब्ध कराने के साथ रोजगार सृजन, दुग्ध उपलब्धता, विदेशी मुद्रा बचत और किसानों की आय में वृद्धि शामिल हैं। 15 राज्यों में प्रसरित 170 दुग्ध उत्पादक सहकारी संघों द्वारा दुग्ध प्रसंस्कृत एवं विपणित किया जाता है। विगत वर्षों में, सहकारी संस्थाओं द्वारा सृजित ब्राण्ड गुणवत्ता और मूल्य के पर्याय बन गए हैं। अमूल (गुजरात), विजया (आन्ध्र प्रदेश), वेरका (पंजाब), सरस (राजस्थान), नन्दिनी (कर्नाटक), मिल्मा (केरल) और गोकुल (कोल्हापुर) उन ब्रांडों में हैं, जिन्हें उपभोक्ताओं का विश्वास मिला है।

❐ चुनौतियां

यह व्यापक रूप से समझा जा सकता है कि सहकारी समितियां गरीबों के विकास के लिए एक विशिष्ट उपकरण हैं। परंतु वास्तव में सहकारी समितियां गरीब किसानों के विकास के लिए सबसे उपयुक्त संस्थान नहीं हैं। ऐसा इसलिए है, क्योंकि ये लोग सहकारी

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS

समितियों की व्यवस्था करने और वित्त की व्यवस्था करने के लिए सबसे कम सक्षम व्यक्ति हैं। आमतौर पर मध्यम और कुछ बड़े किसान ही बाजार में मौजूद कुछ कमियों को दूर करने के लिए सहकारी विकास की पहल करते हैं। हालांकि, एक बार जब सहकारी समितियों का प्रारंभिक चरण बीत चुका हो, तब गरीब किसान और छोटे अंशधारक इसमें शामिल हो सकते हैं और मान्यता प्राप्त कर लाभ उठा सकते हैं।

डेयरी, चीनी, हथकरघा, शहरी बैंकिंग और आवास जैसे गतिविधि के कुछ क्षेत्रों में सहकारिता ने बड़ी सफलता हासिल की है, लेकिन कई ऐसे बड़े क्षेत्र हैं, जहां सहकारिता बहुत ज्यादा उत्पादक नहीं है। देश में सहकारी समितियों की असफलता मुख्यरूप से निष्क्रिय सदस्यता और सहकारी समितियों के प्रबंधन में सदस्यों की सक्रिय भागीदारी की कमी के कारण है। सहकारी ऋण संस्थानों में बढ़ती अतिदेय राशि, आंतरिक संसाधनों के प्रयोग की कमी, सरकारी सहायता पर अत्यधिक निर्भरता, पेशेवर प्रबंधन की कमी, नौकरशाही नियंत्रण और राजनीतिक हस्तक्षेप के साथ प्रबंधन का हस्तक्षेप सहकारी समितियों के विकास में हानिकारक है।

ग्रामीण विकास के एक प्रमुख उपकरण के तौर पर स्वतंत्र और असल सहकारी समितियों की क्षमता से कई सरकारों, दाताओं एवं गैर सरकारी संगठनों से इनकी मान्यता तेजी से बढ़ी है। सहकारी समितियों के विकास के अलावा सहायक कानूनी एवं आर्थिक माहौल की सुविधा पैदा करने एवं हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए।

आकार IAS
Shaping Your Dreams

like Success Pana Chahte Hai . Com Education page on Facebook and youTube FOR HPSSC, HPPSC,HPU,HPBOSE,HPU DAILY UPDATE & PREVIOUS PAPAER & CURRENT AFFAIRS